द्रव्य सहायक—

श्रीसुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा.

श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजा
तथा सुपनोंकि आमदनीसे.

भावनगर—धी आनंद प्रीन्टींग प्रेसमें शाह गुलाबचंद
लल्लुभाइए छाप्युं.

इन पुस्तकोंकी आमदनीसे और भी
ज्ञानप्रचार बढाया जावेगा ।

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जा.

द्रव्य सहायक रू. २५०)

शाह हजारीमलजी कुंवरलालजी पारख.

मु० लोहावट—जाटावास (मारवाड).

प्रति १०००

वीर सं. २४५०   वि. सं. १९८०

धन्यवाद.

श्रीमान् रेखचंदजी साहिब,

चीफ सेक्रेटरी–

श्री जैन नवयुवक मित्रमण्डल—मु० लोहावट

आप ज्ञानके अच्छे प्रेमी और उत्साही हो। इस किताब के तीसरे भाग के लिये रु. २५०) ज्ञान दान कर पुस्तके श्रीसुखसागर ज्ञान प्रचारक सभा में सार्पण कर लाभ उठाया है इस वास्ते में आप को सहर्ष धन्यवाद देता हुं और सज्जनों को भी अपनी चल लक्ष्मी का ज्ञानदान कर लाभ लेना चाहिये। कारण शास्त्रकारोंने सर्व दानमें ज्ञानदान को ही सर्वोत्तम माना है–किमधिकम्।

भवदीय,

पृथ्वीराज चोपडा।

मेम्बर–श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल,

लोहावट–(मारवाड).

श्रीयक्षदेवसूरीश्वराय नमः

श्रीकल्पसूत्रजीके पानोंकी भक्ति के लिये रु. २८०)

—•—

शाह फालुरामजी अमरचंदजी बोथरा राजमवाला कि तर्फ से आया था इस किताबमें लगाया गया है. इस ज्ञान दानसे कीतना लाभ होगा वह अन्य सज्जनोंको विचार के अपनी चल लक्ष्मीको ज्ञानदान कर सफल बनाना चाहिये. किमधिकम् ।

आपका.

जोरावरमल वैद

मेनेजर.

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ऑफीस,

फलोधी.

श्रीमद् भगवतीजी सूत्र कि वाचना।

पूज्यपाद प्रातःस्मरणिय मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजसाहिब कि अनुग्रह कृपासे हमारे लोहावट जैसे ग्राममें भी श्रीमद् भगवतीजीसूत्र कि वाचना संवत् १९७९ का चैत्र वद ६ से प्रारंभ हुइथी जिस्के दरम्यान हमे बहुत लाभ हुवा है जैसे श्री भगवतीजीसूत्रका आद्योपान्त श्रवण कर ज्ञानपूजाका करना जिस्के द्रव्यसे।

- ५००० श्री द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका।
- ५००० श्री शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां हजार हजार प्रती एकही जिल्दमें बन्धाइ गइ है जिस्मे तीसरा भाग शा. हजारीमलजी कुंवरलालजी पारख कि तर्फसे।
- १००० श्री भावप्रकरण शा. जमनालालजी इन्द्रचन्दजी पारख कि तर्फसे।
- १००० श्री स्तवन संग्रह भाग ४ था शा आइदांनजी अगरचन्दजी पारख कि तर्फसे।

इनके सिवाय ज्ञानध्यान कंठस्थ करना तथा श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा और श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल कि स्थापना होनेमें अच्छा उपकार हुवा है।

अधिक हर्ष इस बातका है कि जीस उत्साहा से श्री भगवतीजी सूत्र प्रारंभ हुवाया उनसे ही बढते उत्साहासे श्री ज्ञानपंचमिको पूजा प्रभावना वरघोडाके साथ निर्विघ्नतासे समाप्त हुवा है हम इस सुअवसर कि वारवार अनुमोदन करते है अन्य सज्जनोंको भी अनुमोदन कर अपना जन्म पवित्र करना चाहिये किमधिकम्। भवदीय।

जमनालाल बोंथरा राजमवाला,
मेम्बर श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल
मु० लोहावट-मारवाड.

मुनि महाराज श्री रत्नविजयजी महाराज.

रत्न परिचय.

परम योगिराज प्रातःस्मरणीय अनेक सद्गुणालंकृत श्री श्री १००८ श्री श्री रत्नविजयजी महाराज साहिब !

आपश्रीका पवित्र जन्म कच्छ देश ओसवाल ज्ञाति में हुवा था. आप बालपणासे ही विद्यादेवीके परमोपासक थे. दश वर्षकि बाल्यावस्थामें ही आपने पिताश्रीके साथ संसार त्याग किया था. अठारा वर्ष स्थानकवासीमत में दीक्षा पाल सत्य मार्ग संशोधन कर— शास्त्रविशारद जैनाचार्य श्रीमद्विजयधर्मसूरीश्वरजी महाराजके पास जैन दीक्षा धारण कर संस्कृत प्राकृतका अभ्यास कर जैनागमोंका अव-लोकन कर आपश्रीने एक अच्छे गीतार्थोंकि पंक्तिको प्राप्त करी थी. आपश्रीने कच्छ, काठीयावाड, गुजरात, मालवा, मेवाड और मारवाडादि देशोंमें विहार कर अपनि अमृतमय देशनाका जनताको पान करवाते हुए अनेक भव्य जीवोंका उद्धार कीया था इतना ही नही किन्तु आबु गिरनारादि निवृत्तिके स्थानों में योगाभ्यास कर अनेक गइ हुइ चमत्कारी विद्यावों हांसल कर कइ आत्मावों पर उपकार कीया था।

आपका नि:स्पृह सरल शान्त स्वभाव होने से जगत के गच्छगच्छान्तर–मतमतान्तरके झगडे तो आपसे हजार हाथ दूरे ही रहते थे. जैसे आप ज्ञानमें उच्चकोटीके विद्वान थे वेसे ही कविता करने मे भी उच्चकोटीके कवि भी थे आपने अनेक स्तवनों, सज्झायों, चैत्यवन्दनों, स्तुतियों, कल्प रत्नाकरी टीका और विनति शतकादि रचके जैन समाजपर परमोपकार कीया था.

आपको निवृत्तिस्थान अधिक प्रसन्न था जो श्रीमदुपकेश गच्छाधिपति श्री रत्नप्रभसूरीश्वरजी महाराजने उपकेशपट्टन (ओशीयों) में ३८४००० राजपुतोंको प्रतिबोध दे जैन बनाया. प्रथम ही ओसवंस स्थापन कीया था. उन ओशीयों तीर्थपर आपश्रीने चतुर्मास कर अलभ्य लाभ प्राप्त कीया जैसे मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजीको ढुंढकफांस से बचाके संवेगी दीक्षा दे उपकेश गच्छका उद्धार करवाया था फीर दोनों मुनिवरोंने इस प्राचीन तीर्थके जीर्णोद्धारमें मदद कर वहापर जैन पाठशाला, बोर्डींग, श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान भंडार, जैन लायब्रेरी स्थापन करी थी और भी आपको ज्ञानका बडा ही प्रेम था. आपश्रीके उपदेश द्वारा फलोधी में श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला नामकि संस्था स्थापित हुइ थी. आपश्रीने अपने पवित्र जीवनमें शासन सेवा बहुत ही करी थी. केइ जगह जीर्णोद्धार पाठशालावोंके लिये उपदेशदीया था जिनोंकि

उज्वल कीर्त्ति आज दुनियों में उच्च पदको भोगव रही है. आपश्रीका जन्म सं. १९३२ में हुवा सं. १९४२ में स्थानकवासीयों में दीक्षा सं. १९६० में जैन दीक्षा और सं. १९७७ में आपका स्वर्गवास गुजरातके वापी ग्राममें हुवा है जहांपर आज भी जनताके स्मरणार्थ स्मारक मोजुद है. एसे निःस्पृही महात्मावोंकि समाजमें वहुत आवश्यक्ता है.

यह एक परम योगिराज महात्माका किंचित आपको परिचय कराके हम हमारी आत्माको अहोभाग्य समजते है. समय पा के आपश्रीका जीवन लिख आपलोगोंकि सेवा में भेजनेकि मेरी भावना है शासनदेव उसे शीघ्र पूर्ण करे.

I have the honour to be Sir,
Your most obedient slave
M. Rakhchand Parekh. S. Collieries.
Member Jain nava yuvak mitra mandal
LOHAWAT.

श्रीमदुपकेशगच्छीय-
मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी.
जन्म सं० १९३७ विजयदशमी.
स्थान० दीक्षा सं० १९६३
जैन दीक्षा सं० १९७२

ज्ञान परिचय।

पूज्यपाद प्रातःस्मरणिय शान्त्यादि अनेक गुणालंकृत श्री मान्मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब।

आपश्रीका जन्म मारवाड ओसवंस वैद मुत्ता ज्ञातीमे सं. १९३७ विजय दशमिकों हुवा था. वचपने से ही आपका ज्ञानपर वहुत प्रेम था स्वल्पावस्थामें ही आप संसार व्यवहार वाणिज्य व्यैपारमे अच्छे कुशल थे सं. १९५४ मागशर वद १० कों आपका विवाह हुवा था. देशाटन भी आपका वहुत हुवा था. विशाल कुटुम्ब मातापिता भाइ काका स्त्रि आदि कों त्याग कर २६ वर्ष कि युवान वयमें सं. १९६३ चेत वद ६ कों आपने स्थानकवासीयों में दीक्षा ली थी. दशागम और ३०० थोकडा कंठस्थ कर ३० सूत्रों की वाचना करी थी तपश्चर्या एकान्तर छठ छठ, मास क्षमण आदि करनेमे भी आप सूरवीर थे आपका व्याख्यान भी वडाही मधुर रोचक और असरकारी था. शास्त्र अवलोकन करने से ज्ञात हुवा कि यह मूर्त्ति उत्थापकों का पन्थ स्वकपोल कल्पीत समुत्सम पेदा हुवा है तत्पश्चात् सर्प कंचवे कि माफीक ढुंढको का त्याग कर आप श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहिब के पास ओशीयों तीर्थ पर दीक्षा ले गुरु आदेशसे उपकेश गच्छ स्वीकार कर प्राचीन गच्छका उद्धार

जैनाओं को अब मालुम होने लगी है कि साहित्य प्रकाश में हम लोग कितने पश्चाद्‌ी रहे हैं।

हमारे धर्म साहित्य लिखनेवाले और प्रकाशित करनेवाले पूर्वाचार्य हमारे पर बड़ा भारी उपकार कर गये हैं परन्तु हम बहुत पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय न्यायांभोनिधि जैनाचार्य श्रीमद्‌विजयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज का हम परमोपकार मानते हैं कि आपश्रीने ज्ञानभण्डारोंके नेताओं को बड़े ही और जोरसे उपदेश देकर जैसलमेर पाटण खंभात अमदाबाद आदिके ज्ञानभण्डारों में सड़ते हुये धर्म साहित्यका उद्धार करवाया था आपश्री को साहित्य प्रकाशित करवानेका इतना तो प्रेम था कि स्थान स्थान पर ज्ञानभण्डारों, लायब्रेरीयों, पुस्तक प्रचार मंडलों, संस्थाओं आदि स्थापीत करवाके ज्ञानप्रचार बढ़ाने में प्रेरणा करी थी। आपके उपदेशसे स्कूलों पाठशालाओं गुरुकुल बालाश्रमादि स्थापित होनेसे समाज में ज्ञान कि वृद्धि हुइ है। इतना ही नहीं बल्कि युरोप तक भी जैनधर्म साहित्यका प्रचार करने में आपश्रीने अच्छी सफलता प्राप्त करी थी उस धर्म साहित्य प्रचार कि बदौलत आज हमारी स्वल्प संख्या होने परभी सर्व धर्मों में उच्च स्थानको प्राप्त कीया है अच्छे अच्छे विद्वान लोगोंका मत है कि जैनधर्म एक उच्च कोटीका धर्म है।

साहित्य प्रचारके लिये धन्यवाद श्रीमती आगम धयाइ, जैन धर्म प्रसारक सभा-जैन आत्मानंद सभा भावनगर, श्रीयशोविजय जी ग्रन्थमाला भावनगर, श्री जैन श्वेताम्बर मंडल मेसाणा, देवचंद लालभाइ बम्बइ, अध्यात्म ज्ञान प्रकाश-बुद्धिसागर ग्रन्थमाला, श्री हेमचन्द्र ग्रन्थमाला, जैन सस्ता प्रकाश मंडल, जैन ग्रन्थमाला—यशोचन्द्र ग्रन्थमाला—यतीन्द्रप्रकाश कार्यालय—श्री रत्न प्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला, फलोधी, श्री जैन आत्मानन्द पुस्तक प्रचार मंडल आगरा—दिल्ही, श्यामलाल साहित्य ऑफीस, जैन साहित्य सभा

धन—पुना. श्री आगमोदय समिति अन्यभी छोटी वडी सभायोंने साहित्य प्रकाशित करने में अच्छी सफलता प्राप्त करी है—मनुष्य मात्रका फर्ज है कि अपनि २ यथाशक्ति तन मन धनसे धर्म साहित्य प्रचारमें अवश्य मदद देना चाहिये।

साहित्यप्रेमी परम् योगिराज मुनि श्री रत्नविजयजी महाराज साहिब के सदुपदेशसे संवत् १९७३ का आसाड शुद ६ के रोज मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज द्वारा फलोधी नगरके उत्साही श्रावक वर्ग कि प्रेरणासे श्रीरत्नप्रभाकार ज्ञान पुष्पमाला नामकि संस्था स्थापित की गइ थी. संस्थाका खास उद्देश छोटे छोटे ट्रेक्टद्वारा जनता में जैनधर्म साहित्य प्रसिद्ध करनेका रखा गया था.

हरेक स्थानपर लम्बी चोडी बातों बनानेवाले या पर उपदेश देनेवाले बहुत मीलते है किन्तु जीस जगह रूपैये का नाम आता है तब कितनेक लोग धनाढ्य होनेपर भी मायाके मजुर उन्नतिके मेदान से पीच्छे हट जाते है परन्तु मुनिश्रीके एक ही दिनके उपदेशसे फलोधी श्री संघने ज्ञानवृद्धिके लिये करीबन् २०००) का चन्दाकर श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला में पुस्तके छपानेके लिये जमा करवाके इस संस्थाकि नीवको मजबुत बनादि थी. मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहबका १९७३ का चतुर्मासा फलोधी में हुवा आपश्रीने एक ही चतुर्मासा में ११ पुष्प प्रकाशित करवा दीया। चतुर्मासके बाद आपश्रीका पधारना ओसीयातीर्थ को कि श्री रत्नप्रभसूरीजी महाराजने उपलदे राजा आदि। ३८४०००
राजपुतोंको प्रथमही ओसवाल बनाके श्रीवीरप्रभुके बिंबकी प्रतिष्टा करवाइथी उन महापुरुषोंके स्मरणार्थ दुसरी शाखा रूप एक संस्था ओशीयों तीर्थपर श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाल स्थापित करी. जिसका काम मुनिम चुनिलालभाइके सुप्रत किया गया था. चुनिलालभाइने ओशीयो तीर्थ तथा इन संस्थाकि अच्छी सेवा करी थी.

कीतायोंके ज़रिये तीर्थकी प्रसिद्धि और आबादि भी अच्छी हुई थी. चुन्निलालभाइ स्वर्गवास होनेके बाद में पुस्तकोंकि व्यवस्था ठीक न रहनेसे नमुनाके तौरपर पुस्तकों ओशीयों रखके शेष सब पुस्तकों फलोधी मगवा लि गइ थी अब इन सैस्याका कार्य बहुत ही उत्साह से चलता है स्वल्प ही समयमें ७५ पुष्पकि करीबन १५३००० पुस्तके छप चुकी है जिसमें प्रतिमाछत्तीसी, गयवरविलास, दानछत्तीसी, अनुकम्पाछत्तीसी, प्रश्नमाला, चर्चाका पब्लिक नोटीस, लिंगनिर्णय, सिद्धप्रतिमा, मुक्तावली, बत्तीमसूत्रदर्पण, डंकेपर चोट, आगमनिर्णय और व्यवहार चूलिकाकि समालोचना यह बारहा पुस्तके तो मूर्तिउत्थापक ढुंढीये तेरेपन्थीयोंके बारे में लिखी गइ है जिस्में सप्रमाण मूर्त्ति और दया दानका प्रतिपादन किया गया है और स्तवन संग्रह भाग १-२-३-४, दादासाहिब कि पूजा, देवगुरु वन्दनमाला, जैन नियमावल।, चौरासी आशातना, चैत्यवन्दनादि, जिनस्तुति, सुबोधनियमावली, प्रभु पूजा, जैन दीक्षा, तीर्थयात्रास्तवन, आनन्दघन चौबीसी, सज्झाय, गहुंलीयों, राइदेवसि प्रतिक्रमण, उपकेशगच्छ पट्टावली इन १८ पुस्तकों मे देवगुरुकी भक्तिसाधक स्तवन, स्तुतियों, चैत्यवंदनों आदि है। व्याख्याविलास भाग १-२-३-४, मेझरनामों, तीन निर्नामा लैम्बोंका उत्तर, ओशीयों तीर्थके ज्ञान भंडारकि लीष्ट, अमे साधु शा माटे थया, विनती शतक, कक्काबत्तीसी, वर्णमाला, तीन चतुर्मासोंका दिग्दर्शन और हितशिक्षा यह १३ पुस्तकों में वस्तुस्वरूप निरूपण या उपदेशका विषय है। दशवैकालिकसूत्र, सुखविपाकसूत्र और नन्दीसूत्र एवं तीन सूत्रोंका मूल पाठ है॥ शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११-१२ १३-१४-१५-१६-१७-१८-१९-२०-२१-२२-२३-२४-२५ ॥ पैंतीस बोल, द्रव्यानुयोग प्रथम प्रवेशिका, गुणानुरागकुलक और सूचीपत्र इन २९ पुस्तकों मे श्री भगवती सूत्र, पन्नवणाजी सूत्र. जीवाभिगमजी

सूत्र, समवायांगजी सूत्र, अनुयोगद्वार सूत्र, नन्दीजी सूत्र स्थानांगजी सूत्र, जम्बुद्विपपन्नति सूत्र, आचारांग सूत्र, सूत्र कृतांगजी सूत्र, उपासकदशांग सूत्र, अन्तगडदशांग सूत्र, अनुत्तरोववाइजी सूत्र, निरियावलकाजी सूत्र, कप्पवडंसियाजी सूत्र, पुप्फीयाजी सूत्र, पुप्फचूलीयाजी सूत्र, विन्हो दशांगजी सूत्र, वृहत्कल्प सूत्र, दशाश्रुतस्कंध सूत्र, व्यवहार सूत्र, निशिथ सूत्र और कर्मग्रन्थादि प्रकरणों से खास द्रव्यानुयोगका सूक्ष्म ज्ञानकों सुगमतारूप हिन्दी भाषामें जो कि सामान्य बुद्धिवाला भी सुखपूर्वक समज के लाभ सके और इन भागोंमें बारहा सूत्रोंका हिन्दी भाषान्तर भी करवाया गया है शीघ्रबोधके प्रथम भाग से पचवीसवां भाग तकके लिये यहां विशेष विवेचन करनेकि आवश्यक्ता नहीं है. उन भागोंकि महत्वता आद्योपान्त पढने से ही हो सक्ती है इतना तो लोगोपयोगी हुवा है कि स्वल्प ही समय में उन भागोंकि नकलो खलासे हो गइ थी और ज्यादा मांगणी होने से द्वितीयावृत्ति छपाइ गइ थी वह भी थोडा ही दीनों में खलास हो जानेसे भी मांगणी उपर कि उपर आ रही है। अतेव उन भागोंको और भी छपानेकि आवश्यक्ता होनेसे पुष्प २६-२७-२८-२९-३० को इस संस्था द्वारा प्रगट कीया जाता है. उन शीघ्रबोधके भागोंकि जेसी जैन समाजमें आदर सत्कारके साथ आवश्यक्ता है उसनी ही स्थानकवासी और तेरहापन्थी लोगोंमें आवश्यक्ता दिखाइ दे रही है।

इस संस्था में जीतना ज्ञानकि सुगमता है इतनी ही उदारता है शरू से पुस्तकोंकि लागी किंमत से भी बहुत कम किंमत रखी गइ थी. जिस्मे भी साधु साध्वीयों, ज्ञानभंडार, लायब्रेरी आदि संस्थाओंको तो भेट हि भेजी जाती थी. जब ४५ पुष्प छप चुके थे वहांतक भेट से ही भेजे जाते थे बादमें कार्यकर्ताओने सोचा कि पुस्तकोंका अनादर होता है. आशातना बढती है. इस वास्ते लागी किंमत रख देना ठीक है कारण गृहस्थोंके घर से रूपैया

आठ आना सहज ही में निकल आवेंगे और यहां रुपैये जमा होंगे उनों से और भी ज्ञान वृद्धि होगी. सिर्फ बारहा सूत्रोंके भाषान्तरकि किंमत कुच्छ अधिक रखी गइ है इस्का कारण यह है कि इसमें च्यार छेदसूत्रोंका भाषान्तर भी साथ में है जो कि जिनोंको खास आवश्यक्ता होगा वह ही मंगावेगा। तथापि महेनत देखतों किंमत ज्यादा नहीं है शेष कितावोंकी किंमत हमारे उद्देश माफीक ही रखी गइ है. पाठकगण किंमत तर्फ ध्यान न दें किन्तु ज्ञान तर्फ दे कि जिन सूत्रोंका दर्शन होना भी दुर्लभ थे वह आज आपके करकमलो में मोजुद है इसका ही अनुमोदन करे। अस्तु।

वि. सवत् १९७९ का फागण वद २ के रोज श्रीमान्मुनि महाराजश्री श्रीहरिसागरजी तथा श्रीमान् ज्ञानसुन्दरजी महाराज ठाणे ४ का शुभागमन लोहावट ग्राम में हुवा. श्रोतागणकी दीर्घ काल से अभिलाषा थी कि मुनि श्रीज्ञानसुन्दरजी महाराज पधारे तों आपश्रीके मुखाविंद से श्री भगवतीजी सूत्र सुने. तीन वर्षों से विनती करते करते आप श्रीमानोंका पधारना होनेपर यहांके श्रावकोने आग्रे से अर्ज करनेपर परम दयालु मुनि श्रीने हमारी अर्ज स्वीकार कर मीती चैत वद ६ के रोज श्री भगवतीजी सूत्र सुबे व्याख्यानमें फरमाना प्रारंभ किया जिस्का महोत्सव वरघोडा रात्रीजागरणादि शा रत्नचंदजी छोगमलजी पारख कि तर्फसे हुवा था इस शुभ अवसर पर फलोधीसे श्रोजैन नवयुवक प्रेम मंडल तथा अन्यभी श्रावकवर्ग पधारे थे वरघोडा का दर्श-अंग्रेजीबाजा ग्यानमंडलीयों ओर सरकारी कर्मचरियों पोलीस आदिसे बडा ही प्रभावशाली दीखाइ देते थे श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजामें अठारा सोनामोहरों मीलाके करीबन् रू १०००) की आवादानी हुवथी जिस्का श्री संघसे यह ठेराव हुवा कि इन आवादानीसे तात्व ज्ञानमय पुस्तकें छपा देना चाहिये।

इस सुअवसरपर श्री सुखसागर ज्ञान प्रचारक नामकि संस्थाकि भी स्थापना हुइ थी संस्थाका खास उदेश यह रखा गया था कि जैनशासनके सुख समुद्रमें ज्ञानरूपी अगम्य जल भरा हुवा है उन ज्ञानामृतका आस्वादन जनताको यथेष्ठ बिंदु द्वारा करवा देना चाहिये. इस उदेशका प्रारंभमें श्री द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका प्रथम बिन्दु तथा श्री भाव प्रकरण दूसरा बिन्दु आप लोगोंकी सेवामें पहुंचा दिया था।

यह तीसरा बिन्दु जो शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ जो प्रथम और दुसरी आवृति श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला—फलोधीसे छप चुकीथी परन्तु वह सब नकले खलास हो जानेपरभी मागणी अधिक और अति लाभ जानके नइ आवृति जोकि पहले कि निस्पत् इस्में बहुत सुधारा करवाया गया है शीघ्र बोध भाग पहले में धर्मके सन्मुख होनेवालेके गुण. मार्गानुसारीके ३५ बोल व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल. पैंतीस बोल लघुदंडक महादंडक विरहद्वार रूपी अरूपी उपयोग चौदाबोल बीसबोल तेवीस बोल चालीस बोल १०८ बोल और छे आरों का इतिहासका वर्णन है दूसरा भागमें विस्तार पूर्वक नौतत्व पच्चीस क्रियाका विवरण है। तीसरा भागमें नय निक्षेपा स्याद्वाद षट्द्रव्य सप्तभंगी अष्टपक्ष द्रव्यगुणपर्याय आदि जो जैनागमकि खास कुंजीयों कहलाती है भाषा आहार संज्ञायोनि और अल्पा बहुत्व आदि है। चोथा भागमें मुनिमहाराजोंके मार्ग जैसे अष्ट प्रवचन, गौचरीके दोष, मुनिके उपकरण, साधु समाचारी आदि है॥ पांचवें भागमें कर्मो कि दुर्गम्य विषयभी बहुत सुगमतासे लिखी गइ है इन पांचों भागकि विषयानुक्रमणिका देखनेसे आपको रोशन हो जायगा कि कितने महत्त्वपाने विषय इन भागोंमें प्रकाशित करवाये गये है।

अब हम हमारे पाठकोंका ध्यान इस तर्फ आकर्षित करना चाहते है कि जितने छद्मस्थ जीव है उन सबकि एकरूपी नहीं

होती है याने अलग अलग रूची होती है इतनाही नही बल्के एक मनुष्यकि भी हर समय एक रूची नही होती है जिस जिस समय जो जो रूची होती है तदानुसार वह कार्य किया करता है। अगर वह कार्य परमार्थके लिये कीसी रूपमें कीसी व्यक्तिके लीये उपकारी होतो उनका अनुमोदन करना और उनसे लाभ उठाना सज्जन पुरुषोंका कर्तव्य है।

यद्यपि मुनिश्री कि रूची जैनागमोंपर अधिक है और जनताको सुगमता पूर्वक जैनागमोंका अवलोकन करवा देनेके इरादासे आपने यह प्रवृति स्वीकार कर जनसमाज पर बड़ा भारी उपकार कीया है इस वास्ते आपका ज्ञानदानकि उदार वृत्तिको हम सहर्ष यदाके स्वीकार करते है और साथमें अनुरोध करते है कि आप चीरकाल तक इस वीर शासनकी सेवा करते हुवे हमारे ४५ आगमोंको ही इसी हिन्दी भाषाद्वारा प्रगट करे तांके हमारे जेसे लोगोंको मालुम होकि हमारे घरके अन्दर यह अमूल्य रत्न भरे हुवे है।

अन्तमें हमारे वाचक वृन्दसे हम नम्रता पूर्वक यह निवेदन करते है कि आप एक दफे शीघ्र बोध भाग १ से २५ तक मंगवाके क्रमशः पढीये कारण इन भागोंकी शैली एसी रखी गइ है कि क्रमशः पढनेसे हरेक विषय ठीक तौरपर समजमें आजावेगें। ग्रन्थकी सार्थकता तब ही हो सक्ती है कि ग्रन्थ आद्योपान्त पढे और ग्रन्थकर्त्ताका अभिप्रायको ठीक तोरपर समजे। बस हम इतना ही कहके इस प्रस्तावनाको यहां ही समाप्त कर देते है। सुज्ञेषु किं बहुना।

१९८० का मीती कार्तिक शुद ५ ज्ञानपंचमि.

भवदीय,
छोगमल कोचर.
प्रेसिडन्ट श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल.
मु० लोहावट—मारवाड.

खुश खबर लिजिये.

सूत्रश्री भगवतीजी, प्रज्ञापनाजी, जीवाभिगमजी, समवायांगजी, अनुयोगद्वारजी, दशवैकालिकजी आदि से उद्धरीत किये हुवे बालावबोध हिन्दी भाषा में यह द्वितीयावृत्ति अच्छा सुधारा और सुलासाके साथ बढीये कागद, अच्छा टैप, सुन्दर कपडेकि पक्क हो.

अल्प में यह ग्रन्थ एक द्रव्यानुयोगका खजाना रूप तैयार करवाया गया है. किमत मात्र रु. १॥

जल्दी किजिये खलास हो जानेपर मीलना असंभव है.

शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां

जिस्की संक्षिप्त

विषयानुक्रमणिका.

नम्बर.	विषय.	पृष्ठ.	नम्बर.	विषय.	पृष्ठ.
	प्रथम भाग.		४	पैंतीस बोलोंका थोकडा	११
१	धर्मेश होनेके १५ गुन	१	५	लघु दंडक बालावबोध	२२
२	मार्गानुसारीके ३५ बोल	२	६	चौवीस दंडकके प्रश्नोत्तर	३८
३	व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल	७	७	महादंडक ९८ बोल	३९
			८	सिद्धद्वार	४२

संख्या.	विषय.	पृष्ठ.
९	रूपी अरूपीके १०१ बोल	४५
१०	दिशानुसार दिशाधिकार	४६
११	छै कायाके छै द्वार	४९
१२	उपयोगाधिकार	५०
१३	ईर्योपथके १४ बोल	५१
१४	तीर्थंकर नामके २० बोल	५२
१५	अरूपी मोक्ष जानेके २३ बोल	५४
१६	परम कल्याणके ४० बोल	५५
१७	सिद्धोंकि अल्पाबहुत्व	५९
१८	छै आरोंका अधिकार	६०
१९	पहेला आराधिकार	६१
२०	दूसरा आराधिकार	६३
२१	तीसरा आराधिकार	६४
२२	चौथा आराधिकार	६८
२३	पांचमाराधिकार	६९
२४	छट्ठाराधिकार	७४
२५	उत्सर्पिणी	

शीघ्रबोध भाग २ जो.

संख्या.	विषय.	पृष्ठ.
२६	नवतत्त्वके लक्षण	७८
२७	जीवतत्त्वके लक्षण	७९
२८	सुवर्णादिके दृष्टांत	८०
२९	जीवतत्त्वपर द्रव्यादि च्यार	८०
३०	जीवतत्त्वपर च्यार निक्षेप	८०
३१	जीवतत्त्वपर सात नय	८०
३२	जीवोंके सामान्य भेद	८०
३३	सिद्धोंके जीवोंके भेद	८१
३४	संसारी जीवोंके भेद	८१
३५	एकेन्द्रियके भेद	८३
३६	प्रत्येक वनस्पति १२ प्रकारकी	८४
३७	साधारण वन० के भेद	८८
३८	वनस्पतिके लक्षण	८९
३९	बेइन्द्रियादिके भेद	९०
४०	पांचेन्द्रियके च्यार भेद	९०
४१	मनुष्यके ३०३ भेदका वर्णन	९२
४२	आर्यक्षेत्र २५॥ का वर्णन	९५
४३	दश प्रकारकि रूची	९९
४४	देवतोंके १९८ भेद	९७
४५	अजीवतत्त्वके लक्षण	१००
४६	अरूपी अजीवके ३० भेद	१०१
४७	रूपी अजीवके ५३० भेद	१०२
४८	पुन्यतत्त्वके लक्षण	१०३
४९	पुन्य नौ प्रकारसे बन्धते है	१०४
५०	पुन्य ४२ प्रकारसे भोगवे	१०४
५१	पापतत्त्वके लक्षण	१०५
५२	पाप १८ प्रकारसे बन्धे	१०५
५३	पाप ८२ प्रकारसे भोगवे	१०६
५४	आश्रवके लक्षण	१०७
५५	आश्रवके ४२ भेद	१०७
५६	क्रिया २५ अर्थ संयुक्त	१०८
५७	संवरतत्त्वके लक्षण	१०९
५८	संवरके ५७ भेद	१०९
५९	बारह भावना	११०
६०	निर्जरातत्त्वके लक्षण	१११

संख्या.	विषय.	पृष्ठ.
६१	अनशन तप	११२
६२	उणोदरी तप	११४
६३	भिक्षाचारी तप	११५
६४	रसत्याग तप	११६
६५	काय क्लेश तप	११७
६६	प्रतिसंलेखना तप	११८
६७	प्रायश्चित्त तपके ५० भेद	११८
६८	विनय तपके १३४ भेद	११९
६९	वैयावच तपके १० भेद	१२१
७०	स्वाध्याय तप	१२२
७१	वाचनाविधि प्रश्नादि	१२२
७२	अस्वाध्याय ३४ प्रकारके	१२४
७३	ध्यानके ४८ भेद	१२५
७४	विउत्सर्ग तप	१२८
७५	बंधतत्वके लक्षण	१२८
७६	आठ कर्मोंके बंध कारण ८५	
७७	मोक्षतत्वके लक्षण	१२९
७८	सिद्धोंकी अल्पा० ३३ बोल	१३०
७९	क्रियाधिकार	१३१
८०	सचित्त क्रियाओं	१३४
८१	क्रिया कौनसे करे	१३४
८२	क्रिया करेसो कौनसे कर्म	१३४
८३	कर्म करनेसे निर्गमि क्रिया	१३५
८४	एक जीवको एक जीवकि क्रिया	१३६

संख्या.	विषय	पृष्ठ.
८५	कायादि क्रिय	
८६	अठ्ठाजीया क्रिय	
८७	क्रियाकि नियमा जना	
८८	आरंभियादि क्रि	
८९	क्रियाका भांगा	
९०	प्राणातिपातादि क्रि	
९१	क्रिया लागनेका का	
९२	अल्पाबहुत्व	
९३	शरीरोत्पन्न मे क्रिया	
९४	पांच क्रिया लगना	
९५	नौ जीवोंकी क्रिया ला	
९६	मृगादि मारनेसे क्रिय	
९७	अग्नि लगानेसे क्रिया	
९८	झाल रचनेसे क्रिया	
९९	क्रियाका लेना देना	
१००	धनुष्य आनेसे	
१०१	ऋषि हत्या करनेसे क्रिया	
१०२	अन्तक्रियाधिकार	१
१०३	समुद्घातसे क्रिया	१४
१०४	मुनिदोको क्रियाओ	१४
१०५	तेरहा प्रकारकि क्रिया	१४
१०६	श्रावकों क्रिया	१४८
१०७	पच्चीस प्रकारकि क्रिया	१४९

शीघ्रबोध भाग तीजो.

१३७ १०८	मर्याधिकार	१५१

संख्या	विषय.	पृष्ठ.	संख्या.	विषय.	पृष्ठ.
१०९	सात अंधे और हस्तीका दृष्टान्त	१५१	१३७	प्रत्येक प्रमाण	१७६
११०	नयका लक्षण	१५३	१३८	आगम प्रमाण	१७६
१११	नैगमनयका लक्षण	१५४	१३९	अनुमान प्रमाण	१७६
११२	संग्रह नय लक्षण	१५५	१४०	औपमा प्रमाण	१७८
११३	व्यवहारनय	१५६	१४१	सामान्य विशेष	१७९
११४	ऋजुसूत्रनय	१५७	१४२	गुण और गुणी	१८०
११५	साहुकारका दृष्टान्त	१५७	१४३	ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी	१८०
११६	शब्द समभीरूढ-एवंभूत	१५८	१४४	उपन्ने या विघ्ने वा धुवेया	१८०
११७	वसतीका दृष्टान्त	१५९	१४५	अव्यय आधार	१८१
११८	पायलीका दृष्टान्त	१६०	१४६	आविर्भाव तिरोभाव	१८१
११९	प्रदेशाका दृष्टान्त	१६१	१४७	गौणता मौख्यता	१८१
१२०	जीवपरसातनय	१६२	१४८	उत्सर्गोपवाद	१८२
१२१	सामायिकपर सात नय	१६३	१४९	आत्मातीन	१८३
१२२	धर्मपर सात नय	१६३	१५०	ध्यान च्यार	१८३
१२३	वांणपर सात नय	१६३	१५१	अनुयोग च्यार	१८४
१२४	राजापर सात नय	१६४	१५२	जागरण तीन	१८४
१२५	निक्षेपाधिकार	१६४	१५३	व्याख्या नौप्रकार	१८४
१२६	नामनिक्षेपा	१६५	१५४	अष्ट पक्ष	१८५
१२७	स्थापना निक्षेपा	१६५	१५५	सप्तभंगी	१८५
१२८	द्रव्यनिक्षेपा	१६७	१५६	निगोद स्वरूप	१८७
१२९	भावनिक्षेपा	१७०	१५७	षट्द्रव्य अधिकार	१९०
१३०	द्रव्यगुणपर्याय	१७२	१५८	षट्द्रव्यकि आदि	१९०
१३१	द्रव्य क्षेत्रकाल भाव	१७२	१५९	षट्द्रव्यका संस्थान	१९०
१३२	द्रव्य और भाव	१७३	१६०	षट्द्रव्यमें सामान्य गुण	१९१
१३३	कारण कार्य	१७३	१६१	षट्द्रव्यमें विशेष स्वभाव	१९२
१३४	निश्चय व्यवहार	१७४	१६२	षट्द्रव्यके क्षेत्र	१९२
१३५	उपादान निमित्त	१७५	१६३	षट्द्रव्यके काल	१९३
१३६	प्रमाण च्यार प्रकारके	१७५			

संख्या. विषय. पृष्ठ.

१६४ षट्द्रव्यके भाव १९४
१६५ षट्द्रव्यमें सा० वि १९४
१६६ षट्द्रव्यमें निश्चय व्य० १९५
१६७ षट्द्रव्यके सात नय १९५
१६८ षट्द्रव्यकेच्यार निक्षेपा १९५
१६९ षट्द्रव्यके गुण पर्याय १९६
१७० षटद्रव्यके साधारणगुण १९६
१७१ षटद्रव्यके साधर्मीपणा १९६
१७२ षटद्रव्यमें प्रणामद्वार १९७
१७३ षटद्रव्यमें जीवद्वार ,,
१७४ षटद्रव्यमें मूर्त्तिद्वार ,,
१७५ षटद्रव्यमें एक अनेकद्वार ,,
१७६ षटद्रव्यमें क्षेत्रक्षेत्री ,,
१७७ षटद्रव्यमें सक्रियद्वार १९८
१७८ षटद्रव्यमें नित्यानित्य ,,
१७९ षटद्रव्यमें कारणद्वार ,,
१८० षटद्रव्यमें कर्ताद्वार ,,
१८१ षटद्रव्यमें प्रवेशद्वार ,,
१८२ षटद्रव्यके मध्य प्रदेशकि पृच्छा १९९
१८३ षटद्रव्य स्पर्शना २००
१८४ षटद्रव्यके प्रदेश स्पर्शना २००
१८५ षटद्रव्यकी अल्पाबहुत्व २०१
१८६ भाषाधिकार आदि २०१
१८७ भाषाकि उत्पति २०२
१८८ भाषाके पुद्गलोंके २२९ बोल २०३
१८९ सत्यादि च्यार भाषा २०४
१९० भाषाके पु० भेदाना २०५
१९१ भाषाके कारण २०७
१९२ भाषके वचन १६ प्रकारके २०७
१९३ सत्यभाषाके १० भेद २०८
१९४ असत्यभाषाके १० भेद २०८
१९५ व्यवहार भाषाके १२ भेद २१०
१९६ मिश्रभाषाके १० भेद २१०
१९७ अल्पाबहुत्व भाषा क० २११
१९८ आहाराधिकार २११
१९९ कीतने कालसे आहारले २१२
२०० आहारके पु० २८८ प्रकारके २१३
२०१ आहार पु० के बोचार २१४
२०२ श्वासोश्वासधिकार २१६
२०३ संज्ञा उत्पति अल्पा० २१७
२०४ योनि १२ प्रकारकी २१८
२०५ आरंभादि २२१
२०६ अल्पाबहुत्व १६ बोल २२२
२०७ अल्पा बहुत्व १४ बोल २२१
२०८ अल्पाबहुत्व ८-४-४ २२३
२०९ अल्पाबहुत्व २३ १८ ३४ २२६

शीघ्रबोध भाग ४ थो.

२११ अष्ट प्रवचन २२७
२१२ इर्यासमिति २२८

संख्या.	विषय.	पृष्ठ.
२१३	भाषासमिति	२२८
२१४	एषणासमिति	२२८
२१५	गोचरीके ४२ दोष	२२९
२१६	गोचरीके ६४ दोष कुल १०६ दोष.	२३३
२१७	ग्रास दोष १२ प्रकारका	२३८
२१८	चौथी समिति	२३९
२१९	मुनियोंके १४ उपकरण महेनु	२३९
२२०	प्रतिलेखन २५ प्रकारकी	२४०
२२१	प्रतिलेखनके ८ भांगा	२४२
२२२	पांचवी समिति	२४२
२२३	दश बोल परिठवनेका	२४२
२२४	तीनगुप्ति	२४३
२२५	पचीस मल्लाके ३३ बोलोंके अर्थ	२४४
२२६	पच्चीसमे दश बोल	२४४
२२७	श्राद्ध प्रतिमा	२४६
२२८	श्रमण प्रतिमा	२४६
२२९	तेरहमे बीस बोलका अर्थ असमाधि स्थान.	२४६
२३०	इक्कीस सबला दोष	२४८
२३१	बावीस परिसह	२४८
२३२	तेवीसमें गुनतीसबोल	२४८
२३३	महा मोहनिके ३० स्थान	२५१
२३४	सिद्धोंके ३१ गुण	२५१
२३५	योगसंग्रह बत्तीस	२५२
२३६	गुरुके ३३ आशातना	२५३

संख्या.	विषय	पृष्ठ
२३७	देव अतिशय ३४	२५४
२३८	देव वाणी ३५ गुण	२५४
२३९	उत्तराध्ययनके ३६ अध्ययन	२५५
२४०	छे निग्रन्थोंके ३६ द्वार	२५५
२४१	पांच संयतिके ३६ द्वार	२६६
२४२	अनाचार ५२	२७६
२४३	संयमतरुके १७८२ तणावा	२७९
२४४	आराधना तीन प्रकार	२८१
२४५	साधु समाचारी १०	२८४
२४६	मुनि दिनकृत्य	२८५
२४७	षडावश्यक	२८९
२४८	साधु रात्री कृत्य	२९०
२४९	पौरसी पोणपोरसीका मान	२९०

शीघ्रबोध भाग ४ थां.

संख्या.	विषय	पृष्ठ
२५०	जड चैतन्यका संबन्ध	२९३
२५१	कर्म क्या वस्तु है !	२९४
२५२	आठ कर्मोंकि १५८ उत्तर प्रकृति	२९६
२५३	आठ कर्मोंके बन्ध कारण	३०९
२५४	सर्वघाती देश घाती प्र०	३१६
२५५	विपाक उदय प्र०	३१७
२५६	परावर्तना परावर्तन प्र.	३१८
२५७	चौदा गुणस्थान पर बन्ध	३१९

नम्बर.	विष.	पृ.	नम्बर.	विष.	पृ.
२५८	चौदा गुण॰ पर उदय उदिरणा प्रकृति	३२२		यह आयुष्य कहांका बन्धे यह भव्याभव्य होते हैं	३७६
२५९	चौदा गु॰ पर सत्ता प्रकृति	३२४	२७७	समौसरण सपान्तर	३७०
२६०	अवाधाकालाधिकार	३२७	२७८	छै लेश्या	३७१
२६१	कर्मविचार	३३४	२७९	लेश्याका वर्ण	३७१
२६२	कर्म बान्धतो बान्धे	३३६	२८०	लेश्याका गन्ध	३७२
२६३	कर्म बान्धतो वेदे	३४०	२८१	लेश्याका रस	३७२
२६४	कर्म वेदतो बान्धे	३४१	२८२	लेश्याका स्पर्श	३७२
२६५	कर्म वेदतो वेदे	३४५	२८३	लेश्या परिणाम	३७२
२६६	५० बोलोंकी बन्धी	३४६	२८४	कृष्ण लेश्याका लक्षण	३७३
२६७	इर्यावहि कर्म बन्ध	३४८	२८५	निल लेश्याका लक्षण	३७३
२६८	सम्प्राय कर्म बन्ध	३५३	२८६	कापोत लेश्याका लक्षण	३७३
२६९	४७ बोलोंकी बन्धी	३५४	२८७	तेजस लेश्याका लक्षण	३७३
२७०	प्रत्येक दंडकपर बन्धी के बोल	३५५	२८८	पद्म लेश्याका लक्षण	३७३
२७१	प्रत्येक बोलोंपर बन्धी के भांगे	३५६	२८९	शुक्ल लेश्याका लक्षण	३७४
२७२	अनंतरोववन्नगादि उद्देशा	३६१	२९०	लेश्याका स्थान	३७४
२७३	पापकर्म करतें कहां भोगवे	३६४	२९१	लेश्याकी स्थिति	३७४
२७४	पापकर्मके १६ भांगा	३६६	२९२	लेश्याकी गति	३७५
२७५	समौसरणाधिकार	३३७	२९३	लेश्याका चवन	३७६
२७६	प्रत्येक दंडकमें बोल और बोलोंमें समौसरण		२९४	संचिठण काल	३७६
			२९५	सून्य काल	३७७
			२९६	असून्य काल	३७७
			२९७	मिश्र काल	३७७
			२९८	संचिट्ठन	३७८
			२९९	अल्पाबहुत्व	३७८
			३००	बन्धकाल	३७८
			३०१	बन्धके २६ बोल.	३७८

(४५) कर्मप्रकृतिका उदय ,, ,, ,,
(४६) कर्मप्रकृतिकि सत्ता ,, ,, ,,
(४७) अबाधाकालाधिकार श्री पन्नवणाजी सूत्रपद २१
(४८) कर्म विचार श्री भगवतीजी सूत्र श. ८ उ. १०
(४९) कर्मबान्धतो बान्धे श्री पन्नवणाजी सूत्रपद २१
(५०) कर्म बान्धतो वेदे ,, ,, ,, पद २४
(५१) कर्म वेदतो बान्धे ,, ,, , पद २५
(५२) कर्म वेदतो वेदे ,, ,, ,, पद २६
(५३) पचास बोलोंकी बन्धी श्री भगवतीजी श. ६ उ. ३
(५४) इर्यावहि संप्रायकर्म श्री भगवतीजी श. ८ उ. ८
(५५) ४७ बोलोंकि बन्धी ,, ,, ,, २६ उ. १
(५६) ४७ बोलोंकि अर्णतरादि ,, ,, ,, २६ उ. २
(५७) करीसु शतक ,, , ,, २७-११
(५८) ४७ बोलोपर आठ भांगा ,, ,, ,, २८-११
(५९) सम संगवनादि ,, ,, ,, २९-११
(६०) समोसरणाधिकार ,, ,, ,, ३०-११
(६१) लेश्याके ११ द्वार श्रीउत्तराध्ययनजी अ० ३४
(६२) संचिट्ठन काल श्रीभगवतीजी श० १ उ० २
(६३) बन्धकाल बोल ३१ श्रीकर्मग्रंथ चौथे

पता— श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला.

मु० फलोधी—(मारवाड.)

श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा.

मु० लोहावट—(मारवाड.)

शुद्धिपत्र.

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
२९	८	दा	दो
२९	२०	असन्ती	असंज्ञी
३३	१	सागरोप	पल्योपम
३८	१७	१० भु०	१० औदारीक
३८	१९	१३ वैक्रय	१३ देवता
७८	११	नवतायका	नवतावमें
८१	१	सिद्धि	सिद्धों
८२	२	परस्पर	परम्परा
८२	६	तीयर्च	तीर्यंच
८४	१७	समथ	समर्थ
८४	२०	स्याते	स्याते जीव
८६	८	मलता	मालती
१०७	२०	,,	तेइन्द्रिय जाति
१२४	७	०	कटक८-१२-१६ पेहर
१२६	१९	कासी	कीसका
१३५	२६	अठा	अठारा
१४१	६	यंत्रमे । ०	१
१४१	७	यंत्रमे । ०	३
१४१	९	५७२	९७२
१४२	१४	तीर्यंध	तीर्यंच
१५६	३	संग्रल	संग्रह
१७३	१	रहात	रहित
१७७	११	ग्रुंद	सुक

१८५	२	पर्याय	गुण
२३५	१४	जास	जिम
२४०	२	रय	रक्षा
२४४	२०	समिमि	समिति
२६५	१०	,,	स्नातकमें एक केवली समु० पावे
२८५	७	इच्छार	इच्छाकार
२८५	१०	इच्छार	इच्छाकार
२८६	१७	३-८	२-८
२८३	१७	२-८	३-८
३०६	६	लोन	लोग
३०९	४	५६	५७
३१७	१	१३२	१२२

देष या खरच न करना ताके भविष्यमें समाधि रहै। आम-दानी माफीक खरचा रखना।

(६) कीसीका भी अवगुनवाद न बोलना औ अवगुन-वाला हो तो उन्होंकि संगत न करना तारीफ भी न करना प-रन्तु अवगुन बोलके अपनि आत्माको मलीन न करे।

(७) जिन मकानके आसपासमें अच्छे लोगोंका मकान हो और दरवाजे अपने कब्जेमेंहो, मन्दिर, उपाश्रय या साधर्मी भाइयों नजीक हो एसे मकानमें निवास करना चाहिये। ताके सुखसे धर्मसाधन करसकै।

(८) धर्म, निति, आचारवन्त और अच्छी सलाहके देने-वालोंकी संगत करना चाहिये ताके चित्तमें हमेशां समाधी और बनी रहै।

(९) मातापिता तथा वृद्ध सज्जनोंकि सेवाभक्ति विनय करना, तथा कोइ आपसे छोटा भी होतो उनका भी आदर करना सबसे मधुर वचनोंसे बोलना।

(१०) उपद्रववाले देश, ग्राम या मकान हो उनका परित्याग करना चाहिये। रोग, मरकी, दुष्काल आदिसे नुक-शान हो एसे देशमें नही रहेना।

(११) लोक निंदने योग्य कार्य न करना और अपने स्त्री पुत्र और नोकरोंको पहलेसे ही अपने कब्जेमें रखना अच्छा आचार व्यवहार सीखाना।

(१२) जैसी अपनी स्थिति हो या पेदास हो इसी माफिक खरचा रखना शिरपर करजा करके संसार या धर्मकार्य में ना-मून हांसल करनेके इरादेसे बेभान होके खरचा न कर देना, खरचा करनेके पहिले अपनी हालत देखना।

(१३) अपने पूर्वजोंका चलाइ हुइ अच्छी मर्यादाओंको या वेषको ठीक तरहसे पालन करना कीसीके देखादेख प्रवृत्ति या वेष नहीं बदलना।

(१४) आठ प्रकारके गुणोंको प्रतिदिन सेवन करते रहना यथा (१) धर्मशास्त्र श्रवण करनेकि इच्छा रखना (२) योग मीलनेपर शास्त्र श्रवणमें प्रमाद न करना (३) सुने हुवे शास्त्रके अर्थको समझना (४) समझे हुये अर्थको याद करना (५) उसमें भी तर्क करना (६) तर्कका समाधान करना (७) अनुपेक्षा उपयोगमें लेना या उपयोग लगाना (८) तत्वज्ञानमें तल्लीन हो-जाना शुद्ध श्रद्धा रखना दुसरेको भी तत्वज्ञानमें प्रवेश करा देना।

(१५) प्रतिदिन करने योग्य धर्मकार्यको संभालते रहेना, अर्थात् टाईमसर धर्मक्रिया करते रहना। धर्महीको सार समझना।

) १६) पहिले कियेहुये भोजनके पचजानेसे फिर भोजन करना इसीसे शरीर आरोग्य रहता है और चित्तमें समाधी रहेती है।

(१७) अपथा अजिर्ण आदि रोग होनेपर तुरत आहारको त्याग करना, अर्थात् खरी भूख लगनेपर ही आहार करना परन्तु लोलुपता होके भोजन करलेनेके बाद मीठाइादि न खाना और प्रकृतिसे प्रतिकूल भोजन भी नही करना, रोग आनेपर औषधीके लिये प्रमाद न करना।

(१८) संसारमें धर्म, अर्थ, कामको साधते हुवे भी मोक्ष-वर्गको भूलना न चाहिये। सारवस्तु धर्म ही समझना। और समय पाकर धर्मकार्योंमें पुरुषार्थ भी करना।

(१९) अतिथी-अभ्यागत गरीब रांक आदिको दुःखो

देखके करूणाभाव लाना यथाशक्ति उन्होंकी समाधीका उपाय करना।

(२०) कीसीका पराजय करनेके इरादेसे अनितिका कार्य आरंभ नही करना, विना अपराध किसीकों तकलीफ न पहुंचाना।

(२१) गुणीजनोंका पक्षपात करना उन्होंका बहुमान करना सेवाभक्ति करना।

(२२) अपने फायदेकारी भी क्यों न हो परन्तु लोग तथा राजा निषेद्ध कीये हुये कार्यमें प्रवृत्ति न करना।

(२३) अपनी शक्ति देखके कार्यका प्रारंभ करना प्रारंभ किये हुवे कार्यको पार पहुंचा देना।

(२४) अपने आश्रितमें रहे हुवे मातापिता, स्त्रि, पुत्र, नोकरादिका पोषण ठीक तरहसे करना। कीसीकों भी तकलीफ न हो एसा वर्त्ताव रखना।

(२५) जो पुरुष व्रत तथा ज्ञानमें अपनेसे बडा हो उन्होंकों पुज्य तरीके बहुमान देना, और विनय करना। तथा गुणलेनेकि कोशीस करना।

(२६) दीर्घदर्शी-जो कार्य करना हो उन्हीमें पहिले दीर्घ-द्रष्टीसे भविष्यके लाभालाभका विचार करना चाहिये।

(२७) विशेषज्ञ कोई भी वस्तु पदार्थ या कार्य हो तो उन्होंके अन्दर कोनसा तत्व है कि जो मेरी आत्माकों हितकर्ता है या अहितकर्ता है उन्होका विचार पहले करना चाहिये।

(२८) कृतज्ञ-अपने उपर जिस्का उपकार है उन्होकों कभी भूलना नही, जहांतक बने वहांतक प्रतिउपकार करना चाहिये।

(२९) लोकप्रीय-सदाचारसे एसी प्रवृत्ति अपनी रखनी चाहिये कि यह सब लोगोंको प्रीय हो अर्थात् परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कार्यको पहले करदेना चाहिये ।

(३०) लज्जावन्त-लौकीक और लोकोत्तर दोनों प्रकारकी लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जा है सो नितिकि माता है लज्जावन्तकी लोक तारीफ करते है बहुतसी वखत अकार्यसे बच जाते है।

(३१) दयालुहो-सब जीवोंपर दयाभाव रखना अपने प्राण के माफीक सब आत्मावोंको समझके कीसीको भी नुकशान न पहूंचाना ।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमेशां हस्तवदन आनन्दमें रहना अर्थात् क्रूर प्रकृति या क्षीण क्षीण प्रत्ये क्रोधमानादिकि वृत्ति न रखना । शान्त प्रकृति रखनेसे अनेक गुणोंकि प्राप्ती होती है।

(३३) उन्मार्ग जाते हुये जीवोंको हितबोध देके अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल कहते हुये मधुर वचनोंसे समझाना ।

(३४) अन्तरग वैरी क्रोध, मान, माया, लोभ, हर्ष, शोक इन्होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहुये वैरीयोंको अपने कब्जे करना ।

(३५) जीवको अधिक भ्रमण करानेवाले विषय (पंचेन्द्रिय) और कषाय है उनका दमन करना, अच्छे महात्मावोंको सत्संग करते रहना, अर्थात् मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्मा ही होते है सन्मार्गका प्रथम उपाय सत्संग है ।

यह पैंतीस बोल संक्षेपसे ही लिखा है कारण कंठस्थ करनेवा-

लोको अधिक विस्तार होतनी दखत बोजारूप हो जाता है वास्ते यह ३५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे विस्तारपूर्वक समझके अपनी आत्माका कल्याण अवश्य करना चाहिये। शम।
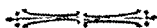
थोकडा नं० २.

(व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल)

इन सडसट बोलोंको बारह द्वार करके कहेंगे-(१) सद्दहणा ४ (२) लिंग ३ (३) विनय १० प्रकार (४ शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दोषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयणा ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ इति।

(१) सद्दहणा चार प्रकारकी-(१) पर तीर्थीका अधिक परिचय न करे (२) अधर्म प्ररुपक पाखंडीयोंकी प्रशंसा न करे (३) स्वमतका पासत्था, उसन्ना और कुलिंगादिकी संगत न करे. इन तीनोंका परिचय करनेसे शुद्ध तत्त्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती (४) परमार्थको जाननेवाले संविग्न गीतार्थकी उपासना करके शुद्ध श्रद्धाको धारण करें।

(२) लिंगका तीन भेद-(१) जैसे तरुण पुरुष रंग रागउपर राचे वैसे ही भव्यात्मा भी जिन शासनपर राचे (२) जैसे क्षुधातुर पुरुष खीर खांडयुक्त भोजनका प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतरागकी वाणीका आदर करे (३) जैसे व्यवहारीक ज्ञान पढने की तिव्र इच्छा हो और पढानेवाला मिलनेसे पढ कर इस लोकमें सुखी होवे वैसे ही वीतरागके आगमोंका सुक्ष्मार्थ नित नया ज्ञान सीखके इह लोक और परलोकके मनोवांच्छत सुखको प्राप्त करें।

(३) विनयका दश भेद- १। अरिहन्तोंका विनय करे (२) सिद्धोंका विनय० (३) आचार्यका वि० (४ उपाध्यायका वि० (५) स्थवीरका वि० (६) गण बहुत आचार्योंके समुह)का वि० (७) कुल (बहुल आचार्योंके शिष्यसमुह)का वि० (८) स्वाधर्मीका वि० (९) संघका वि० (१०) संभोगीका विनय करे. इन दशोंका बहुमानपूर्वक विनय करे। जैन शासनमें 'विनय मूल धर्म है'। विनय करनेसे अनेक सद्गुणोंकी प्राप्ति हो सकती है।

(४) शुद्धताके तीन भेद-(१) मनशुद्धता-मन करके अरिहन्तदेव ३४ अतिशय, ३५ वाणी, ८ महाप्रातिहार्य सहित, १८ दूषण रहित×१२ गुण सहित हमारे देव हैं। इनके सिवाय हजारों कष्ट पडने पर भी सरागी देवोंका स्मरण न करे (२) वचन शुद्धता वचनसे गुण कीर्तन अरिहन्तोंके सिवाय दूसरे सरागी देवोंका न करे (३) काय शुद्धता-कायसे नमस्कार भी अरिहन्तोंके सिवाय अन्य सरागी देवोंको न करे।

(५) लक्षणके पांच भेद- १) सम-शत्रु मित्र पर सम परिणाम रखना (२) संवेग-वैराग भाव रखना याने संसार असार है विषय और कषायसे अनन्ताकाल भव भ्रमण करते हुवे इस भव अच्छी सामग्री मिली है इत्यादि विचार करना। (३) निर्वेग-शरीर और संसारका अनित्यपणा चिन्तवन करना। बने जहां तक इस मोहमय जगत्से अलग रहना और जगतारक जिनराजकी दीक्षा ले कर्म शत्रुओंको जीतके सिद्धपदको प्राप्त करनेकी हमेशां अभिलाषा रखना (४) अनुकम्पा-स्वात्मा, परात्माकी

× दानान्तराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, वीर्यांतराय, हास्य, भय, शोक, जुगप्सा, रति, अरति, मिथ्यात्व, अज्ञान, अव्रत, राग, द्वेष, निंद्रा, मोह यह १८ दुषण न होना चाहिये।

अनुकम्पा करनी अर्थात् दुःखी जीवको सुखी करना (५) आस्ता-त्रैलोक्य पूजनीय श्री वीतरागके वचनोंपर दृढ श्रद्धा रखनी, हिताहितका विचार, अर्थात् अस्तित्व भावमें रमण करना। यह व्यवहार सम्यक्त्वका लक्षण है। जिस बातकी न्युनता हो उसे पुरी करना।

(६) भूषणके पांच भेद-(१) जिन शासनमें धैर्यवंत हो। शासनका हर एक कार्य धैर्यतासे करें। (२) शासनमें भक्तियान हो (३) शासनमें क्रियावान हो (४) शासनमें चातुर्य हो। हर एक कार्य ऐसी चतुरताके साथ करे ताके निर्विघ्नतासे हो। (५) शासनमें चतुर्विध संघकी भक्ति और बहुमान करनेवाला हो। इन पांच भूषणोंसे शासनकी शोभा होती है।

(७) दूषण पांच प्रकारका-(१) जिन वचनमें शंका करनी (२) कंखा-दूसरे मतोंका आडम्बर देखके उनकी वांच्छा करनी (३) वितिगिच्छा-धर्म करणीके फलमें संदेह करना कि इसका फल कुछ होगा या नहीं। अबीतक तो कुछ नहीं हुवा इत्यादि (४) पर पाखंडीसे हमेशां परिचय रखना (५) पर पाखंडीकी प्रशंसा करना ये पांच सम्यक्त्वके दूषण है। इसे टालने चाहिये।

(८) प्रभावना आठ प्रकारकी-(१) जिस कालमें जितने सूत्रादि हो उनको गुरुगमसे जाणे वह शासनका प्रभाविक होता है (२) बडे आडम्बरके साथ धर्म कथाका व्याख्यान करके शासनकी प्रभावना करें (३) विकट तपस्या करके शासनकी प्रभावना करे (४) तीन काल और तीन मनका जाणकार हो (५) तर्क, वितर्क, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय और विद्यादि बलसे वादियोंको शास्त्रार्थमें पराजय करके शासनकी प्रभावना करे (६) पुरुषार्थी पुरुष दिक्षा लेके शासनकी प्रभावना करे (७) कविता करनेकी

शक्ति हो तो नवचिना करके शासनकी प्रभावना करे (८) प्रत्यक्ष-याँदि कोई बड़ा व्रत लेना हो तो प्रगट बहुतसे आदमियोंके बीच में ले। इसीसे लोगोंको शासन पर श्रद्धा और व्रत लेनेकी रुची बढती है अथवा दुर्बल स्वधर्मी भाइयोंकी सहायता करनी यह भी प्रभावना है परन्तु आजकल चौमासेमें अभक्ष वस्तुओंकी प्रभावना या लड्डु आदि बांटते है दीर्घदृष्टिसे विचारीये इस बांटने से शासनकी क्या प्रभावना होती है ? और कितना लाभ है इस को बुद्धिमान स्वयं विचार कर सके है अगर प्रभावनासे आपका सच्चा प्रेम हो तो छोटे छोटे तत्त्वज्ञानमय ट्रेक्टकि प्रभावना करिये ताकि आपके भाइयोंको आत्मज्ञानकि प्राप्ती हो।

(९) आगार छे हैं-सम्यक्त्वके अंदर छे आगार है (१) राजाका आगार (२) देवताका० (३) ज्ञातका० (४) माता पिता गुरुजनोंका० (५) बलवंतका० (६) दुष्कालमें सुखसे आजीविका न चलती हो, इस छे आगारोंसे सम्यक्त्वमें अनुचित कार्य भी करना पडे तो सम्यक्त्व दूषित नहीं होता है।

(१०) जयणा छे प्रकारकी- १) आलाप-स्वधर्मी भाईयोंसे एक वार बोलना (२) संलाप-स्वधर्मी भाईयोंसे वार २ बोलना (३) मुनिको दान देना और स्वधर्मी वात्सल्य करना (४) प्रतिदिन वार २ करना (५) गुणीजनोंका गुण प्रगट करना (६) और वन्दन, नमस्कार, बहुमान करना।

(११) स्थान छे है- १) धर्मरूपी नगर और सम्यक्त्व रूपी दरवाजा (२) धर्मरूप वृक्ष और सम्यक्त्वरूपी जड (३) धर्मरूपी प्रासाद और सम्यक्त्वरूपी नींव (४) धर्मरूपी भोजन और सम्यक्त्वरूपी थाल (५) धर्मरूपी माल और सम्यक्त्वरूपी दुकान (६) धर्मरूपी रत्न और सम्यक्त्वरूपी तिजूरी।

(१२) भावना छे हैं—(१) जीव चैतन्य लक्षणयुक्त असंख्यात प्रदेशी निष्कलंक अमूर्ती हैं. (२) अनादि कालसे जीव और कर्मोका संयोग है। जैसे दूधमें घृत, तिलमें तेल, धूलमें धातु, पुष्पमें सुगन्ध, चन्द्रकान्तीमें अमृत इसी माफिक अनादि संयोग है।(३) जीव सुख दुःखका कर्ता है और भोक्ता है। निश्चय नयसे कर्मका कर्ता कर्म है और व्यवहार नयसे जीव है. (४) जीव, द्रव्य, गुण पर्याय, प्राण और गुण स्थानक सहित है. (५) भव्य जीवको मोक्ष है. (६) ज्ञान, दर्शन और चारित्र मोक्षका उपाय है ॥ इति ॥ इस थोकडेको कंठस्थ करके विचार करो कि यह ६७ बोल व्यवहार सम्यक्त्वके है इनमेंसे मेरेमें कितने है और फिर आगेके लिये बढनेकी कोशीस करो और पुरुषार्थ द्वारा उनको प्राप्त करो ॥ कल्याणमस्तु ॥

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर ३

(पंतीस बोल)

(१) पहेले बोले गति च्यार—नरकगति, तीर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति.

(२) जाति पांच—एकेन्द्रिय, बेइंद्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिंद्रिय और पंचेन्द्रिय.

(३) काया छे—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, और त्रसकाय।

(४) इन्द्रिय पांच—श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय।

(५) पर्याप्ति छे—आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, श्वासोश्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति, और मनःपर्याप्ति.

(६) प्राणदश—श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण, चक्षुइन्द्रिय बलप्राण, घ्राणेन्द्रिय बलप्राण, रसेन्द्रिय बलप्राण, स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण, मनबलप्राण, वचन बलप्राण, काय बलप्राण, श्वासोश्वास बलप्राण आयुष्य बलप्राण.

(७) शरीर पांच—औदारिक शरीर, वैक्रिय शरीर, आहारीक शरीर, तैजस शरीर, कारमाण शरीर।

(८) योग पंद्रा—च्यार मनके, च्यार वचनके, सात कायके, यथा-सत्यमनयोग, असत्यमनयोग, मिश्रमनयोग, व्यवहार मनयोग, सत्यभाषा, असत्यभाषा, मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा, औदारीक काययोग, औदारीक मिश्र काययोग, वैक्रिय-काययोग, वैक्रिय मिश्रकाययोग. आहारक काययोग, आहारक मिश्र काययोग, और कार्मण काययोग।

(९) उपयोग बारहा—पांच ज्ञान, तीन अज्ञान, च्यार दर्शन, यथा-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान, मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन.

(१०) कर्म आठ—ज्ञानावर्णीय (जैसे घाणीका बेल) दर्शनावर्णिय (जैसे राजाका पोलीया) वेदनीय कर्म (जैसे मधुलिप्त छुरी) मोहनीय कर्म (मदिरा पान कीये हुवे मनुष्य)

आयुष्यकर्म (जैसे कारागृह) नामकर्म (जैसे चीतारा) गोत्र-कर्म (कुंभार) अंतरायकर्म (जैसे राजाका खजांची) ।

(११) गुणस्थानक– चौदा— मिथ्यात्वगुणस्थानक, सास्वादन गु० मिश्र गु० अव्रतसम्यग्दृष्टि गु० देशव्रती श्रावक-का गु० प्रमत्त साधुका गु० अप्रमत्त साधु गु० निवृतिबादर गु० अनिवृतिबादर गु० सुक्ष्म संपराय गु० उपशान्त मोह गु० क्षीण-मोह गु० सयोगि गु० अयोगि गु० ।

(१२) पांच इन्द्रियोंका–२३ विषय. श्रोत्रेन्द्रियकि तीन विषय–जीवशब्द, अजीवशब्द मिश्रशब्द, चक्षुरिन्द्रियकी पांच विषय. कालारंग, निलारंग, रातो (लाल), पीलोरंग, सफेदरंग, घ्राणेन्द्रियकी दोय विषय. सुगन्ध, दुर्गन्ध, रसेन्द्रियकी पांच विषय तीक कटुक, कशाय आंबिल, मधुर, स्पर्शेन्द्रि-यकी आठ विषय, कर्कश, मृदुल, गुरु लघु, सीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष.

(१३) मिथ्यात्वदश–जीवकों अजीव श्रद्धे वह मिथ्या-त्व, अजीवकों जीव श्रद्धे वह मिथ्यात्व, धर्मकों अधर्म श्रद्धे, अध-र्मको धर्म श्रद्धे० साधुकों असाधु श्रद्धे० असाधुकों साधु श्रद्धे० अष्ट-कर्मोंसे मुक्तकों अमुक्त श्रद्धे० अष्टकर्मोंसे अमुक्तकों मुक्त श्रद्धे० सं-सारके मार्गको मोक्षका मार्ग श्रद्धे० मोक्षके मार्गकों संसारका मार्ग श्रद्धे वह मिथ्यात्व है विशेष मिथ्यात्व २५ प्रकारका देखो गुणस्थानद्वार ।

(१४) छोटी नवतत्त्वके ११५ बोल–विस्तार देखो व डी नवतत्वसे । नवतत्वके नाम. जीवतत्व, अजीवतत्व, पुन्य-तत्व, पापतत्व, आश्रवतत्व, संवरतत्व, निर्ज्जरातत्व बन्ध-तत्व, मोक्षतत्व । जिसमें ।

(क) जीवतत्व के चौदा भेद है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञीपंचेन्द्रिय एवं सातोंके पर्याप्ता. सातोंके अपर्याप्ता मीलानेसे १४ भेद जीवका है।

(ख) अजीवतत्वके चौदे भेद है यथा-धर्मास्तिकायके तीन भेद है धर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश, एवं अधर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश. एवं आकाशास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश. एवं नौ. और दशवा काल तथा पुद्गलास्तिकायके च्यार भेद स्कन्ध. स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु पुद्गल एवं चौदा भेद अजीवका है।

(ग) पुन्यतत्वके नौ भेद है। अन्न देना पुन्य, पाणी देना पुन्य, मकान देणा पुन्य, पाटपाटला शय्या देना पुन्य. वस्त्र देना पुन्य, मनपुन्य, वचनपुन्य, कायपुन्य, नमस्कारपुन्य.

(घ) पापतत्वके अठारा भेद। प्राणातिपात (जीवहिंसा करना) मृषावाद (झुठ बोलना) अदत्तादान (चोरी करना) मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन, परपरीवाद, रति अरति, माया–मृषावाद, मिथ्यात्वशल्य एवं १८ पाप.

(च) आश्रवतत्वके २० भेद है यथा-मिथ्यात्वाश्रव, अव्रताश्रव, प्रमादाश्रव, कषायाश्रव, अशुभयोगाश्रव, प्राणातिपाताश्रव, मृषावादाश्रव, अदत्तादानाश्रव, मैथुनाश्रव, परिग्रहाश्रव, श्रोत्रेन्द्रियको अपने कब्जेमें न रखनाश्रव. एवं चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय. एवं मन० वचन० काय० अपने वशमें न रखे, भंडोपकरण अयत्नासे लेना, अय-

त्नासे रखना. सूचीकुश अर्थात् तृणमात्र यत्नासे लेना-रखना से आस्रव होता है।

(छ) संवरतत्त्व-के २० भेद हैं यथा समकित संवर, व्रतप्रत्याख्यान संवर अप्रमादसंवर, अकषायसंवर, शुभयोगसंवर, जीवहिंस्या न करे, झुट न बोले. चोरी न करे, मैथुन न सेवे, परिग्रह न रखे, श्रोत्रेन्द्रिय अपने कब्जेमें रखे. चक्षु इन्द्रिय० घ्राणेन्द्रिय० रसेन्द्रिय० स्पर्शेन्द्रिय, मन, वचन, काया अपने कब्जेमे रखे, भंडोपकरण यत्नासे ग्रहन करे, यत्नासे रखे, एवं सूचीकुश अर्थात् तृणमात्र यत्नासे उठावे यत्नासे रखे एव २० भेद संवरका है।

(ज) निर्जरातत्त्व के १२ भेद है यथा अनसन, उणोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रस (विगइ) का त्याग, कायाक्लेस, प्रतिसंलेषना, प्रायश्चित्त, विनय, वैयावच, स्वध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग एवं १२ भेद.

(झ) वन्धतत्त्व के च्यार भेद है, प्रकृतिवन्ध, स्थिति बन्ध, अनुभागबन्ध, और प्रदेशबन्ध.

(ट) मोक्षतत्त्व के च्यार भेद है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य.

(१५) आत्मा आठ-द्रव्यात्मा, कषायात्मा, योगात्मा उपयोगात्मा, ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, चारित्रात्मा, वीर्यात्मा.

(१६) दंडक २४-यथा सात नरकका एक दंड, सात नरकके नाम-धम्मा, वंशा, शीला, अंजना, रिठ्ठा, मघा, माघवती. इन सात नरकके गौत्र-रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा, तमस्तमःप्रभा. एवं पहला दंडक। दश भुवनपतियोंके दश दंडक यथा-असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्ण-

कुमार, विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, द्विपकुमार, दिशाकुमार, उदधिकुमार, वायुकुमार, स्तनीतकुमार एवं ११ दंडक हुवा. पृथ्वीकायका दंडक. अपकायका, तेउकायका, वायुकायका, वनस्पतिकायका. बेइन्द्रिकादंडक तेइन्द्रिका, चौरिंद्रिका, तिर्यंचपंचेन्द्रिका, मनुष्यका, व्यंतरदेवताका, ज्योतीषीदेवोंका और चोवीसवा वैमानिकदेवतोंका दंडक है।

(१७) लेश्या छे–कृष्णलेश्या, निललेश्या, कापोतलेश्या, तेजसलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या.

(१८) दृष्टि तीन–सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि।

(१९) ध्यान चार–आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान।

(२०) षट् द्रव्य के नाम पनेके ३० भेद. यथा षट् द्रव्यके नाम. धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय और काल.

(१) धर्मास्तिकाय- पांच बोलोंसे जानी जाती है. जेसे द्रव्यसे धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है क्षेत्रसे संपूर्ण लोक परिमाण है. कालसे अनादिअनंत है. भावसे अरूपी है जिसमें वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श कुच्छ भी नही है और गुणसे धर्मास्तिकायका चलन गुण है जेसे मच्छके सहायतासे मच्छी चलती है इसी माफिक धर्मास्तिकायकि सहायतासे जीव और पुद्गल चलन क्रिया करते है.

(२) अधर्मास्तिकाय पांच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे अधर्मा० एक द्रव्य है क्षेत्रसे संपूर्ण लोक परिमाण है. कालसे आदि अन्त रहीत है भावसे अरूपी है वर्ण गन्ध रस

स्पर्श कुच्छभी नही है गुनसे स्थिर गुन है जैसे थाका हुवा मुसाफरको वृक्षकी छायाका दृष्टान्त।

(३) आकाशास्तिकाय—पांच बोलोंसे जानी जाति है द्रव्यसे आकाशास्तिकाय एक द्रव्य हैं क्षेत्रसे लोकालोक परिमान हैं कालसे आदि अंत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत हैं गुनसे आकाशमें विकाशका गुन है जैसे भींतमें खुंटी तथा पानीमें पत्ताशाका दृष्टान्त है।

(४) जीवास्तिकाय—पांच बोलोंसे जानी जाती हैं द्रव्यसे जीव अनंते द्रव्य है क्षेत्रसे लोक परिमान है. कालसे आदिअंत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुनसे जीवका उपयोग गुन है जैसे चन्द्रके कलाका दृष्टांत.

(५) पुद्गलास्तिकाय—पांच बोलोंसे जानी जाती है. द्रव्यसे पुद्गलद्रव्य अनंत हैं क्षेत्रसे संपूर्ण लोक परिमान है. कालसे आदि अन्त रहीत है भावसे रूपी है वर्ण है गन्ध है रस है स्पर्श है गुनसे सडन पडन विध्वंस गुन है। जैसे वादलोंका दृष्टान्त।

(६) कालद्रव्य—पांच बोलोंसे जाने जाते है. द्रव्यसे अनंते द्रव्य-कारन अनंते जीव पुद्गलोंकि स्थितिको पुर्ण कर रहा है। क्षेत्रसे कालद्रव्य अढाइ द्वीप में है (कारन बाहारके चन्द्र सूर्य स्थिर है) कालसे आदि अंत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुनसे नइ वस्तुको पुरानी करे पुरानी वस्तुको क्षय करे. कपडा कतरणीका दृष्टांत।

(२१) राशीद्वार—यथा जीवराशी जिस्के ५६३ भेद। अजीवराशी जिस्के ५६० भेद है देखो दुसरे भाग नवतत्वके अन्दर

(२२) श्रावकजी के बारहाव्रत. (१ त्रस जीव हालता चालताको विगर अपराधे मारे नही। स्थावरजीवोंकि मर्यादा

करे। (२) राजदंडे लोक भंडे पसा बडा जूठ बोले नहीं (३) राज दंडे लोक भंडे पसी बडी चोरी करे नहीं (४) परस्त्री गमनका त्याग करे स्वस्त्रिकि मर्यादा करे (५) परिग्रहका परिमाण करे (६) दिशाका परिमाण करे (७) द्रव्यादिका संक्षेप करे पन्नरे कर्मादान व्यापारका त्याग करे (८) अनर्थदंड पापोंका त्याग करे (९) सामायिक करे. (१०) देशावगासी व्रत करे. (११) पौषध व्रत करे. (१२) अतीथीसंविभाग अर्थात् मुनि महाराजोंको फासुक एषणीक अशनादि आहार देवे।

(२३) मुनिमहाराजोंके पांच महाव्रत—(१) सर्वथा प्रकारे जीवहिंसा करे नहीं, करावे नहीं, करते हुवेको अच्छा समझे नहीं. मनसे, वचनसे, कायासे. (२) सर्वथा प्रकारे झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं, बोलतोंको अच्छा समझे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे. (३) सर्वथा प्रकारे चोरी करे नहीं, करावे नहीं करतेको अच्छा समझे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे. (४) सर्वथा प्रकारे मैथुन सेवे नहीं, सेवावे नहीं, सेवतेको अच्छा समझे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे. (५) सर्वथा प्रकारे परिग्रह रखे नहीं, रखावे नहीं, रखते हुवेको अच्छा समझे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे। एवं रात्रीभोजन स्वयं करे नहीं, करावे नहीं, करते हुवेको अच्छा समझे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे।

(२४) प्रत्याख्यानके ४९ भांगा—अंक ११ भाग ९. एक करण-एक योगसे।

करुं नहीं मनसे
करुं नहीं वचनसे
करुं नहीं कायासे
करावुं नहीं मनसे
करावु नहीं वचनसे
करावुं नहीं कायासे
अनुमादु नहीं मनसे
" " वचनसे
" " कायासे

(२५) चारित्र पांच—सामायिक चारित्र, छेदोपस्थापनीय चारित्र, परिहारविशुद्धि चारित्र सूक्ष्मसंपराय चारित्र यथाख्यात चारित्र।

(२६) नय सात—नैगमनय. संग्रहनय. व्यवहार नय ऋजुसूत्रनय शब्दनय संभिरूढनय. एवंभूतनय.।

(२७) निक्षेपाच्यार—नामनिक्षेप. स्थापनानिक्षेप. द्रव्यनिक्षेप. भावनिक्षेप.

(२८) समकित पांच—औपशमिक समकित. क्षयोपशम स० क्षायिकस० वेदक स० सास्वादन समकित।

(२९) रस नौ—शृंगाररस. वीररस. करुणारस. हास्यरस. रौद्ररस. भयानकरस. अद्भुतरस विभत्सरस. शान्तिरस

(३०) अभक्ष २२ यथा—बडकेपीपु. पीपलकेपीपु. पीलखोके फल. ऊम्बरवृक्षकेफल. कटुम्बरकेफल. मांस. मदिरा. मधु. मक्खन. हैम. विष ओमल. कणगदे. कच्चीमट्टी रात्रीभोजन. बहुबीजाफल. अर्था कन्दवनस्पति बोंलि अथाणा. कचे गोरसमें दाले हुवे बडे. रींगणा. अनजाना फुलफल. तुच्छफल चली-तरस बासे बोसरी हुइ वस्तु।

(३१) अनुयोग च्यार—द्रव्यानुयोग. गणितानुयोग चरणकरणानुयोग धर्मकथानुयोग.।

(३२) सम्यक्दर्शन—देवतत्व देव (अरिहंत) गुरु तत्व (निग्रन्थगुरु) धर्मतत्व (वीतरागकि आज्ञा)

(३३) पांच समवाय—काल. स्वभाव. नियत, पूर्वकृत कर्म. पुरुषार्थ.

थोकडा नम्बर ४

' श्रीजी जीवाभिगम ' से लघुदंडक बालबोध.

॥ गाथा ॥

सरीरोगाहणा संघयण संठाणं सन्ना कसायाय
लेसिंदियं समुग्घाओ सन्नी वेदये पजति ॥ १ ॥
दिट्ठि दंसण नाण अनाणे जोगुवोगेय तह किमाहारे
उववाय ठि समोहय चवणं गइआगइ चेव ॥ २ ॥

इन दो गाथाओंका अर्थ शास्त्रकारोंने खुब विस्तारसे कीया है परन्तु कंठस्थ करनेवाले विद्यार्थी भाइयोंके लिये हम यहां पर संक्षिप्तसे लिखते है।

(१) शरीर प्रतिक्षिण जीर्ण होना और-सडणा पडणा होनेका स्वभाव है जिस शरीरके पांच भेद है (१) औदारीक शरीर, हाड मांस रौद्र चरबी कर संयुक्त सडन पडन विध्वंसन, धर्मवाला होनेसेही तीर्थंकरोंने इस शरीरको प्रधान माना गया है कारण मोक्ष होनेमें यहही शरीर मोक्ष साधन कारण है (२) वैक्रय शरीर हाड मंस रहीत नाना प्रकारके रुप बने बन सकते (३) आहारक शरीर चौदा पुर्वधारी लब्धि संपन्न, मुनियोंके होते है (४) तेजस शरीर आहारादिको पाचनक्रिया करनेवाला (५) कार्मण शरीर अष्ट कर्मोका खजाना तथा ग्रहण हुआ आहारको स्थान स्थानपर पहुचानेवाला।

(२) अवगाहना-शरीरकी लम्बाइ जिसके दो भेद है एक

भवधारणी अवगाहना दुसरी उत्तर वैक्रिय. जो उसको शरी-रसे न्युनाधिक बनाना।

(३) संहनन-हाडकि मजबुतीसे ताकत-शक्तिको संहनन कहते हैं जिस्के छे भेद हैं वज्रऋषभनाराच, ऋषभनाराच, नाराच, अर्द्धनाराच, किलका, और छेवटा संहनन।

(४) संस्थान-शरीरकि आकृति. जिस्के छे भेद-समचतुरस्र, न्यग्रोध परिमंडल, सादीया, वांमना, कुब्ज, हुंडकसंस्थान.

(५) संज्ञा-जीवोंकि इच्छा-जिस्के च्यार भेद. आहारसंज्ञा भयसंज्ञा मैथुनसंज्ञा परिग्रहसंज्ञा.

(६) कषाय-जिनसे संसारकि वृद्धि होती है जिस्के च्यार भेद हैं क्रोध, मान, माया, लोभ.

(७) लेश्या-जीवोंके अध्यवसायसे शुभाशुभ पुद्गलोंको ग्रहन करना जिस्के छे भेद हैं कृष्ण० निल० कापोत० तेजस० पद्म० शुक्ललेश्या।

(८) इन्द्रिय-जिनसे प्रत्यक्षज्ञान होता है जिस्के पांच भेद. श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय।

(९) समुद्घात-समभावोंकि घातकर विषम बनाना जिस्का सात भेद हैं वेदनि० कषाय० मरणांतिक० वैक्रिय० तै-जस० आहारक० केवली समुद्घात०

(१०) सन्नी-जिस्के मनहो वह संज्ञी. मन न होवह असंज्ञी

(११) वेद-जीवोंका विकार हो मैथुनकि अभिलाषा करना उसे वेद कहते हैं जिस्के तीन भेद हैं स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद।

(१२) पर्याप्ती-जीव योनिमें उत्पन्न हो पुद्गलोंको ग्रहनकर शक्तिके लिये अलग अलग स्थान करते हैं जिस्के भेद छे. आहार० शरीर० इन्द्रिय० श्वासोश्वास० भाषा० मनपर्याप्ती।

(१३) दृष्टि-तत्व पदार्थकी श्रद्धा, जिस्के तीन भेद. सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि.

(१४) दर्शन-वस्तुका अवलोकन करना-जिस्के च्यार भेद चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन.

(१५) ज्ञान-तत्ववस्तु को यथार्थ जानना जिस्के पांच भेद है मतिज्ञान श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान।

(१६) अज्ञान-वस्तु तत्वको विपरीत जानना जिस्के तीन भेद है मतिअज्ञान, श्रुतिअज्ञान, विभग अज्ञान।

(१७) योग-शुभाशुभ योगोंका व्यापार जिस्का भेद १५ देखो बोल ८ वा। (पैंतीस बोलोंमें)

(१८) उपयोग-साकारोपयोग (विशेष) अनाकारोपयोग (सामान्य)

(१९) आहार-रोमाहार, कवलाहार लेते है उन्होंका दो भेद है व्याघात जो लोकके चरम प्रदेशपर जीव आहार लेते है उन्होंको तीनों दीशामें अलोककि व्याघात होती है तथा अचर्म प्रदेशपर जीव आहार लेता है वह निर्व्याघात लेता है।

(२०) उत्पात-एक समयमें कौनसे स्थानमें कितने जीव उत्पन्न होते है।

(२१) स्थिति-पदार्थोंके अन्दर एक भवमें कितने काल रह सके।

(२२) मरण-समुद्घात कर तांगवेजादि माफीक मरे. विगर समुद्घात गोलीके धडाकाकी माफीक मरे।

(२३) च्यवन-एक समयमें कौनसी योनिसे कीतने जीव चवे.

(२४) गति आगति-कौनसी गतिसे आके कौन योनिमें जीव उत्पन्न होता है और कौनसी योनिसे चवके जीव कौनसी गतिमें जाता है। इति।

लघुदंडक पढनेवालोंको पहले पैंतीसबोल कंठस्य कर लेना चाहिये। अब यह चौवीसद्वार चौवीसदंडकपर उतारा जाते हैं।

(१) शरीर—नारकी देवतायों में तीन शरीर-वैक्रीय शरीर० तेजस० कारमण०। पृथ्वीकाय, अप० तेउ० वनास्पति बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय, असंज्ञी तीर्यंच पंचेन्द्रिय, असंज्ञी मनुष्य और युगल मनुष्य इन बोलोंमें शरीर तीन पावे. औदारीक शरीर तेजस० कारमण०। वायुकाय और संज्ञी तीर्यंच में शरीर च्यार पावे. औदारीक वैक्रीय तेजस. कारमण.। संज्ञीमनुष्यमें शरीर पांचोंपाय. सिद्धोंमें शरीर नहीं.

(२) अवगाहना—जघन्य-भवधारणी अंगुलके असंख्यात में भाग है और उत्तर वैक्रिय करते है उनोंके जघन्य अंगुलके संख्यातमें भागहोती हैं अब भवधारणि तथा उत्तर वैक्रय कि उत्कृष्ट अवगाहाना कहते है

नाम.	उत्कृष्ट भवधारिणि		उत्कृष्टि उत्तरवैक्रिय	
	धनुष्य	आंगुल	धनुष्य	आंगुल
पहली नारकी	७॥।	६	१५॥	१२
दुसरी ,,	१५॥	१२	३१।	०
तीसरी ,,	३१।	०	६२॥	०
चोथी ,,	६२॥	०	१२५	०
पांचमी ,,	१२५	०	२५०	०
छठ्ठी ,,	२५०	०	५००	०
सातमी ,,	५००	०	१०००	०

१० भुवनपति वाणव्यन्तर जोतीषी पहला दुसरा देवलोक	७ हाथकी	लाख जोजन
३-४ था देवलोक	६ हाथ	,,
५-६ ठा ,,	५ हाथ	,,
७-८ वा ,,	४ हाथ	,,
९-१०-११-१२-दे.	३ हाथ	,,
नौग्रैवेयक	२ हाथ	उत्तर वैक्रिय नहींकरे
च्यार अनुत्तर विमान	१ हाथ	,,
सर्वार्थसिद्ध वि०	१ हाथ उणो	,,
पृथ्वी, अप्, तेउ,	आंगुलके असंख्यातमो भाग	
वायुकाय...	... ,, ..	आंगु० संख्या० भाग
वनस्पतिकाय	१००० जोजन-साधिक (कमल)	उत्तर वैक्रिय नहीं
बे इंद्रिय	१२ जोजन	,,
ते इन्द्रिय	३ गाउ	,,
चौ इंद्रिय	४ गाउ	,,
तिर्यच पंचेंद्रिय ×	१००० जोजन	९०० जोजन
जलचर संज्ञी	१००० जोजन	,,

+ [illegible]

थलचर संज्ञी	६ गाउ	९०० जोजन
खेचर "	प्रत्येक धनुष्य	"
उरपरिसर्प "	१००० जोजन	"
भुजपरिसर्प "	प्रत्येक गाउ	"
जलचर असंज्ञी	१००० जोजन	वैक्रिय नहीं करे
थलचर "	प्रत्येक गाउ	"
खेचर "	प्र० धनुष्य	"
उरपरिसर्प "	प्र० जोजन	"
भुजपरिसर्प "	प्र० धनुष्य	"
मनुष्य	३ गाउ	लाख जोजन झाझेरी
असंज्ञी मनुष्य	आंगु० असं० भाग	उत्तर वैक्रिय करे नहि
देवकुरु, उत्तरकुरु	३ गाउ	"
हरिवास, रम्यकवास	२ गाउ	"
हेमवय, हेरण्यवय	१ गाउ	"
५६ अंतरद्वीप	८०० धनुष्य	"
महाविदेहक्षेत्र	५०० धनुष्य	लाख जोजन साधिक
सुखमा सुखमा आरो	लागते आरे ३ गाउ	उतरते २ गाउ
सुखम दुजो आरो	" २ गाउ	" १ गाउ
सुखमा दुखमा त्रीजो	" १ गाउ	" ५०० धनुष्य
दुखमा सुखमा चोथो	" ५०० धनुष्य	" ७ हाथ
दुखम पांचमो आरो	" ७ हाथ	" १ हाथ
दुखमा दुखमो छठो	" १ हाथ	" १ हाथ उणो

यह अवसर्पिणी कालकी अवगाहना है इसमे उलटी उत्स र्पिणीकी समझना। सिद्धोंके शरीरकी अवगाहना नहीं है परंतु आत्म प्रदेशने आकाश प्रदेशको अवगाहया (रोकाहै) इस अपेक्षा जघन्य १ हाथ ८ आंगुल, मध्यम ४ हाथ १६ आंगुल, उत्कृष्ट ३३३ धनुष्य ३२ आंगुल, इति.

(३) संघयण—नारकी और देवतामें संघयण नहीं है किंतु नारकीमें अशुभ पुद्गल और देवतामें शुभ पुद्गल संघयणपणे प्रणमते है. पांच स्थावर, तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यंच, असन्नी मनुष्यमें संघयण एक छेवट्टे पावे सन्नी मनुष्य और सन्नी तिर्यंचमें छ संघयण पावे युगलीआमें एक वज्रऋषभनाराचसंघयण और सिद्धोमें संघयण नहीं है. इति

(४) संठाण—[६] नारकी, पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यंच और असन्नी मनुष्यमें संठाण एक हुंडक पावे तथा देवता और युगलीआमें समचौरस संठाण पावे सन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्यमें छ संस्थान पावे. सिद्धोमें संस्थान नहीं है.

(५) कषाय—[४]-चोवीसों दंडकमें कषाय च्यारों पावे और सिद्ध अकषाई है।

(६) संज्ञा [४]-चोवीसों दंडकमें संज्ञा च्यारों पावे सिद्धोंमें संज्ञा नहीं है

(७) लेश्या—पहली दुजी नारकीमें कापोत लेश्या। तीजीमें कापोत और नील ले० चोथीमें नील ले० पांचमीमें नील और कृष्ण ले० छट्ठीमें कृष्ण ले० सातमीमें महाकृष्ण ले० १० भुवनपति, व्यंतर पृथ्वी, पाणी, वनस्पति, युगलीआमें लेश्या चार पावे कृष्ण, नील कापोत, तेजो ले० तेउकाय, वायुकाय,

तीन विकलेंद्रिय. असन्नी तीर्यंच, असन्नी मनुष्यमें लेश्या पावे तीन कृष्ण, नील कापोत ले० सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्यमें लेश्या ६ पावे. ज्योतीषी और १-२ देवलोकमें तेजोलेश्या ३-४-५ देवलोकमें पद्मलेश्या ६ से १२ देवलोकमें शुक्ललेश्या नौवाग्रैवेयक पांच अनुत्तर विमानमें परम शुक्ल लेश्या सिद्ध भगवान अलेशी है।

(८) इंद्रिय—[५] पांच स्थावरमें एक इंद्रिय, बे इंद्रियमें दो इंद्रिय. तेइंद्रियमें तीन इंद्रिय, चौरेंद्रिय चार इंद्रिय बाकी १६ दंडकमें पांच इंद्रियां है सिद्ध अनिंद्रिआ है।

(९) समुद्घात [७] नारकी और वायु कायमें समुद्घात पावे चार, वेदनी, कषाय, मरणंति, वैक्रिय। देवतामें और सन्नीतिर्यंचमें समुद्घात पावे पांच वेदनी, कषाय, मरणंति वैक्रिय, तेजस। चार स्थावर तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यंच, असन्नी मनुष्य और युगलीआमें समुद्घात पावे तीन वेदनी, कषाय, मरणंति। सन्नी मनुष्यमें समुद्घात पावे सात नवग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमानमें स० पावे तीन और वैक्रिय तेजसकी शक्ति है परन्तु करे नहीं सिद्धोंमें समुद्घात नहीं है।

(१०) सन्नी—नारकी देवता, सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य और युगलीआ ये सन्नी है पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी मनुष्य, असन्नी तिर्यंच ये असन्नी है। सिद्ध नो सन्नी नो असन्नी है।

(११) वेद—नारकी पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नीतिर्यंच और असन्नी मनुष्यमें नपुंसक वेद है। दश भुवनपति, व्यंतर, ज्योतीषी १-२ देवलोक और युगलीआमें वेद पावे

२ पुरुषवेद और स्त्रीवेद। तीजा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध विमानतक पुरुषवेद है सन्नी मनुष्य औ सन्नीतिर्यचमें वेद पावे तीन, सिद्ध अवेदी है।

(१२) पर्याप्ती—नारकी देवतामें पर्याप्ती पांच (मन और भाषा साथमें बांधे) पांच स्थावरमें पर्याप्ती पावे च्यार क्रमसे, तीन विकलेंद्रिय और असन्नी तिर्यचमें पर्याप्ती पावे पांच क्रमसे, असन्नी मनुष्यमें च्यारमें कुच्छ उणी क्रमसे; सन्नी मनुष्य सन्नी तिर्यच और युगलीआमें पर्याप्ती पावे छ. सिद्धोंमें पर्याप्ती नहीं है।

(१३) दिट्ठी—नारकी, भुवनपति, व्यंतर ज्योतिषी, बारहा देवलोक, सन्नीतिर्यच और सन्नी मनुष्यमें दृष्टि पावे तीनों, नवग्रैवेयकमें दो (सम्यक० मिथ्या०) अथवा तीन पावे. पांच अनुत्तर विमानमें एक सम्यकदृष्टि, पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य और ५६ अंतरद्वीपके युगलीआमें एक मिथ्यादृष्टि, तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यच और ३० अकर्मभूमि युगलीआमें द्रष्टि पावे दो (१) सम्यक्दृष्टि (२) मिथ्यादृष्टि. सिद्धोंमें सम्यकदृष्टि है.

(१४) दर्शन—नारकी, देवता और सन्नीतिर्यचमें दर्शन पावे तीन क्रमसे, पांच स्थावर बेइंद्रिय तेइंद्रियमें दर्शन पावे एक अचक्षु. चौरेन्द्रिय, असन्नीतिर्यच असन्नी मनुष्य और युगलीआमें दर्शन पावे दो क्रमसे। सन्नी मनुष्यमें दर्शन पावे च्यार, सिद्धोंमें केवल दर्शन है

(१५) नाण—नारकी देवता और सन्नीतिर्यचमें ज्ञान पावे तीन क्रमसे,। पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य और ५६ अंतरद्वीपका युगलीआमें ज्ञान नहीं है, तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्य-

च और ३० अकर्मभूमी युगलीयामें नाण पावेदो क्रमसे तथा सन्नी मनुष्यमें ज्ञान पावे पांच सिद्धोंमें केवल ज्ञान है.

(१६) अनाण—नारकी, देवतामें नवग्रैवयक तक, तिर्यच पंचेंद्री और सन्नी मनुष्यमें अनाण पावे तीन, पांच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यच असन्नी मनुष्य और युगलीआमें अनाण पावे दो क्रमसे पांच अनुत्तर विमान और सिद्धोंमें अनाण नहीं है।

(१७) जोग—नारकी और देवतामें जोग पावे ११ (४) मनके (४) वचनके, वैक्रिय १, वैक्रियका मिश्र १, कार्मणकाय योग, पृथ्वि, अप, तेउ, वनस्पति, असन्नी मनुष्यमें योग पावे तीन (औदारिक १ औदारिककामिश्र १ ९ कार्मण काययोग १) वायुकायमें पांच पावे (पूर्ववत् ३ और वैक्रिय, वैक्रियका मिश्र ज्यादा) तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यचमें योग पावे चार औदारिक १, औदारिकका मिश्र १, कार्मणकाय योग १, (और व्यवहार भाषा १) सन्नी तिर्यचमें योग पावे १३ (आहारिक और आहारिकका मिश्र वर्जके) सन्नी मनुष्यमें योग पावे पंदरा। युगलीआमें योग पावे अगीआरा (४ मनका ४ वचनका, औदारिक १, औदारिक मिश्र १, कार्मण काय योग १) सिद्धोंमें योग नहीं है

(१८) उपयोग—सर्व ठेकाणे दो दो पावे और जो उपयोग बारहा गीणना हो तो उपर लिखा पांच ज्ञान, तीन अज्ञान और चार दर्शनसे समझ लेना।

(१९) आहार—आहार व्याघात (अलोक) आश्रयी पांच स्थावर स्यात् तीन दिशि, स्यात् चार दिशि, स्यात् पांच

दिशि, निर्व्याघाताश्रयी चोवीस दंडकका जीवनियमा छ दिशिका आहार लेवे। सिद्ध अनाहारिक.

(२०) उत्पात–(१) नारकी, १० भुवनपतियोंसे ८ वां देवलोक तक, तथा चार स्थावर (वनस्पति वर्जके) तीन विकलेंद्रिय, सन्नी या असन्नी तिर्यंच, और असन्नी मनुष्य एक समयमें १-२-३ जाव संख्याता असंख्याता उपजे, वनस्पति एक समयमें १-२-३ जाव अनंता उपजे, नवमा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध तक तथा सन्नी मनुष्य और युगलीआ एक समयमें १-२-३ जाव संख्याता उपजे, सिद्ध एक समयमें १-२-३ जाव १०८ उपजे

(२१) ठीइ–स्थिति यंत्रसे जाणना.

नारकी	जघन्य	उत्कृष्ट
१ लो नारकी	१०००० वर्ष	१ सागरोपम
२ जी ,, ...	१ सागरोपम ...	३ सागरोपम
३ जी ,, ...	३ ,, ...	७ ,,
४ थी ,, ...	७ ,, ...	१० ,,
५ मी ,, ...	१० ,, ...	१७ ,,
६ ठी ,, ...	१७ ,, ...	२२ ,,
७ मी ,, ...	२२ ,, ...	३३ ,,
देवता.		
× चमरेंद्र दक्षिण तर्फ	१०००० वर्ष	१ सागरोपम

× दश भुवनपतिमें प्रथम असुरकुमारका दो इंद्र (१) चमरेंद्र (२) बलेंद्र चमरेंद्रकी राजधानी मेरुसे दक्षिण तरफ है और बलेंद्रकी राजधानी मेरुसे उत्तर तरफ है. ऐसे ही नागादि नवनिकायका इंद्र और राजधानी दक्षिण उत्तर समज लेना.

तस्सदेवी	१०००० वर्ष	३॥ सागरोपम
नागादि नौ इन्द्र दक्षिण तर्फके	,,	१॥ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥। ,,
बलेंद्र उत्तर तर्फके देव	,,	१ सागरोपम झाझेरा
तस्सदेवी	,,	४॥ पल्योपम
नागादि नव उत्तर तर्फ	,,	देशऊणी २ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	,, १ ,,
व्यंतर देवता	,,	१ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥ ,,
चंद्र विमानवासी देव	०। पल्योपम	१ पल्योपम+लाख वर्षाधिक
तस्सदेवी	,,	०॥ प०+५०००० वर्ष
सूर्य विमानवासी देव	,,	१ प०+ हजार वर्ष
तस्सदेवी	,,	०॥ प०+५०० ,,
ग्रह विमानवासी देव	,,	१ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥ ,,
नक्षत्र विमा० देव	,,	०॥ ,,
तस्सदेवी	०। पल्योपम	०। ,, झाझेरी
तारा विमा० देव	१/८ ,,	०। ,, ०
तस्सदेवी	,, ,,	१/८ ,, साधिक
पहला देवलोकके देव	१ पल्योपम	२ सागरोपम
तस्स परिग्रहिता देवी	,,	७ पल्योपम
तस्स अपरिग्रहिता देवी	,,	५० ,,
दुसरे देवलोकके देव	१ पल्योपम झाझेरा	२ सा० झाझेरा
तस्स परिग्रहिता देवी	,,	९ पल्योपम
तस्स अपरिग्रहता देवी	,,	५५ ,,
तीजा देवलोकके देव	२ सागरोपम	७ सागरोपम

जलचर संज्ञी	अंतर्मुहूर्त	क्रोड पूर्व
थलचर ,,	,,	३ पल्योपम
खेचर ,,	,,	पल्यो० असं० भाग
उरपरिसर्प ,,	,,	क्रोड पूर्व
भुजपरिसर्प ,,	,,	,,
असन्नि मनुष्य	,,	अंतर्मुहूर्त
सन्नि ,,	घटते आरे	उतरते आरे
*पहलो आरो	३ पल्योपम	२ पल्योपम
दूजो ,,	२ ,,	१ ,,
तीजो ,,	१ ,,	१ क्रोड पूर्व
चौथो ,,	क्रोड पूर्व	१२० वर्ष
पांचमो ,,	१२० वर्ष	२० ,,
छट्ठो ,,	२० ,,	१६ ,,

युगलीया.	जघन्य.	उत्कृष्ट.
देवकुरु-उत्तरकुरु	देशऊणा ३ पल्यो०	३ पल्योपम
हरिवास-रम्यकवास	,, २ ,,	२ ,,
हेमवय-एरण्यवय	,, १ ,,	१ ,,
५६ अंतरद्वीप	पल्यो० असं० भाग	पल्यो० असं० भाग
महाविदेह क्षेत्र	अंतर्मुहूर्त	क्रोड पूर्व

सिद्ध-सादि अनंत। अनादि अनंत।

२२ मरणः—चौवीसों दंडकमें समोहीय, असमोहीय, दोनों मरण मरे।

२३ चवनः—उत्पन्न होनेकी माफक मरण लेना।

२४ गति आगतिः—दंडकमें [illegible] जानेकी तथा आनेकी

* [illegible]

८ मा देवलोक तक दो गतिसे आवे, दो गतिमें जाय। दंडकाश्रयी दो दंडक (मनुष्य और तिर्यंच) के आवे और दो दंडकमें जावे। सातमी नारकी दो गतिसे (मनुष्य, तिर्यंच) आवे, एक गतिमें जावे (तिर्यंचमें), दंडकाश्रयी २ दंडकको (मनुष्य, तिर्यंच) आवे, एक दंडक तिर्यंचमें जावे। दश भुवनपति, व्यंतर, जोतिषी, १-२ देवलोक दो गति (मनुष्य, तिर्यंच)से आवे, और दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) में जावे, और दंडकाश्रयी २ दंडक (मनुष्य, तिर्यंच) को आवे, और पांच दंडकमें जावे (मनुष्य, तिर्यंच, पृथ्वि, पाणी, वनस्पति) ९ वा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध विमानके देव, एक गति (मनुष्य) मेंसे आवे एक गतिमें जावे दंडकाश्रयी एक दंडक (मनुष्य को आवे और एक दंडकमें जावे (मनुष्यमें)।

पृथ्वि, पाणी, वनस्पति, तीन गति (मनुष्य, तिर्यंच, देवता) से आवे, और २ गतिमें जावे (मनुष्य तिर्यंच), दंडकाश्रयी २३ दंडक (नारकी वर्जी को आवे, और १० दंडकमें जावे (५ स्थावर, ३ विकलेंद्रिय, मनुष्य, तिर्यंच) तेउ वायु दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे, और एक गति तिर्यंच) में जावे, दंडकाश्रयी दश दंडक (पुर्ववत्) को आवे और ९ दंडक (मनुष्य वर्जके) में जावे। तीन विकलेंद्रिय दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे, और दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) में जावे, दंडकाश्रयी दश दंडक (पुर्ववत्) को आवे और दश दंडकमें जावे। असन्नि तिर्यंच दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे और च्यार गतिमें जावे, दंडकाश्रयी दश (पुर्ववत्) आवे और २२ (जोतिषी वैमानिक वर्जी) दंडकमें जावे। सन्नि तिर्यंच च्यार गतिमेंसे आवे और च्यार गतिमें जावे दंडकाश्रयी २४ को आवे और २४ में जावे। असन्नि मनुष्य दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) को आवे दो गतिमें जावे। दंडकाश्रयी ८ दंडक (पृथ्वि, पाणी, वनस्पति ३

विकलेंद्रिय, मनुष्य, तिर्यंच) को आवे और दशमें जा(दश पूर्ववत्)

सन्नि मनुष्य– चार गतिमेंसे आवे और चार गतिमें जावे अथवा सिद्ध गतिमें जावे, दंडकाश्रयी २२ (तेउ, वायु, वर्जी) में से आवे और २४ में जावे तथा सिद्धमें जावे.। ३० अकर्मभूमि युगलिया दोगति (मनुष्य तिर्यंच) मेंसे आवे एक गति (देवता) में जावे दंडकाश्रयी दो दंडकसे आवे और १३ दंडक (देवतामें) जावे.। ५६ अंतर द्वीप दो गतिमेंसे आवे एक गतिमें जावे. दंडकाश्रयी दो दंडकको आवे और ११ दंडक (१० भुवनपति, व्यंतर) में जावे.

सिद्धोंमे आगत एक मनुष्यकी गति नहीं दंडकाश्रयी मनुष्य दंडकसे आवे. इति.

२५ प्राण– (अन्य स्थानसे लीखते है) प्राण दश हैं (१) श्रोतेंद्रिय बलप्राण (२) चक्षु इंद्रियबलप्राण (३) घ्राणेंद्रिय० (४) रसेन्द्रिय० (५) स्पर्शेन्द्रिय० (६) मन० (७) वचन० (८) काय० (९) श्वासोश्वास० (१०) आयु०

नारकी देवता सन्नि मनुष्य, सन्नि तिर्यंच और युगलीओमें प्राण पावे दस. पांच स्थावरमें प्राण पावे चार–(१) स्पर्श० (२) काय० (३) श्वासोश्वास० (४) आयु० बेइंद्रियमें प्राण पावे ६. (५) पूर्ववत् १ रस० २ वचन० तेइंद्रियमें प्राण पावे ७. (६) पूर्ववत् १ घ्राण० चौरेन्द्रियमें प्राण ८. (७) पूर्ववत् १ चक्षु०

असन्नि तिर्यंच पंचेन्द्रियमें प्राण पावे ९–८ पूर्ववत्, १ श्रोते० असन्नि मनुष्यमें प्राण पावे ८ में कंइकउणा–५ इन्द्रिय० १ काय० १ आयु० १ श्वास० अथवा उश्वास० सिद्धोंमें प्राण नही है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चं

थोकडा नम्बर ५

चोवीस दंडकमेंसे कितने दंडक किस स्थानपर मिलते हैं.

दंडक स्थान

(प्रश्न) { एक दंडक / किस जगह पावे } नारकीमें पावे
(प्र) दो दंडक ,, (उ) भावकमें पावे-२०+२१ मां
(प्र) तीन दंडक ,, (उ) तिनविकलेंद्रियमें पावे-१७+१८+१९ मां
(प्र) चार दंडक ,, (उ) सत्यमें पावे १२+१३+१४+१५मां
(प्र) पांच दंडक ,, (उ) एकेंद्रियमें ,, १२+१३+१४+१५+१६
(प्र) छ दंडक ,, (उ) तेजोलेश्याका अलब्धिआमें यानि जीस दंडकमें तेजोलेश्या न मिले-१-१४-१५--१७-१८-१९ मा
(प्र) सात दंडक ,, (उ) वैक्रियका अलब्धिआमें ४ स्थावर ३ वि०
(प्र) आठ दंडक ,, (उ) असंज्ञीमें ५ स्थावर ३ वि०
(प्र) नव दंडक ,, (उ) तिर्यंचमें ५ स्थावर ४ त्रस
(प्र) दश दंडक ,, (उ) भुवनपतिमें
(प्र) अगीआर दंडक ,, (उ) नपुंसकमें १० औदारीक १ नारकी
(प्र) बारहा ,, ,, (उ) तीच्छालोकमें १० भु० व्यंतर ज्योतिषी
(प्र) तेरहा ,, ,, (उ) देवतामें
(प्र) चौद ,, , (उ) पकत वैक्रिय शरीरमें १३ वैक्रिय १ नारकी
(प्र) पंदर ,, ,, (उ) स्त्री वेदमें
(प्र) सोलह ,, ,, (उ) संज्ञि तथा मनयोगमें
(प्र) सत्तरा ,, ,, (उ) मनुष्य वैक्रिय शरीरमें
(प्र) अठारा ,, ,, (उ) तेजोलेश्यामें ६ वर्जके
(प्र) ओगणीस ,, (उ) त्रसकायमें ५ स्थावर वर्जके
(प्र) बीस (उ) [illegible] उत्कृष्ट अवगाहनावालोंमें [illegible]
(प्र) एकवीस (उ) [illegible] ३ देवता वर्जके
(प्र) बावीस (उ) [illegible] वर्जके

(प्र) तेवीसमें ,, ,, (उ) भगवानका समोसरणमें १ नारकी वर्जके
(प्र) चौवीसमें ,, ,, (उ) समुचय जीवमें

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर. ६

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तीजा. (महादंडक)

संख्या.	मार्गणाका ९८ बोल.	जीवका भेद १४	गुणस्थान १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६
१	सर्वस्तोक गर्भज मनुष्य.	२	१४	१५	१२	६
२	मनुष्यणी संख्यात गुणी.	२	१४	१३	१२	६
३	बादर तेउकायके पर्याप्ता असं० गुण०	१	१	१	३	३
४	पांच अणुत्तर वैमानके देव ,,	२	१	११	६	१
५	ग्रैवेयक उपरकी त्रिकके देव संख्या० गु०	२	२।३	११	९	१
६	,, मध्यमकी ,,	२	२।३	११	९	१
७	,, नीचेकी ,, ,,	२	२।३	११	९	१
८	बारहवें देवलोकके देव संख्या० गु०	२	४	११	९	१
९	ग्यारवें ,,	२	४	११	९	१
१०	दशवें ,, ,,	२	४	११	९	१
११	नौवा ,, ,,	२	४	११	९	१
१२	सातवी नरकके नेरिया असं० गु०	२	४	११	९	१
१३	छट्ठी	२	४	११	९	१
१४	आठवे देवलोकके देव	२	४	११	९	१

१५	सातवा देवलोकके देव अस० गु०	२	४	११	९	१
१६	पांचवी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	२
१७	छठे देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
१८	चोथी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	१
१९	पांचवे देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२०	तीजी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	२
२१	चोथे देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२२	दुजी नरकके नैरिया ,,	२	४	११	९	१
२३	तीजा देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२४	समुत्सम मनुष्य ,,	१	१	३	४	३
२५	दुजा देवलोकके देव ,,	२	४	११	९	१
२६	,, ,, की देवी संख्या० गु०	२	४	११	९	१
२७	पहले देवलोकके देव अस० गु०	२	४	११	९	१
२८	,, ,, की देवी स० गु०	२	४	११	९	१
२९	भुवनपति देव अस० गु०	३	४	११	९	४
३०	,, देवी संख्या० गु०	२	४	११	९	४
३१	पहली नरकके नैरिया असं० गु०	३	४	११	९	१
३२	खेचर पुरुष अस० गु०	२	५	१३	९	६
३३	,, स्त्री संख्या० गु०	२	५	१३	९	६
३४	थलचर पुरुष ,	२	५	१३	९	६
३५	,, स्त्री ,	२	५	१३	९	६
३६	जलचर पुरुष ,,	२	५	१३	९	६
३७	, स्त्री	२	५	१३	९	६
३८	व्यंतरदेव .	३	४	११	९	४

६३	बादर वाउकायका अप॰ असं॰ गु	१	१	३	३	३
६४	सुक्ष्म तेउकायका अप॰ ,, ,,	१	१	३	३	३
६५	सुक्ष्म पृथ्विकायका अप॰ विशेषाः	१	१	३	३	३
६६	सुक्ष्म अप्कायका अप॰ वि॰	१	१	३	३	३
६७	सुक्ष्म वायुकायका अप॰ वि॰	१	१	३	३	३
६८	सुक्ष्म तेउकायका पर्याप्ता सं॰ गु॰	१	१	१	३	३
६९	सुक्ष्म पृथ्विकायका पर्याप्ता वि॰ ..	१	१	१	३	३
७०	सुक्ष्म अप्कायका पर्याप्ता वि॰	१	१	१	३	३
७१	सुक्ष्म वायुकायका पर्याप्ता वि॰	१	१	१	३	३
७२	सुक्ष्म निगोदका अपर्याप्ता असं॰ गु॰	१	१	३	३	३
७३	सुक्ष्म निगोदका पर्याप्ता सं॰ गु॰	१	१	१	३	३
७४	अभव्य जीव अनंत गु॰ ..	१४	१	१३	६	६
७५	पडवाइ सम्यग्दृष्टी अनंत गु॰ ...	१४	१४	१५	१२	६
७६	सिद्ध भगवान अनंत गु॰ ...	०	०	०	०	०
७७	बादर वनस्पति॰ पर्याप्ता अनंत गु॰	१	१	१	३	३
७८	बादर पर्याप्ता वि॰	६	१४	१४	१२	६
७९	बादर वनस्पति अपर्याप्ता असं॰ गु॰	१	१	३	३	४
८०	बादर अपर्याप्ता वि॰	६	३	५	८।३	६
८१	समुच्चय बादर॰ वि॰	१२	१४	१५	१२	६
८२	सुक्ष्म वनस्पति अपर्याप्ता असं॰ गु॰	१	१	३	३	३
८३	सुक्ष्म अपर्याप्ता वि॰ ..	१	१	३	३	३
८४	सुक्ष्म वनस्पति पर्याप्ता सं॰ गु॰ ...	१	१	१	३	३
८५	सुक्ष्म पर्याप्ता॰ वि॰ .	१	१	१	३	३
८६	समुच्चय सुक्ष्म॰ वि॰	२	१	३	३	३

८७ भवसिद्धि जीव वि०	१४	१४	१५	१२	६
८८ निगोदका जीव वि०	४	१	२	२	३
८९ वनस्पति जीव वि०	४	१	३	३	४
९० एकेंद्रिय जीव वि०	४	१	५	३	४
९१ तिर्यंच जीव वि०	१४	५	१३	९	६
९२ मिथ्यात्वि जीव वि०	१४	१	१३	९	६
९३ अव्रती जीव वि०	१४	४	१३	९	६
९४ सकषायी जीव वि०	१४	१०	१५	१०	६
९५ छद्मस्थ जीव वि०	१४	१२	१५	१०	६
९६ सयोगी जीव वि०	१४	१३	१५	१२	६
९७ संसारी जीव वि०	१४	१४	१५	१२	६
९८ समुच्चय जीव वि०	१४	१४	१५	१२	६

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—※◎※—

थोकडा नम्बर ७

सूत्रश्री पन्नवणाजी पद ६.

(विरहद्वार)

जीस योनीमें जीव था वह वहां से चव जानेके बाद उस योनीमें दुसरा जीव कीतने कालसे उत्पन्न होते है उसकों विरह कहते है। जघन्य तो सर्व स्थानपर एक समयका विरह है उत्कृष्ट अलग अलग है जैसे—

(१) समुच्चय च्यार गति संज्ञीमनुष्य और संज्ञी तीर्यंचमें उत्कृष्ट विरह १२ मुहूर्तका है.

(२) पहली नरक दश भुवनपति, व्यंतर, ज्योतीषी, सौधर्मेशान देव और असंज्ञी मनुष्यमें २४ मुहुर्त. दुजी नरकमें सात दिन, तीजी नरकमें पंद्रा दिन, चोथी नरकमें एक मास, पांचवी नरकमें दो मास, छठी नरकमें च्यार मास, सातवी नरक सिद्धगति और चौसठ इन्द्रोंमें विरह छे मासका है.

(३) तीजा देवलोकमें नौदिन वीस महुर्त, चोथा देवलोकमें बारहा दिन दश मुहुर्त, पांचवा देवलोकमें साढावावीस दिन, छठा देवलोकमें पैतालीस दिन, सातवा देवलोकमें एसी दिन, आठवा देवलोकमे सो दिन नौवा दशवा देवलोकमें सेंकडो मास, इग्यारवा बारहा देवलोकमें सेकडों वर्षोंका, नौग्रैवेयक पहले त्रीकमें सख्याते सेकडों वर्ष, दुसरी त्रीकमें सख्याते हजारों वर्ष, तीसरी त्रीकमें सख्याते लाखों वर्ष, च्यारानुत्तर वैमानमें पल्योपमके असंख्यातमे भाग, सर्वार्थसिद्ध वैमानमें पल्योपमके सख्यातमे भाग।

(४) पांच स्थावरोंमें विरह नहीं है तीन विकलेन्द्रिय. असंज्ञी तीर्यंचमें अंतरमुहुर्त.

(५) चन्द्र सूर्यके ग्रहणाश्रयी विरह पडे तो जघन्य छे मास उत्कृष्ट चन्द्रके बेंयालीस मास, सूर्यके अडतालीस वर्ष।

(६) भरतेरवतक्षेत्रापेक्षा, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका आश्रयी जघन्यतो ६३००० वर्ष और अरिहंत, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव आश्रयी जघन्य ८४००० वर्ष उत्कृष्ट सबको देशोन अठारा कोडाकोड सागरोपम हा । इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

—✻—

थोकडा नम्बर ८

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १२ वा उद्देशा ५ वां.

(रूपी अरूपीके १०६ बोल.)

रूपी पदार्थ दो प्रकारके होते हैं एक अष्ट स्पर्शवाले जीनसे कीतनेक पदार्थोंको चरम चक्षुवाले देख सके. दुसरे च्यार स्पर्शवाले रूपी जीनोंको चरम चक्षुवाले देख नही सके. अतिशय ज्ञानी ही जाने। अरूपी-जीनोंको केवलज्ञानी अपने केवलज्ञान-द्वारा ही जाने-देखे.

(१) आठ स्पर्शवाले रूपीके संक्षिमसे १५ बोल है यथा-छे द्रव्यलेश्या (कृष्ण, निल, कापोत, तेजस, पद्म, शुक्ल) औदारीक शरीर, वैक्रियशरीर, आहारकशरीर, तेजसशरीर एवं १० तया समुचय, घणोदधि, घणवायु, तणवायु, बादर पुद्‌गलोंका स्कन्ध और कायाका योग एवं १५ बोलमें वर्णादि २० बोल पावे। ३००

(२) च्यार स्पर्शवाले रूपीके ३० बोल है. अठारा पाप, आठ कर्म, मन योग, वचन योग, सुक्ष्मपुद्‌गलोंका स्कन्ध, और कारमणशरीर एवं ३० बोलमें वर्णादि १६ बोल पावे। ४८० बोल.

(३) अरूपीके ६१ बोल है. अठारा पापका त्याग करना, बारहा उपयोग, कृष्णादि छे भावलेश्या, च्यार संज्ञा (आहार० भय० मैथुन० परिग्रह०) च्यार मतिज्ञानके भांगा (उग्गह ईहा आपाय० धारणा) च्यार बुद्धि (उत्पातिकी, विनयकी, कर्मकी, पारिणामिकी) तीन दृष्टि (सम्यक्‌दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि) पांच द्रव्य " धर्मास्ति, अधर्मास्ति, आकाशास्ति, जीवास्ति, और कालद्रव्य " पांच प्रकारसे जीवकी शक्ति " उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषार्थ." एवं ६१ बोल अरूपीके है। इति.

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नं ६

श्री पन्नवणा सूत्र पद ३ जो.

(दिशाणुवइ)

दिशाणुवइ-२४ दंडकके जीव किस दिशामें ज्यादा है ओर किस दिशामें कम है यो इस थोकडे द्वारे बतलावेंगे ।

जहां पाणी होता है वहां सात बोल होते हैं जिसका नाम समुचय जीव, अपकाय, वनस्पतिकाय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय चौरेंद्रिय, पंचेंद्रिय. इन सात बोलोंकी शास्त्रमें अलग अलग व्याख्या करी है यद्यपि एक सरिखा होनेसे यहां एकठा लीखते है. सबसे स्तोक ७ बोलोंका जीव पश्चिम दिशामें=कारण जंबुद्वीपकी जगतिसे पश्चिम दिशा लवण समुद्रमें १२००० जोजन जावे तब १२००० जोजनका लंबा चोडा गौतम द्वीप आवे, वह पृथ्वीकाय में है । इस लीये पाणीका जीव कमती है. पाणीका जीव कम होनेसे सात बोलोंका जीवभी कम है उनसे पूर्व दिशा विशेषाः कारण गौतम द्वीपा नहीं है. उनसे दक्षिण दिशा विशेषाः कारण सूर्य चंद्रका द्वीपा नहीं है. उनसे उत्तर दिशा विशेषाः मान सरोवर तलावकी अपेक्षा (देखो ज्योतिषीका बोलमें).

पृथ्वियकायका जीव सबसे स्तोक दक्षिण दिशामें कारण भुवनपतिओंका चार क्रोड छ लाख भुवनकी पोलार है इस लिये पृथ्वीकायका जीव कम है उनसे उत्तर दिशा विशेषाः कारण भुवनपतिओंका तीन क्रोड छासठ लाख भुवन है पोलार कम है

उनसे पूर्वमें विशेषाः कारण सूर्य चन्द्रका द्वीप पृथ्वीमय है. उनसे पश्चिममें विशेषाः कारण गौतम द्वीप पृथ्वीमय है.

तेउकाय, मनुष्य, और सिद्ध सबसे स्तोक दक्षिण उत्तरमें कारण भरतादि क्षेत्र छोटा है. उनसे पूर्व दिशा संख्यातगुणा कारण महाविदेह क्षेत्र बडा है. उनसे पश्चिम दिशा विशेषाः कारण सलीलावती विजया १००० जोजनकी ऊंडी है. जिसमें मनुष्य घणा, तेउकाय घणी और सिद्ध भी बहोत होते हैं.

वायुकाय, और व्यंतरदेव सबसे स्तोक पूर्व दिशामें कारण धरतीका कठणपणा है. उनसे पश्चिम दिशा विशेषाः कारण सलीलावती विजया है. उनसे उत्तर दिशा विशेषाः कारण भुवनपतियोंका ३ क्रोड और ६६ लाख भुवन है. उनसे दक्षिण दिशा विशेषाः कारण भुवनपतिका ४ क्रोड और ६ लाख भुवन है (पोलारकी अपेक्षा)

भुवनपति सबसे स्तोक पूर्व पश्चिममें कारण भुवन नहीं है आना जानासे लाधे. उनसे उत्तरमें असंख्यात गुणा कारण ३ क्रोड और ६६ लाख भुवन है. उनसे दक्षिणमें असंख्यात गुणा कारण ४ क्रोड और ६६ लाख भुवन है. भुवनोंमें देव ज्यादा है.

जोतीषीदेव सबसे थोडा पूर्व पश्चिममें कारण उत्पन्न होनेका स्थान नहीं है उनसे दक्षिणमे विशेषाः उत्पन्न होनेका स्थान है. उनसे उत्तरमें विशेषाः कारण मानसरोवर तलाव=जम्बुद्वीपकी जगतिसें उत्तरकी तरफ असंख्याता द्वीप समुद्र जावे तब अरुणावर नामका द्वीप आवे जिसके उत्तरमें ४२००० जोजन जावे तब मानसरोवर तलाव आता है, यह तलाव बडा शोभनीक और वर्णन करने योग्य है. और उनके अंदर बहोतसे मच्छ कच्छ जलचर जीवोंकों देखके निआणा कर मरके जोतीषी होते हैं इसलिये उत्तर दिशामें जोतीषीदेव ज्यादा है.

४	अविराधि श्रावक	सौधर्मकल्प	अच्युतकल्प
५	विराधि श्रावक	भुवनपति	ज्योतीषीमें
६	असन्नी तीर्यच	,,	व्यंतरदेवोंमें
७	कन्दमूल खानेवाले तापस	,,	ज्योतीषीमें
८	हांसी ठठा करनेवाले मुनि (कन्दर्पीया)	,,	सौधर्मकल्प
९	परिव्राजक सन्यासी तापस	,,	ब्रह्मदेवलोक
१०	आचार्यादिका अवगुण बोलनेवाले किल्बिषीया मुनि	,,	लांतकमें
११	सन्नी तीर्यच	,,	आठवा देवलोक
१२	आजीविया साधु गोशालाके मतका	,,	अच्युतकल्प
१३	यंत्र मंत्र करनेवाले अभीयोगी साधु	,,	,,
१४	स्वलींगी दर्शन ववन्नगा	,,	नौ ग्रैवेयक

चौदवां बोलमें भव्य जीव है पहले बोलमें भव्याभव्य दोनों है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—✻—

थोकडा नम्बर १३

सूत्र श्री ज्ञाताजी अध्ययन ८ वां

तीर्थंकर नाम बन्धके २० कारण।

(१) श्री अरिहन्त भगवानका गुण कीर्तन करनेसे।

(२) श्री सिद्ध भगवानका गुण कीर्तन करनेसे।

(३) श्री पांच समिति तीन गुप्ति यह अष्ट प्रवचनकी माता हैं. इनोंको सम्यक्प्रकारसे आराधन करनेसे।
(४) श्री गुणवन्त गुरुश्री महाराजका गुण करनेसे।
(५) श्री स्थिवरजी महाराजके गुणस्तवनादि करनेसे।
(६) श्री बहुश्रुती-गीतार्थोंका गुणस्तवनादि करनेसे।
(७) श्री तपस्वीजी महाराजके गुणस्तवनादि करनेसे।
(८) सीखा हुवा ज्ञानको वारंवार चिन्तवन करनेसे।
(९) दर्शन (सम्यक्त्व) निर्मल आराधन करनेसे।
(१०) ज्ञान तथा १३४ प्रकारके विनय करनेसे।
(११) कालोकाल प्रतिक्रमण करनेसे।
(१२) लिये हुवे व्रत-प्रत्याख्यान निर्मल पालनेसे।
(१३) धर्मध्यान-शुक्लध्यान ध्याते रहनेसे।
(१४) बारह प्रकारकी तपश्चर्या करनेसे।
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देनेसे।
(१६) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे।
(१७) चतुर्विध संघको समाधि देनेसे।
(१८) नये नये अपूर्व ज्ञान पढनेसे।
(१९) सूत्र सिद्धान्तकी भक्ति-सेवा करनेसे।
(२०) मिथ्यात्वका नाश और जिनशासनका उद्योत करनेसे।

ऊपर लिखे बीस बोलोंका सेवन करनेसे जीव कर्मोंको [illegible]कोंको क्षय करदेते हैं. और उत्कृष्ट रसायन (भावना) [illegible]ते जीव तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन करलेते हैं. जीतने जीव [illegible]र हुवे है या होंगे यह सब इन बीस बोलोंका सेवन कीया [illegible] करके इति।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १४

(जलदी मोक्ष जानेके २३ बोल)

(१) मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाला जलदी २ मोक्ष जावे
(२) तीव्र-उग्र तपश्चर्या करनेसे ,, ,,
(३) गुरुगम्यतापूर्वक सूत्र-सिद्धान्त सुने तो जलदी २ ,,
(४) आगम सुनके उनोंमें प्रवृत्ति करनेसे ,, ,,
(५) पांचो इन्द्रियोंका दमन करनेसे ,, ,,
(६) छे कायाको जानके उन जीवोंकी रक्षा करे तो ज० ,,
(७) भोजन समय साधु-साध्वीयोंकी भावना भावे तो जलदी २ मोक्ष जावे।
(८) आप सद्ज्ञान पढे और दुसरोंको पढावे तो ज० मोक्ष जा
(९) नव निदान न करे तथा नौकोटी प्रत्याख्यान करनेसे ,,
(१०) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे जलदी २ मोक्ष जावे
(११) कषायको निर्मूल करे पतली पाडे तो ,, ,,
(१२) छती शक्ति क्षमा करे तो ,, ,,
(१३) लगा हुवा पापकी शीघ्र आलोचना करनेसे ज० ,,
(१४) ग्रहन किये हुये नियम अभिग्रहको निर्मल पाले तो जलदी २ मोक्ष जावे।
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देनेसे जलदी २ मोक्ष जावे
(१६) सद्धे मनसे शील-ब्रह्मचर्य व्रत पालनेसे ज० ,,
(१७ निर्वद्य पापरहित मधुरवचन बोलनेसे ,
(१८) लिया हुवा संयमभारको निरतीचार पहुंचानेसे जलदी २ मोक्ष जावे।

(१९) धर्मध्यान-शुक्लध्यान ध्यानेसे जल्दी २ मोक्ष जावे।
(२०) एक मासमें छे छे पौषध करनेसे ,, ,,
(२१) उभयकाल प्रतिक्रमण करनेसे ,, ,,
(२२) रात्रीके अन्तमें धर्मजागना (तीन मनोरथ) करे तो जल्दी २ मोक्ष जावे।
(२३) आराधि हो आलोचना कर समाधि मरन मरे तो जल्दी २ मोक्ष जावे।

इन तेवीस बोलोंको पहले सम्यक्प्रकारसे जानके सेवन करनेसे जीव जल्दी २ मोक्ष जाते हैं इति।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम् ॥

थोकडा नम्बर १५

(परम कल्याणके ४० बोल.)

जीवों के परम कल्याण के लिये आगमोंमें अति उपयोगी बोलोंका संग्रह किया जाता है.

(१) समकित निर्मल पालनेसे 'जीवोंका परमकल्याण' होता है। राजा श्रेणिक कि माफीक (श्री स्थानायांग सूत्र)

(२) तपश्चर्या कर निदान न करनेसे जीवोंका " परम कल्याण होता है " तांमली तापसकि माफीक (सूत्र श्री भगवतीजी)

(३) मन वचन कायाके योगोंको निश्चल करनेसे जीवोंका " परम० " गजसुकमाल मुनिके माफीक (श्री अंतगड सूत्र)

(४) समामयदे क्षमा धर्मको धारण कर नेसे जीवोंके " परम० " अर्जुनमालीके माफीक श्री अंतगड सूत्र।

(५) शीलमहाव्रत निर्मला पालनेसे जीवोंके "परम०" श्री गौतमस्वामिजीकि माफीक (श्री भगवतीजी सूत्र)

(६) प्रमाद त्याग अप्रमादि होनेसे जीवोंके "परम०" श्री शैलकराजमुनिकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(७) पांचों इन्द्रियोंका दमन करनेसे जीवोंके "परम०" श्री हरकेशी मुनिराजकि माफीक (श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र)

(८) अपने मित्रोंके साथ मायावृति न करनेसे जीवोंके "परम०" मल्लिनाथजीके पूर्वभवके छे मित्रोंकि माफीक (ज्ञातासूत्र)

(९) धर्म चर्चा करनेसे जीवोंका "परम०" जैसे केशी-स्वामी गौतमस्वामीकी माफीक (श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र)

(१०) सच्चा धर्मपर श्रद्धा रखनेसे जीवोंका "परम०" वरुणनागनत्तुवाके बालमित्रकी माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(११) भगवंत जीवोंपर करुणाभाव रखनेसे जीवोंके "परम०" मेघकुमारके पूर्व हाथीके भवकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(१२) सत्य बात निःशंकपणे करनेसे जीवोंका "परम०" आनन्द श्रावक और गौतमस्वामीके माफीक (उपासक दशांग सूत्र०)

(१३) आपना समय नियम-व्रतमें प्रवृति रखनेसे "परम०" अम्बडपरिव्राजकके सातसे शिष्योंकि माफीक (श्री उववाइजी सूत्र०)

(१४) सर्व मन शील पालनेसे जीवोंका "परम०" सुदर्शन सेठकी माफीक (सुदर्शन चरित्र)

(१५) परिग्रहकी ममत्वता त्याग करनेसे जीवोंका "परम०" कपिल ब्राह्मणकि माफीक (श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र)

(१६) उदार भावसे सुपात्र दान देनेसे जीवोंका "परम०" सुबाहुकुमारादिकि माफीक (श्री विपाक सूत्र)

(१७) अपने वचनोंसे गीरते हुवे जीवोंके स्थिर करनेसे 'परम०' राजमति और रहनेमिकी माफीक (श्री उत्तराध्ययन सूत्र०)

(१८) उग्र तपश्चर्या करते हुवे जीवोंका 'परम०' धन्ना-मुनिकि माफीक (श्री अनुत्तर उववाइ सूत्र)

(१९) अग्लानपणे गुरुवादिकिवैयावच्च करनेसे 'परम०' पन्थकमुनिकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२०) सदैव अनित्य भावना भावनेसे जीवोंका 'परम०' भरतचक्रवर्तिकि माफीक (श्री जम्बुद्विपप्रज्ञप्ति सूत्र)

(२१) प्रणामोंकि लहरोंको रोकनेसे जीवोंके 'परम०' प्रसन्नचन्द्रमुनिकी माफीक (श्रेणिकचरित्रमें)

(२२) सत्यज्ञानपर श्रद्धा रखनेसे जीवोंके 'परम०' अर्हन्नक श्रावककी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२३) चतुर्विधसंघकि वैयावच्च करनेसे जीवोंके 'परम०' सनत्कुमार चक्रवर्तिके पुर्वके भवकि माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(२४) चढते भावोंसे मुनियोंकि वैयावच्च करनेसे 'परम०' बाहुबलजीकि पुर्वभवकी माफीक (श्री ऋषभचरित्र)

(२५) शुद्ध अभिग्रह करनेसे जीवोंके 'परम०' पांच पांडवोंकि माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२६) धर्म दलाली करनेसे जीवोंके "परम०" श्रीकृष्ण नरेशकि माफीक (श्री अंतगडदशांग सूत्र)

(२७) सूत्रज्ञानकि भक्ति करनेसे जीवोंके "परम०" उदाइराजाकि माफिक (श्री भगवतीसूत्र)

(२८) जीवदया पाले तो जीवोंके " परम० " श्री धर्मरूची अनगारकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२९) व्रतोंसे गीरजानेपरभी चेतजानेसे " परम० " अरणिकमुनिकी माफीक। (श्री आवश्यक सूत्र)

(३०) आपत्त आनेपरभी धैर्यता रखनेसे ' परम० ' खंधक मुनिकी माफीक। (श्री आवश्यक सूत्र)

(३१) जिनराज देवोंकि भक्ति और नाटक करनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रभावती राणीकी माफीक (श्री उत्तराध्ययन सूत्र)

(३२) परमेश्वरकी त्रिकाल पुजा करनेसे जीवोंके ' परम० ' शान्तिनाथजीके पुर्वभव मेघरथ राजाकी माफीक (शान्तिनाथ चरित्र)

(३३) छती शक्ति क्षमा करनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रदेशी राजाकी माफीक (श्री रायपसेनी सूत्र)

(३४) परमेश्वरके आगे भक्ति सहित नाटक करनेसे ' परम० ' रावण राजाकी माफीक (त्रिषष्ठीशलाका पुरुष चरित्र)

(३५) देवादिके उपसर्ग सहन करनेसे ' परम० ' कामदेव श्रावककी माफीक (श्री उपासक दशांग सूत्र)

(३६) निर्भीकतासे भगवानको वन्दन करनेको जानेसे 'परम०' श्री सुदर्शन शेठकी माफीक (श्री अन्तगड दशांग सूत्र)

(३७) चर्चा कर वादीयोंको पराजय करनेसे ' परम० ' मंडुक श्रावककी माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(३८) शुद्ध भावोंसे चैत्यवन्दन करनेसे जीवोंके ' परम० ' जगवल्लभाचार्यकी माफीक (पुजा प्रकरण)

(३९) शुद्ध भावोंसे प्रभुपुजा करनेसे जीवोंके ' परम० ' नागकेतुकी माफीक (श्री कल्पसूत्र)

(४०) जिनप्रतिमाके दर्शन कर शुभ भावना भावनेसे ' परम० ' आर्द्रकुमारकी माफीक (श्री सूत्र कृतांग)

इन बोलोंको कंठस्थ कर सदैवके लिये स्मरण करना और यथाशक्ति गुणोंको प्राप्त कर परम कल्याण करना चाहिये ।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १६.

(श्री सिद्धोंकी अल्पाबहुत्वके १०८ बोल)

ज्ञान दर्शन चारित्रकी आराधना करनेवाले भाइयोंको इस अल्पाबहुत्वको कंठस्थ कर सदैव स्मरण करना चाहिये ।

(१) सर्व स्तोक एक समयमें १०८ सिद्ध हुवे ।
(२) उनोंसे एक समयमें १०७ „ अनंतगुणे ।
(३) उनोंसे एक समयमें १०६ „ „
एवं ५८ वा बोलमें एक समयमें ५१ „ „
(५९) उनोंसे एक समयमें ५० „ असंख्यातगुणे ।
(६०) उनोंसे एक समयमें ४९ „ „
(६१) उनोंसे एक समयमें ४८ „ „
एवं क्रमसर ८४ वा बोलमें एक समयमें २५ सिद्ध हुवे असं० गु०
(८५) उनोंसे एक समय २४ सिद्ध हुवे संख्यातगुणे०
(८६) उनोंसे एक समय २३ „ „ „
एवं क्रमसर १०८ वा बोले एक समयमें एक „ „

यह १०८ बोलोंकी 'माला' सदैव गुणनेसे कर्मोंकी महा निर्जरा होती है. वास्ते सुज्ञजनोंको प्रमाद छोड प्रातःकालमें इस मालाको गुणनेसे सर्व कार्य सिद्ध होते हैं इति ।

॥ सेवंभंते सेवंभंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १७

(सूत्र श्री जम्बुद्विप प्रज्ञप्ति—छे आरा.)

भगवान वीरप्रभु अपने शिष्य इन्द्रभूति अनगार प्रति कहते है कि हे गौतम इस आरापार संसारके अन्दर कर्म प्रेरित अनंते जीव अनंते काल से परिभ्रमन कर रहे है कारणकि आदि नही है और अंत भी नही है.

भरत-एरवतक्षेत्रकि अपेक्षा अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कही जाती है वह दश क्रोडाक्रोड सागरोपमकि अवसर्पिणी और दश क्रोडाक्रोड सागरोपमकी उत्सर्पिणी एवं दोनों मीलके वीस क्रोडाक्रोडी सागरोपमका कालचक्र होता है एवं अनंते कालचक्रका एक पुद्गल परावर्तन होता है एसे अनंते पुद्गल परावर्तन भूतकालमें हो गये है और भविष्यमें अनन्ते पुद्गल परावर्तन हो जायगा.

हे गौतम में आज इस भरतक्षेत्रमें अवसर्पिणी कालका ही व्याख्यान करता हूं तुं एकाग्रचित कर श्रवण कर ।

एक अवसर्पिणी काल दश क्रोडाक्रोड सागरोपमका होता है जिसके छे विभाग यानी छे आरा होते है यथा—(१) सुखमा सुखमा (२) सुखमा (३) सुखमा दुःखमा (४) दुःखमा सुखमा (५) दुःखमा (६) दुःखमा दुःखमा इति छे आरा ।

(१) प्रथम सुखमा सुखम आरा च्यार क्रोडाक्रोड सागरोपमका है इस आराके आदिमें यह भारतभूमि बडी ही मनोरमणिय सुन्दराकार और सौभाग्यको धारण करनेवाली थी. पाहाड पर्वत खाड खाडा याने विषमस्थानादि रहित इस भूमिका विभाग पांच प्रकारके रत्न से अच्छा मंडित था. पांचरंगे वन

शाखी पत्र पुष्प फलादिकि लक्ष्मी से अपनी छटा दीखा रही थी. इस प्रकारके कल्पवृक्ष अनेक विभागोंमें अपनि उदारता मशहूर कर रहे थे भूमिका वर्ण बडा ही सुन्दर मनोहर था स्थान स्थान वापी कुंवे पुष्करणी वापी अच्छा पय पानी से भरी हुइ लेहरो कर रही थी. भूमिका रस मानो कालपी मीसरी माफीक मधुर और स्वादिष्ट था. भूमिकी गन्ध चोतर्फ से सुगन्ध ही सुगन्ध दे रही थी. भूमिका स्पर्श बडा ही सुकुमाल मक्खनकि माफीक था एक वारीस होनेपर दश हजार वर्ष तक उनकी सरसाइ बनी रहती थी.

हे गौतम उन समयके मनुष्य युगल कहलाते थे कारण उन समय उन मनुष्योंके जीवनमें एक ही युगल पैदा होते थे उनोंके मातापिता ४९ दिन उनोंका संरक्षण करते थे और वह ही युगल गृहवास कर लेते थे. वास्ते उन मनुष्योंको 'युगलीये' मनुष्य कहा जाते थे वह बडे ही भद्रीक प्रकृतिवाले सरल स्वभावी विनयवन्त तो उनका जीवन ही था उन मनुष्योंके प्रेमबन्धन या ममत्वभाव तो बीलकुल ही नहीं था. उन जमानेमें उन मनुष्योंके लिये राजनीती और कानुन कायदावोंकि तो आवश्यक्ता ही नहीं थी कारण जहां ममत्व भाव होते है वहां राजसत्ताकि जरुरत होती है वह उन मनुष्योंके थी नहीं। वह मनुष्य पुन्यवान तो इतने थे कि जब कीसी पदार्थ भोग उपभोगके लिये जरुरत होती तो उनोंके पुन्योदय वह दश जातिके कल्पवृक्ष उनोंकी मनोकामना पूर्ण कर देते थे। उन कल्पवृक्षोंके नाम और गुण इस माफीक था।

(१) मतांगा-उत्तम पदार्थोके मदिराके दातार.

(२) भृतांगा-पात्र कटोरे थालादि बरतनोंके दातार.

दिनोंमें आहारकि इच्छा होती थी अब शरीर प्रमाणे आहार करने के पीछे आगारे अन्तमें दो दीनोंसे आहारकि इच्छा होने लगी।

युगल मनुष्योंकि छे छेमास आयुष्य रहता है तब उन्होंके परभवको आयुष्य बन्ध जाता है युगल मनुष्योंका आयुष्य नीरकर्मी होता है। युगलनीके एक युगल (बचाबची) पेदा होते है उन्होंको ४९ दिन प्रतिपालना करके युगल मनुष्यको छींक आति है और युगलनीको उभासी आती है, बस इतनेमें वह दोनों साथहीमें कालधर्मको प्राप्त हो देवगतिमें चले जाते है।

उस समय सिंह व्याघ्र चित्ता रोंच्छ सर्प घोरु गौ भेंस हस्ति अश्वादि जानवर भी होते है, परन्तु वह भी बडे भद्रीक प्रकृतिवाले कीसी जीवोंके साथ न वैरभाव रखते है न कीसीको तकलीफ देते है उन्होंकीभी गति देवतावोंकी ही होती है। युगल मनुष्य उसे कीसी काममें नहीं लेते है।

उस समय न कर्मी मसी असी वाणिज्य वैपार है न राजा प्रजा होती है वहांके मनुष्य तथा पशु स्वइच्छानुसार घुमा करते है। जैसा यह प्रथम आरा है जीसकि आदिमें जो वर्णन किया है वैसाही देवकुरु उत्तरकुरु युगलक्षेत्रका वर्णन समज लेना चाहिये।

पुर्वभवमें कीये हुवे सुकृत कर्मका उदय अनुभाग रसको वहां पर भोगवते है। इति प्रथम भाग।

पहले आरेके अन्तमें दुसरा आरा प्रारंभ होते है तब अनंते वर्णगन्धरस स्पर्श संस्थान संहनन गुरुलघु अगुरुलघु पर्यायकी हानी होती है।। दुसरा सुखम, नामका आरा तीन क्रोडाक्रोड सागरोपमका होता है जीसका वर्णन प्रथम आराकि माफीक सा जना. इतना विशेष है कि उन मनुष्योंकि आरार्के आदिमें ?

गाउकी अवगाहना, दो पल्योपमकी स्थिति, शरीरके पांसलीयों १२८ संहनन संस्थान त्रि पूर्वोक्त शरीरके वर्णन प्रथमाराके माफीक समझना आराके आदिमें जोइ जैसी भूमिका सरसाइ है उतरते आरे एक गाउकी अवगाहना एक पल्योपमकी स्थिति शरीरके ६४ पांसलीयों भूमिका सरसाइ गुड जैसी रहेगी उन मनुष्योंको दो दिनोंसे आहारकि इच्छा होगी तब बहेडी शरीर प्रमाणे आहारकि कल्पवृक्ष पुरती करेंगे, दुसरे आराके युगलनी युगलको जन्म देगी वह ६४ दिन संरक्षण कर बहही छीक उभासी होतेही स्वर्गगमन करेंगे । इसी माफीक हरीवास रम्यक्वासके युगलोंकाधिकार भी समझना।

दुसरे आरेके अन्तमे तीसरा आरा प्रारंभ होते है तब दुसरे आरेकि निस्बत् अनंते वर्णगंधरस स्पर्श संहनन संस्था-नादि पर्याय हीन होगा।

तीसरा सुखमादुखम आरा दो कोडाकोड सागरोपमका है उसमेंभी युगल मनुष्यही होते है उनोका आयुष्य एक पल्योप-मका, अवगाहना एक गाउकी, शरीर पांसलीये ६४ होती है शेष शरीरके संहनन संस्थानादि वर्णनादि पूर्ववत् समझना. उत-रते आरे कोडपूर्वका आयुष्य पांचसौ धनुष्यकि अवगाहना ३२ पांसलीयों होती है एक दिनके अंतरसे आहारकि इच्छा होती है वह कल्पवृक्षपुर्ण करते है भूमिकी सरसाइ गुड जैसी होती है। छे मास परभवका आयुष्य बाकी रहे तब युगल मनुष्य ७९ दिन आप बच्चोंकी प्रतिपालना कर स्वर्गको गमन करते है। इस आरामें सुख ज्यादा है और दुःख स्वल्प है इसी माफीक हेमवय ऐरण्यवयक्षेत्र का भी समझना।

इन तीनो आरोंके दो विभाग तो युगलमेंही व्यतित हुवे जीनका वर्णन उपर कर चुके है अब तीसरा विभाग रहा है जीसका वर्णन इस माफिक है। जैसे जैसे कालके प्रभाव

मे हानि होने लगी इसी माफीक कल्पवृक्ष भी निरस होने लगें.
फल देनेमें भी संकुचितपना होनेसे युगल मनुष्योंके चित्तमें
चंचलता व्याप्त होने लगी इस समय रागद्वेषपने भी अपना पग-
पसारा करना सरु कर दीया इन कारणो से युगल मनुष्यो में
अधिपति की आवश्यकता होने लगी. तब कुलकरो कि स्थापन
हुइ पहले के पांचकुलकरो के 'हकार' नामका नीति दंड हुवा
अगर कोइ भी युगल अनुचित कार्य करे तो उसे वह कुलकर
दंड देता है कि 'हे' बस इतनेमें वह मनुष्य लज्जीत होके फीर
जन्म भरमें कोइभी अनुचित कार्य नही करता. इस नितीसे केइ
काल व्यतित हुवा. जब उन रागद्वेष का जोर बढने लगा तब
दुसरे पांच कुलकरोने 'मकार' नामका दंड नीकाला, अगर कोइ
युगल मनुष्य अनुचित कार्य करें तो वह अधिपति कहते कि
'म' याने वह कार्य मत करो इतने में वह मनुष्य लज्जीत हो
जाता था बाद रागद्वेषका भाइ क्लेशने भी अपना राज जमाना
सरूकीया जब तीसरे पांच कुलकरोने 'धीकार' नामका दंड देना
सरू कीया. इन पंद्रह कुलकरोद्वारा तीन प्रकार के दंड से
नीति चलती रही जब तीसरे आराके ८४ चोरासी लक्ष पूर्व
और तीन वर्ष साडे आठ मास शेष बाकी रहा उन समय सर्वार्थ
[illegible]द महा वैमान से चवके भगवान ऋषभदेवने, नाभीराजा के
[illegible]देवो मार्या कि रत्नकूक्षीमें अवतार लीया माताको वृषभादि
[illegible]त सुपना आवे ह्नोका अर्थ खुद नाभीराजने ही कहा
[illegible]: भगवानका जन्म हुवा चौसट इन्द्रोने महोत्सव कीया.
[illegible]वयमें सुनन्दा सुमंगला के साद भगवानका व्याह (लग्न कीया
[illegible] रीत रस्म सब इन्द्र इन्द्राणीयो ने करीथी फीर भगवान
[illegible]देवने पुरुषोको ७२ कला और स्त्रियोको ६४ कला बतलाइ

कारण प्रभु अवधिज्ञान संयुक्त थे यह जानते थे कि अब कल्पवृक्ष तों फल देंगे नही और नीति न होगी तो भविष्य में बडा भारी नुकशान होगा दुराचार बढ जायगें इस वास्ते भगवान ने उन मनुष्यों को असी मसी कसी आदि कर्म करना बतलाके नीतिके अन्दर स्थापन कीया। बस यहां से युगलधर्म का बिलकुल लोप होगया अब नितिके साथ लग्न करना अन्नादि खाद्य पदार्थ पेदा करना और भगवान् आदीश्वर के आदेश माफीक वरताव करना वह लोग अपना कर्तव्य समजने लग गये. भगवान् एसे वीस लक्ष पुर्व कुमार पद में रहे इन्द्र महाराज मीलके भगवान् का राज्याभिषेक कीया भगवान् इक्ष्वाकुवंस उग्रादिकुल स्थापन कर उनोंके साथ ६३ लक्षपूर्व राजपद को चलाये अर्थात् ८३ लक्षपूर्व गृहवास सेवन किया जीसमें भरत बाहुबल आदि १०० पुत्र तथा ब्राह्मी, सुन्दरी आदि दो पुत्रीयें हुइ थी अयोध्या नगरी कि स्थापना पहलेसे इन्द्र महाराजने करी थी और भी ग्राम नगर पुर पाटण आदिसे भूमंडल बडाही शोभने लग रहाथा. भगवानके दीक्षाके समय लोकान्तिक देव आके भगवान से अर्ज करी कि हे प्रभो ! जेसे आप नितीधर्म बतलाके क्लेश पाते युगलीयोंका उद्धार किया है इसी माफीक अब आप दीक्षा धारण कर भव्य जीवोंका संसार से उद्धार कर मोक्षमार्ग को प्रचलीत करो. उनसमय भगवान् संवत्सर दान दे के भरतको अयोध्याका राज बाहुबलको तक्षशीला का राज और ९८ भाइयोंको अन्यदेशोंका राज दे ४००० राजपुत्रोंके साथ दीक्षा ग्रहन करी। भगवान् के एक वर्ष तक का अन्तराय कर्म था और युगल मनुष्य अज्ञात होनेसे एक वर्ष तक आहार पाणी न मीलने से वह ४००० शिष्य जंगलमें जाके फलफूल भक्षण करने लग गये. जब भगवान् ने वरसीतपका पारणा श्रेयांसकुमार के वहां

किया तबसे मनुष्य आहार पाणी देना सीखे. भगवान् १००० वर्ष छद्मस्थ रह के केवल ज्ञानकी प्राप्ति के लिये पुरीमताल नगरके उद्यानमें आये भगवान को केवल ज्ञानोत्पन्न हुवा. यह वधाइ भरत महाराज को पहुंची उस समय भरत राजाके आयुधशालामें चक्ररत्न उत्पन्न हुवा. एक तरफ पुत्र होनेकी वधाइ आइ, एवं तीनों कार्य बडा महोत्सवका था. परन्तु भरत राजाने विचार कीया कि चक्ररत्न और पुत्र होना तो संसारवृद्धिका कार्य है परन्तु मेरे पिताजीको केवलज्ञान हुवा वास्ते प्रथम यह महोत्सव करना चाहिये क्रमशः महोत्सव कीया. माता मरुदेवी को हस्ती पर बैठा के लाये माताजी अपने पुत्र (ऋषभदेव) को देख पहले बहुत मोहनी कर्म फीर आत्म भावना करते हस्तीपर बैठी हुई माताको केवलज्ञान उत्पन्न हुवा और हस्तीके स्कंधपरसे ही मोक्ष पधार गये भगवान के ४००० शिष्य पाछिस आगये औरभी ८४ गणधर ८४००० साधु हुवे और अनेक भव्य जीवोंका उद्धार करते हुवे भगवान आदीश्वरजी एक लक्ष पूर्व दीक्षा पाल मोक्षमार्ग चालु कर अन्तमें १०००० मुनिवरोंके साथ अष्टापदजीपर मोक्ष पधार गये. इन्द्रोंका यह फर्ज है कि भगवान के जन्म, दीक्षाग्रहन केवल ज्ञानोत्पन्न और निर्वाण महोत्सवके समय भक्ति करे. इस कर्तव्यानुसार सर्व महोत्सव कीये अन्तमें इन्द्र महाराजने अष्टापद पर्वत् पर रत्नमय तीनथंभ के विशाल स्तूप कराये और भरत महाराज उस अष्टापद पर २४ भगवान् के २४ मन्दिर बनवा के अपना जन्म सफल कीया था इस वख्त तीजा आरा के तीन वर्ष साडा आठ मास बाकी रहा है जोकि युगलीये मरके एक देव गति मेंही जाते थे अब यह मनुष्य कर्मभूमि हो जाने से नरक, तीर्यच मनुष्य देव और केइ केइ सिद्ध गतिमें भी जाने लगगये हैं। तीसरे आरे के अन्तमें चोरासी पूर्वका आयुष्य, पांचसो धनुष्य का

शरीर, मान ३२ पासलीयों यावत् वर्ण गन्ध रस स्पर्श संहनन संस्थानादिके पर्यव अनंते अनंते हानि होने लगे. धरती को मरसाइ गुल जेसी रही.

तीसरा आरा उतर के चोथा आरा लगा यह ४२००० वर्ष कम, एक कोडाकोड सागरोपमका है जिस्मे कर्मभूमि मनुष्य जघन्य अन्तर महुर्त, उत्कृष्ट क्रोड पूर्वका आयुष्य जघन्य अंगुल के असंख्य भाग उत्कृष्ट पांचसो धनुष्य कि अवगाहना थी शरीर के पांसलीयों ३२थी सहनन छे,संस्थान छे था. जमीनकी सरमाइथी स्निग्ध संयुक्त मनुष्यों के प्रतिदिन आहार करने कि इच्छा उत्पन्न होती थी भगवान् ऋषभदेव और भरतचक्रवर्ति यह दो शीलाके पुरुष तो तीसरे आरा के अन्तमें हुवे और शेष २३ तीर्थंकर, ११ चक्रवर्ति ९ बलदेव. ९ वासुदेव, ९ प्रतिवासुदेव यह सब चोथा आरामें हुवे थे।

भगवान ऋषभदेव के पाटोनपाट असंख्यात जीव मोक्ष गये तत्पश्चात् अजितनाथ भगवान् का शासन प्रवृत्तमान हुवा क्रमशः नौवा सुविधिनाथ भगवान् तक अविच्छिन्न शासन चला फीर हुन्डा सर्पिणी के प्रयोगसे शाशन उच्छेद हुवा फीर शीतलनाथ भगवान से शासन चला एवं श्री धर्मनाथजी के शासन तक अंतरे अंतरे धर्म विच्छेद हुवा बाद में श्री शान्तिनाथ प्रभु अवतार लीया वहांसे भी पार्श्वनाथ प्रभु तक अवच्छिन्न शासन चला बाद में चोथा आराके ७५ वर्ष आढा आठ मास बाकी रहा. । पाठ को ! तब दशवा स्वर्ग से चवके क्षत्रीकुंड नगर के सिद्धार्थ राजा कि त्रिसलादे राणी के रत्नकुक्षमें श्री वीर भगवान् अवतार धारण कीया माता को १४ स्वप्ना यावत् भगवान् का जन्म हुवा ६४ इन्द्र मील के भगवान का जन्म महोत्सव कीया बाद में राजा

सिद्धार्थ जन्म महोत्सव कीया था उनसमय जिन मन्दिरोंमें सेंकड़ो पुजाओं कर अनुक्रमशः ३० वर्ष भगवान् गृहवास में रहके बाद दिक्षा ग्रहन कर साढे बारह वर्ष घोर तपश्चर्या कर के केवलज्ञान कि प्राप्ती कर तीस वर्ष तग भव्य जीवोंका उद्धार कर सर्व ७२ वर्षो का आयुष्य पाल आप मोक्ष में पधार गये उससमय भगवान् गौतम स्वामि को केवलज्ञान उत्पन्न हुवा जिनका महा महोत्सव इन्द्रादिकने कीया।

चोथा आरामें दुःख ज्यादा और सुख स्वल्प है आरा के अन्तमें मनुष्यों का आयुष्य उत्कृष्ट १२० वर्षका शरीरकी उंचाइ सात हाथकी पांसलीयों १६ धरतीकी सरसाइ मटी जेसी थी एक दिनमें अनेकवार आहारकी इच्छा उत्पन्न होती थी

जब चोथा आरा समाप्त हो पांचवा आरा लगा तब वर्ण-गन्ध रस स्पर्श संहनन सस्थान के पर्यव अनंते हीन हुये धरतीकी सरसाइ मटी जेसी रही।

पांचवा आरा २१००० वर्षोका होगा आरा के आदिमें १२० वर्षोका मनुष्योंका आयुष्य ७ हाथका शरीर-शरीर के छे संहनन छे संस्थान १६ पांसलीयां होगें चोसट वर्ष केवलज्ञान (८ वर्ष गौतमस्वामि १२ सौधर्मस्वामि ४४ जम्बुस्वामि) पांचवे आरे के मनुष्यों कों आहारकी इच्छा अनियमित होगें।

जम्बु स्वामि मोक्ष जाने पर १० बोल्लोका उच्छेद होगा यथा-परमावधिज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवलज्ञान, परिहार विशुद्धि चारित्र, सूक्ष्मसंपराय चारित्र, यथाख्यात चारित्र. पुलाक लब्धि, आहारक शरीर. क्षायकश्रेणी. जिन कल्पीपना.

प्रसंगोपात पांचवे आरे के धर्म धुरंधर आचार्योंके नाम:

(१) श्री स्वयंप्रभसूरि जैनपोरवाल श्रीमालोंके कर्त्ता
(२) श्री रत्नप्रभसूरि उपलदे राजादि का जैन ओसवाल कीये
(३) श्री यक्षदेवसूरि सवालक्ष जैन बनानेवाला
(४) श्री प्रभवस्वामि सज्जंभवभट्टके प्रतिबोधक
(५) श्री सज्जंभवाचार्य दशवैकालक के कर्त्ता
(६) श्रीभद्रबाहुस्वामि निर्युक्ति के कर्त्ता
(७) श्री सुहस्ती आचार्य राजा संप्रती प्रतिबोधक
(८) श्री उमास्वामि आचार्य पांचसो ग्रन्थ के कर्त्ता
(९) श्री श्यामाचार्य श्री प्रज्ञापना सूत्र के कर्त्ता
(१०) श्री सिद्धसेन दीवाकर विक्रमराजा प्रतिबोधक
(११) श्री वज्रस्वामि जिनमन्दिरोंकी आशातना मीटानेवाले
(१२) कालकाचार्य शालीवाहन राजा प्रतिबोधक
(१३) श्री गन्धहस्ती आचार्य प्रथम टीकाकार
(१४) श्री जिनभद्रगणी आचार्य भाष्यकर्त्ता
(१५) श्री देवऋद्धि क्षमाश्रमण आगम पुस्तकारूढ कर्त्ता
(१६) श्री हरिभद्रसूरि १४४४ ग्रन्थ के कर्त्ता
(१७) श्री देवगुप्तसूरी तिदुग्गादि च्यार मालोंके कर्त्ता
(१८) श्री शीलगुणाचार्य श्री मल्लवादि श्री दुर्वादी
(१९) श्री जिनेश्वरसूरी श्री जिन वल्लभसूरी संघपट्टक कर्त्ता
(२०) श्री जिनदत्तसूरी जैन ओसवाल कर्त्ता
(२१) श्री कक्कसूरी आचार्य अनेक ग्रन्थकर्त्ता
(२२) श्री कलीकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य, राजा कुमारपाल प्रतिबोधक

(२३) श्री हिरविजयसूरी पादशाह अकबर प्रतिबोधक।

इत्यादि हजारों आचार्य जो जैनधर्मके स्थंभभूत हो गये है उनोंके प्रभावशाली धर्मोपदेशसे विमलशा, वस्तुपाल, कर्माशा जावडशा भैंसाशा धन्नासा भामाशा सोमासादि अनेक वीरपुत्रोंने जैनधर्मकि प्रभावना करी थी इति

पांचवे आरा में कालके प्रभावसे कीतनेक लोग पैसेभी होंगे और इस आर्यभूमिका वर्णन जो पुर्व महा ऋषियोंने इस माफीक कीया है।

(१) वडे वडे नगर उजडसा या गामडे जेसे हो जायेंगे
(२) ग्राम होगा वह श्मसान जेसे हो जायगें
(३) उच्च कूलके मनुष्य दास दासीपना करने लग जायगे
(४) जनता जिन्होंपर आधार रखें वह प्रधान लाचडीये होंगें मुदार मुदायले दोनोंका भक्षण करेंगे
(५) प्रजाके पालन करनेवाले राजा यम जेसे होंगे
(६) उच्च कूलकि औरतें निर्लज्ज हो अत्याचार करेंगी
(७) अच्छे खानदानकि औरतो वैश्या जेसे वेश या नाच करेंगी निर्लज्ज हो अत्याचार करेंगे
(८) पुत्र कुपुत्र हो आपत्त कालमें पिताको छोडके भाग जावेंगे मारपीट दावा फीरयादि करेंगे
(९) शिष्य अविनीत हो गुरु देवोंका अवगुनवाद बोलेंगे
(१०) लुब्ध लंपट दुर्जन लोग कुच्छ समय सुखी होंगे
(११) दुर्भिक्ष दुष्काल बहुत पडेंगें
(१२) सदाचारी सज्जन लोग दुःखी होंगे
(१३) ऊंदर सर्प टीडी आदि क्षुद्र जीवोंके उपद्रव होंगे
(१४) ब्राह्मण योगी साधु अर्थ (धन) के

(१५) हिंसा धर्म (यज्ञहोम) के प्ररूपक पाखडी बहुत होंगे
(१६) एकेक धर्मके अन्दर अनेक अनेक भेद होंगे
(१७) जीस धर्मके अन्दरसे निकलेंगे उसी धर्मकी निंदा करेंगे उपकारके बदले अपकार करेंगे
(१८) मिथ्यात्वीदेव देवीयों बहुत पुजा पावेंगे । उनोंके उपासकभी बहुत होंगे ।
(१९) सम्यग्दृष्टि देवोंके दर्शन मनुष्योंको दुर्लभ होंगे ।
(२०) विद्याधरोंकि विद्यावोंका प्रभाव कम हो जायगें
(२१) गौरस दुध दही घृत) तैल गुड शाकरमें रस कम होंगे
(२२) वृषभ गज अश्वादि पशु पक्षीयोंका आयुष्य कम होगा
(२३) साधु साध्वीयोंके मासकल्प जेसे क्षेत्र स्वल्प मीलेंगे
(२४) साधुकि १२ श्रावककी ११ प्रतिमायोंका लोप होंगे
(२५) गुरु अपने शिष्योंको पढानेमें संकूचीतता रखेंगे ।
(२६) शिष्यशिष्यणीयों कलह कदाग्रही होगी ।
(२७) संघमें क्लेश दंटा फीसाद करनेवाले बहुत होंगे ।

(२८) आचार्योंकि समाचारी अलग २ होंगे अपनि अपनि सचाइ बतलानेके लिये उत्सूत्र बोलेंगे एक दुसरेको झूठा बतलायेंगे ममत्वभावसे वेशविटम्बिक कुलिंगी सन्मार्गसे पतित बनानेवाला बहुत होंगे ।

(२९) भद्रीक सरल स्वभावी अदल इन्साफी स्वल्प होंगे वहभी पाखंडीयोंसे सदैव डरते रहेंगे ।

(३०) म्लेच्छराजावोंका राज होंगे सत्यकी हानि होगी ।
(३१) हिन्दु या उच्च कूलिन राजा, न्यायोराज स्वल्प होंगे।
(३२) अच्छे कूलीन राजा निचलोगोंकि सेवा करेंगे निच कार्य करेंगे।

इत्यादि अनेक बोलोंसे यह पांचवा आरा कलंकित होगें। इन आरामें रत्न सुवर्ण चान्दी आदि धातु दिन प्रतिदिन कम होती जावेगी. अन्तमें जीस्के घरमें मणभर लोहा मीलेंगें वह धनाढ्य कहलावेंगें इन आरामें चमडेके कागजोंके चलन होंगें इन आरामें संहनन बहुत मंद होगें अगर शुद्ध भावोंसे एक उपासभी करेंगें वह पुर्वकि अपेक्षा मासखमण जेसा तपस्वी कहलायेंगें, उन समय श्रुतज्ञानकि क्रमशः हानि होगी अन्तमें भी दशवैकालीक सुत्रके च्यार अध्ययन रहेंगें उनसे ही भव्य जीव आराधि होगें पांचवे आरेके अन्तमें संघमें च्यार जीव मुख्य रहेंगें (१) दुप्पसासूरी साधु (२) फाल्गुनी साध्वी (३) नागल श्रावक (४) नागला श्राविका यह च्यार उत्तम पुरुष सद्गतिगामी होगें।

पांचवे आरेके अन्तमें आषाढ पुर्णीमाको प्रथम देवलोकमें शक्रेन्द्रका आसन कम्पायमान होगें. जब इन्द्र उपयोग लगाके जानेंगें कि भरतक्षेत्रमें कल छठा आरा लगेगा. तब इन्द्र मृत्युलोगमें आवेंगें और कहेंगेंकि हे भव्यों! आज पांचवा आरा है कल छठा आरा लगेंगें. वास्ते अगर तुमको आत्मकल्याण करना हो तो आलोचन प्रतिक्रमण कर अनसन करो इत्यादि इनपरसे वह ही च्यारों उत्तम पुरुष आलोचना प्रतिक्रमण कर अनसनकर देवगतिमें जावेंगें शेष जीव बाल मरणसे मृत्युपाके परभव गमन करेंगें ! पाठको वहही पांचमकाल अपने उपर वरत रहा है वास्ते सावचेत रहना उचित है।

पांचवे आरेके अन्तमें मनुष्योंका उत्कृष्ट वीस वर्षका आयुष्य एक हाथका शरीर चरम संहनन संस्थान रहेगा भूमिका रस दग्धभूमि जैसा रहेगा वर्ण गन्ध रस स्पर्शादि सब अनंत भाग न्युन होगें पांचवा आरा उतरके छठा आरा लगेगा उनका वर्णन बडा ही भयंकर है।

श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन संवर्तक नामका वायु चलनेसे पहलेपहर जैनधर्म, दुसरे पहर ३६३ पाखंडीयेका धर्म, तीजे पहर राजनीती, चौथे पहर बादर अग्निकाय विच्छेद होंगे उन समय गंगा सिंधु नदी, वैताढ्यगिरि पर्वत (सास्वतगिरी) और लवण समुद्र कि खाडि इनके सिवाय सब पर्वत पाहाड जंगल झाडो वृक्षादि वनस्पति घर हाट नदी नालादि सर्व वस्तु नष्ट हो जायगी. उसपर सात सात दिन सात प्रकारके मेघ वर्षेगे वह अग्नि सोमल विष धूल खार आदि के पडने से सब भूमि एक-दम दग्ध हो जायगी-हाहाकार मच जायंगे उन समय कुच्छ मनुष्य तीर्यंच बचेंगे उनों को देवता उठाके गंगा सिन्धु नदीके किनारेपर ७२ बील रहेंगे जिस्में ६३ बीलोंमें मनुष्य ६ बीलोंमें गजाश्व गौभैंसादि भूमिचर पशु आदि ३ बीलोंमें खेचर पक्षीको रखदेंगे उनोंका शरीर बडाही भयंकर काला काबरा मांजरा लुला-लंगडा अनेक रोगग्रस्त कुरूपे मनुष्य होंगे जिनोंके मैथुनकर्मकी अधिकाधिक इच्छा रहेंगे उनोंके लडके लडकीये बहुत होगी छे वर्षोंकी ओरतें गर्भ धारण करेंगी. वहभी कुत्तीयोंकि माफीक एक वखतमें ही बहुत बचा बचीयोंकों पैदा करेंगी महान दुःखमय अपना जीवन पूर्ण करेंगे।

गंगा सिन्धु नदी मूलमें ६२॥ जोजनकी है परन्तु कालके प्रभावसे क्रमशः पाणी सुकता सुकता उन समय गाडीके चीले जीतनी थोडी ओर गाडाका आक डुबे इतनी उंडी रहेगी उन पाणीमें बहुतसे मच्छ कच्छ जलचर जानवर रहेंगे।

उस समय सूर्यकि आताप बहुत होगी चन्द्रकि शीतलता बहुत होगी. जिसके मारे वह मनुष्य उन बीलोंसे नीकल नहीं सकेंगे. उन मनुष्योंके उदर पुरणाके लिये उस नदीयोंमें कच्छ मच्छ होगा उनोंको स्याम सुबह बीलोंसे निकलके जलचर जीवों

को पकड उन नदीके कीनारेकी रेतीमें गाड देंगें वह दिनको सूर्यकि आतापनासे रात्रीमें चन्द्रकी शीतलतासे पक जावेंगे फीर सुबे गाडे हुवेका श्यामको भक्षण करेंगे श्यामको गाडे हुवेका सुबे भक्षण करेंगे इसी माफीक वह पापीष्ट जीव छठे आरेके २१००० वर्ष व्यतित करेंगे। उन मनुष्योंका आयुष्य लागते छठे आरे उत्कृष्ट २० वर्षका होगा शरीर एक हाथका हुन्डक संस्थान छेवट्टे संहनन आठ पासलीयों और उत्तरते आरे १६ वर्षोंका आयुष्य. मुडत हाथका शरीर, च्यार पांसलीयां होगी. उन दुःखमा दुःखम आरामें वह मनुष्य नियम व्रत प्रत्याख्यान रहीत मृत्यु पाके विशेष नरक और तीर्यंच गतिमें जावेंगे। पाठकों ! अपना जीव भी एसे छट्टे आरेमें अनंती अनंती वार उत्पन्न होके मरा है वास्ते इस वखत अच्छी सामग्री मीली है जिस्मे सावचेत रहनेकी आवश्यक्ता है। फीर पश्चाताप करनेसे कुच्छ भी न होंगे।

अब उत्सर्पिणी कालका संक्षेपमें वर्णन करते है।

(१) पहला आरा छठा आरेके माफीक २१००० वर्षका होगा।

(२) दुसरा आरा पांचवा आरे जेसा २१००० वर्षोंका होगाः परन्तु साधु साध्वी नहीं रहेंगे. प्रथम तीर्थंकर पद्मनाभका जन्म होगा याने श्रेणिकराजाका जीव प्रथम पृथ्वीसे आके अवतार धारण करेंगे। अच्छी अच्छी वर्षात होनेसे भूमिमें रस अच्छा होगा.

(३) तीसरा आरा—चोथा आरेके माफीक बीयालीसहजार वर्ष कम एक कोडाकोड सागरोपमका होगा जिस्मे २३ तीर्थंकर आदि शलाके पुरुष होंगे मोक्षमार्ग चलु होगा शेष अधिकार चोथा आरा कि माफीक समज लेना।

(४) चोथा आरा तीसरे आरेके माफीक होगा जीसे प्रथम तीजा भागमें कर्मभूमि रहेगे एक तीर्थंकर एक चक्रवर्ति मोक्ष जायेंगे फीर दो-तीन भागमें युगल मनुष्य हो जायेंगे वहही कल्पवृक्ष उनोंकि आशा पुरण करेंगे सम्पूरण आरा दो कोडाकोडी सागरोपमका होगा।

(५) पांचवां आरा दुसरे आरेके माफीक तीन कोडाकोडी सागरोपमका होगा उसमें युगल मनुष्यही होगा।

(७) छठा आरा पहेले आरेके माफीक च्यार कोडाकोडी सागरोपमका होगा उसमें युगल मनुष्यही होगे।

इन उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणीकाल मीलानेसे एक कालचक्र होता है एसा अनंते कालचक्र हो गये कि यह जीव अज्ञानके मारे भवभ्रमन कर रहा है। पाठकगण! इसपर खुब गहरी दृष्टिसे विचार करे कि इस जीवकि क्या क्या दशा हुइ है और भविष्यमें क्या दशा होगी। वास्ते श्री परमेश्वर वीतराग के वचनोंको सम्यक प्रकारसे आराधन कर इस कालसे मुक्त हो शुद्ध चलीये शाश्वते स्थानमें इति।

सेवं भंते सेवं भंते=तमेव सचम्

→※◯◯※←

श्री कक्कसूरी सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २ जा.

थोकडा नम्बर १८.

(नवतत्त्व)

गाथा—जीवाजीवा पुण्णं पावासव संवरो य निज्भरणा ॥
बंधो मुक्खो य तहा, नवतत्ता हुंति नायव्वा ॥ १ ॥
(श्री उतराध्ययन अ० २८ वचनात)

(१) जीवतत्त्व–जीवके चैतन्यता लक्षण है
(२) अजीवतत्त्व–अजीवके जडता लक्षण है
(३) पुन्यतत्त्व–पुन्यका शुभफल लक्षण है
(४) पापतत्त्व–पापका अशुभफल लक्षण है
(५) आश्रवतत्त्व–पुन्य पाप आनेका दरवाजा लक्षण है
(६) संवरतत्त्व–आते हुवे कर्मोको रोक रखना
(७) निर्ज्जरातत्त्व–उदय आये कर्मोको भोगवके दूर करना
(८) बन्धतत्त्व–रागद्वेषके परिणामोसे कर्मका बन्धना.
(९) मोक्षतत्त्व–सर्व कर्म क्षयकर सिद्धपद प्राप्त करना.

इन नवतत्त्वमें जीव अजीवतत्त्व जानने योग्य है. पाप आ-
और बन्धतत्त्व जानके परित्याग करने योग्य है. संवर नि-

र्जरा और मोक्षतत्व ज्ञानके अंगीकार करने योग्य है पुन्यतत्व नैगमनयके मतसे स्वीकार करने योग्य है कारण मनुष्यजन्म उत्तम कुल, शरीर निरोग्य, पूर्ण इन्द्रिय, दीर्घ आयुष्य, धर्म सामग्री आदि सब पुन्योदयसे ही मीलती है व्यवहार नयके मतसे पुन्य जानने योग्य है और एवंभुत नयके मतसे पुन्य जानके परित्याग करने योग्य है कारण मोक्ष जानेवालोंको पुन्य बाधाकारी है पुन्य पापका क्षय होनेसे जीवोंका मोक्ष होता है।

नवतत्वमें च्यार तत्व जीव है=जीव, संवर, निर्ज्जरा, और मोक्ष. तथा पांच तत्व अजीव है-अजीव-पुन्य-पाप-आश्रव और बन्धतत्व।

नवतत्वका च्यार तत्व रूपी है पुन्य-पाप-आश्रव और बन्ध च्यार तत्व अरूपी है जीव संवर निर्झरा और मोक्ष तथा अजीवतत्व रूपी अरूपी दोनों है.

निश्चयनयसे जीवतत्व है सो जीव है और अजीवतत्व है सो अजीव है शेष सात तत्व जीव अजीवकि पर्याय है, यथा संवर निर्ज्जरा मोक्ष यह तीन तत्व जीवकि पर्याय है, पाप पुन्य आश्रव बन्ध यह च्यार तत्व अजीवकी पर्याय है।

अजीव पाप पुन्य आश्रव और बन्ध यह पांचतत्व जीवके शत्रु है संवर तत्व जीवका मित्र है, निर्ज्जरातत्व जीवको मोक्ष पहुंचानेवाला सीपाया है. मोक्ष तत्व जीवका घर है.

नवतत्वपर च्यार निक्षेपा-नामनिक्षेपा. जीवाजीवका नाम नवतत्व रखादे, अक्षर लिखना तथा चित्रादिकि स्थापना करना यह नवतत्वका स्थापना निक्षेपा है. उपयोग रहीत नवतत्वाभ्यास करना यह द्रव्यनिक्षेपा है सम्यक्प्रकारे यथार्थ नवतत्वका स्वरूप समझना यह भावनिक्षेपा है

नवतत्वपर सात नय नैगमनय नवतत्व शब्दको तत्व माने. संग्रहनय तत्वकि सत्ताको तत्व माने. व्यवहार नय जीव अजीव यह दोय तत्व माने. ऋजु सूत्रनय छे तत्व माने. जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव बन्ध, शब्दनय सात तत्व माने छे पुर्ववत् एक संवर. संभिरूढनय आठ तत्व माने निर्ज्जराधिक. एवंभूत नय नव तत्व माने ।

नव तत्वपर द्रव्य क्षेत्र काल भाव—द्रव्यसे नवतत्व जीव अजीव द्रव्य है क्षेत्रसे जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव बन्ध सर्व लोकमें है संवर निर्ज्जरा और मोक्ष त्रस नालीमें है. कालसे नवतत्व अनादि अनंत है कारण नवतत्व लोकमें सास्वता है भावसे अपने अपने गुणोंमें प्रवृत रहे है ।

नवतत्त्वका विशेष विवेचन इस माफीक है ।

(१) जीवतत्त्व-जीवका सम्यक् प्रकारे ज्ञान होना जेसे जीवके चैतन्य लक्षण है व्यवहारनयसे जीव पुन्य पापका कर्ता है सुख दुःखके भोक्ता है पर्याय प्राण गुणस्थानादिकर संयुक्त द्रव्येजीव सास्वता है पर्याय (गतिअपेक्षा) असास्वताभी है. भूतकालमें जीवथा वर्तमानकालमें जीव है भविष्यमें जीव रहेंगे । तीनकालमें जीवका अजीव होवे नहीं उसे जीव कहते है निश्चयनयसे जीव अमर है कर्मोका अकर्ता है और व्यवहार नयसे जीव मरे है कर्मोका कर्ता है अनादि कालसे जीवके साथ कर्मोका संयोग है जेसे दुधमें घृत तीलोंमें तेल धूलमें धातु इक्षुमें रस पुष्पोंमें सुगन्ध चन्द्रकान्ता मणिमें अमृत इसी माफीक जीव और कर्मोका अनादि कालसे सबन्ध है दृष्टान्त सोना निर्मल है परन्तु अग्निके संयोगसे अपना स्वरूपको छोड अग्निके स्वरूप को धारण कर लेता है इसी माफीक अनादि काल के अज्ञान के वस क्रोधादि संयोगसे जीव अज्ञानी कर्मवाला कह-

लाते है जब सोना को जल पवनादिकी सामग्री मीलती है तब परगुण (अग्नि) त्याग कर अपने असली स्वरूप को धारण करते है इसी माफीक जीव भी दर्शनज्ञान चारित्रादिकि सामग्री पाके कर्ममेलको त्याग कर अपना असली (सिद्ध) स्वरूपको धारण कर लेता है ।

द्रव्यसे जीव असंख्यात प्रदेशी है। क्षेत्रसे जीव सम्पुरण लोक परिमाणे है (एक जीवका आत्मप्रदेश लोकाकाश जीतना है) कालसे जीव आदि अन्त रहीत है भावसे जीव ज्ञानदर्शन गुणसंयुक्त है। नाम जीव सो नाम निक्षेपा, जीवकि मूर्ति तथा अक्षर लिखना वह स्थापना जीव है उपयोग शुन्य जीवको द्रव्यनिक्षेपा कहते है उपयोगगुण संयुक्तको भावजीव कहते है।

नय-जीव शब्दको नैगमनय जीव मानते है असंख्याता प्रदेश सत्तावाले जीवको संग्रहनय जीव कहते है-त्रस स्थावरके भेदवाले जीवोंको व्यवहारनय जीव कहते है: सुखदुःखके परिणामवाले जीवोंको ऋजुसूत्र नयजीव कहते है क्षायकगुणप्रगटोंको ही इसे शब्दनय जीव कहते है केवलज्ञान संयुक्तको संभिरूढ नयजीव कहते है सिद्धपद प्राप्त कीये हुवे को एवंभूत नयजीव कहते है।

जीवोंके मूलभेद दोय है (१) सिद्धोंके जीव और (२) संसारी जीव. जिसमे सिद्धोंके जीव सर्वथा प्रकारे कर्म कलंकसे मुक्त है अनंते अव्याबाध सुखोंमें लोकके अग्रभागपर सदृचिदानन्द सुखानन्द सदानन्द स्वगुणोंका अनंतज्ञानदर्शनमें रमणता करते है, द्रव्यसे सिद्धोंके जीव अनंत है क्षेत्रसे सिद्धोंके जीव पैंतालीस लक्ष योजनके क्षेत्रमें विराजमान है कालसे सिद्धोंके जीव बहुत जीवोंकी अपेक्षा अनादि अनंत है एक जीवकि अपेक्षा सादि अनंत है भावसे अनन्तज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य गुणसंयुक्त समय

त्यादि संख्याते असंख्याते अनंते समयके सिद्धोंको परस्पर सिद्ध कहते है इति.

(२) अब संसारी जीवोंके अनेक भेद बतलाते है जेसे संसारी जीवोंके एक भेद याने संसारीजीव. दो भेद त्रस-स्थावर। तीन भेद स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद। च्यार भेद. नारकी तीर्यंच मनुष्य देवता। पांच भेद एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय पांचेन्द्रिय। छे भेद. पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय। सात भेद नारकी तीर्यंच तीर्यंचणी मनुष्य मनुष्यणी देवता देवी। आठ भेद च्यार गतिके पर्याप्ता अपर्याप्ता। नौभेद पांच स्थावर च्यार त्रस। दश भेद पांच इन्द्रियोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता। इग्यारे भेद पांचेन्द्रियके पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं १० और अनेन्द्रिय। बारहा भेद छे कायाके पर्याप्ता अपर्याप्ता। तेरहा भेद छे कायाके पर्याप्ता अपर्याप्ता ते-रहवा अकाया. जीवोंके चौदा भेद सूक्ष्मएकेन्द्रिय बादरएकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेन्द्रिय चोरिन्द्रिय असंज्ञीपांचेन्द्रिय सज्ञीपांचेन्द्रिय एवं सातोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके चौदा भेद जीवोंके समजना।

विशेष ज्ञान होनेके लिये संसारी जीवोंके ५६३ भेद बत-लाते है जिस्मे संसारी जीवोंके मूल भेद पांच है यथा-(१) एकेन्द्रिय (२) बेइन्द्रिय ३) तेइन्द्रिय (४) चोरिन्द्रिय (५) पांचे-न्द्रिय। एकेन्द्रियके दो भेद है (१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय (२) बादर एकेन्द्रिय। सूक्ष्म एकेन्द्रिय पांच प्रकारकी है पृथ्वीकाय अप-काय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय यह पांचो सूक्ष्म स्थावर जीव, संपूर्ण लोकमें काजलकी कुंपलीके माफीक भरे हुवे हैं उन जीवोंके शरीर इतना तो सूक्ष्म है कि छद्मस्थोंको दृष्टिगोचर नहीं होते है उनोंको केवली भगवान् अपने केवलज्ञान केवलदर्शनसे

जानते देखते है. उनोंने ही फरमाया है कि सूक्ष्म नामकर्मके उदयसे उन जीवोंको सूक्ष्म शरीर मीला है वह जीव मारे हुवा नहीं मरते है, वाले हुवा नहीं बलते है, काटे हुवा नहीं कटते है अर्थात् अपने आयुष्यसे ही जन्म-मरण करते है. उनोंका आयुष्य मात्र अंतरमुहुर्तका ही है जिस्में सूक्ष्म, पृथ्वी, अप, तेउ, वायुके अन्दर तो असंख्याते २ जीव है और सूक्ष्म वनस्पतिमें अनंते जीव है. इन पांचोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलानेसे दश भेद होते है।

दुसरे बादर एकेन्द्रियके पांच भेद है यथा—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय वायुकाय, वनस्पतिकाय. जिस्में पृथ्वीकायके दो भेद है. (१) मृदुल (कोमल) (२) कठन. जिस्में कोमल पृथ्वीकायके सात भेद है. काली मट्टी, नीली मट्टी, लाल मट्टी, पीली मट्टी, सुपेद मट्टी, पानीके नीचे तली जमी हुइ मट्टी उसे 'पनग' कहते है. पांडु गोपीचन्दनादि।

(२ कठनपृथ्वीके अनेक भेद है यथा—मट्टी खानकी, चीकणी मट्टी, छोटे कांकरा, वालुका रेती,* पाषाण, शीला, लुण (अनेक जातीका होते है), इनसे मीले हुवे धातु-लोहा, तांबा, तरवा, सिसा, रुपा, सुवर्ण, वज्र, हरताल, हिंगलु, मणशील, परवाल, पारो, वनक, पत्थल, भोडल अबरक, वज्ररत्न, मणिगोमेदरत्न,

* श्री [illegible] कहा है कि [illegible] हुइ धूड च्यार अंगुल निचे सचित [illegible] पांच अंगुल निचे सचित है. [illegible] ([illegible]) में सात अंगुल निचे. [illegible] दश अंगुल निचे. [illegible] तेरा अंगुल निचे, और [illegible] रहनेकी [illegible] २१ अंगुल निचे. [illegible] अंगुल निचे. कुम्हारके न्हिवाडेकि [illegible] अंगुल निचे [illegible] निचे १०८ अंगुल निचे सचित रहती है।

रायरत्न, अंकरत्न, स्फटिकरत्न लोहीताक्ष, मरकतरत्न, मसा रगलरत्न, भुजमोचकरत्न, इन्द्रनिलरत्न, चन्द्रकारत्न, गौरीक रत्न, हंसगर्भरत्न, पुलाकरत्न, सोगन्धीरत्न, अक्करत्न ओलख पीरोझीया, लसणीयारत्न, वैदुर्यरत्न चन्द्रप्रभामणि, कणमणि सूर्यप्रभामणि जलकांतमणि इत्यादि जिसका स्वभाव कठन है जिनकी सात लक्ष योनि है. इनोंके दो भेद है पर्याप्त अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वह असमर्थ है जो पर्याप्ता है वह समर्थ है वर्ण गन्ध रस स्पर्श कर संयुक्त है। जहां एक पर्याप्ता है वह निश्चय असंख्या अपर्याप्ता होते है एक सिरसी जीतनी पृथ्वीका यमें असंख्य जीव होते है वह अगर एक महुर्तमें भव करे तो उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है।

बादर अपकायके अनेक भेद है ओसका पाणी धूमसका पाणी करगडोंकापाणी, आकाशकापाणी, समुद्रोंकापाणी, खारा पाणी, खट्टापाणी घृतसमुद्रकापाणी क्षीरसमुद्रकापाणी इक्षुसमुद्र का पाणी लवणसमुद्रकापाणी कुंवे तलाव द्रह वावी आदि अनेक प्रकारका पाणी तथा सदैव तमस्काय वर्तते है इत्यादि इनोंके दो भेद है पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता हे वह असमर्थ है जो पर्याप्त है वह वर्णगन्धरस स्पर्श कर संयुक्त है एक पर्याप्ताकि नेश्राय निश्चय असंख्याते अपर्याप्ता जीव उत्पन्न होते है एक बुंदमें असं ख्याते है वह एक महुर्तमें उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है सात लक्ष योनि है।

बादर तेउकायके अनेक भेद है इंगाला मुमरा ज्वाला अं गारा भोभर उल्कापात विद्युत्पात वडवानलाग्नि काष्टाग्नि पाषा णाग्नि इत्यादि अनेक भेद है जीनोंके दो भेद है पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वह असमर्थ जो पर्याप्ता है वह वर्णगन्ध रस

स्पर्श कर संयुक्त हैं एक पर्याप्ताकि निश्राय असंख्याते अपर्याप्ता उत्पन्न होते हैं एक फुणगीयामें असंख्य जीव हैं सातलक्ष योनि हैं एक महूर्तमें उत्कृष्ट १२८२४ भव करते हैं।

बादर वायुकायके अनेक भेद हैं। पूर्ववायु पश्चिमवायु दक्षिणवायु उत्तरवायु उर्ध्ववायु अधोवायु विदिशावायु उत्कलिक वायु मंडलीयावायु मंदवायु उदंडवायु द्विपवायु समुद्रवायु इत्यादि जिनोंका दो भेद हैं पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता हैं वह असमर्थ है जो पर्याप्ता है वह वर्णगन्धरस स्पर्श कर संयुक्त पर्याप्ताकि निश्राय निश्चय असंख्याते अपर्याप्ता जीव उत्पन्न होते हैं एक झपुरकेमें असंख्य जीव होते हैं वह एक महूर्तमें उत्कृष्टभव करे तो १२८२४ भव करते हैं। सात लक्ष जाति हैं।

बादर वनस्पतिकायके दो भेद हैं (१) प्रत्येक शरीरी (२) साधारण शरीरी जिस्मे प्रत्येक शरीरी (जिस शरीरमें एकही जीव हो) के बारहा भेद हैं वृक्ष, गुच्छा, गुल्मा, लता, वेल्ही, इक्षु, तृण, वलय, हरिय औषधि जलरुह, कुहणा–जिस्में वृक्षके दो भेद हैं।

(१) जिस वृक्षके फलमें एक गुठली हो उसे एगटीये कहते हैं और जिस वृक्षके फलमें बहुतसे गुठलीयो (बीज) होते हो उसे बहुबीजा कहते हैं। जैसे एक गुठलीवालोंके नामयथा–निंबव जांबुवृक्ष कोशंबवृक्ष शालवृक्ष आम्रवृक्ष निवृक्ष नलंदरवृक्ष बेल-लवृक्ष पैलुवृक्ष शेलुवृक्ष इत्यादि और भी जिन वृक्षके फलमें एक बीज हो वह सब इसके अन्दर समझना. जिस्के मूलमें असंख्य जीव कन्दमें स्कन्धमें साखामें, परवालमें असंख्य जीव है पत्रोंमें प्रत्येक जीव है पुष्पोंमें अनेक जीव और फलमें एक जीव होते हैं।

बहु बीज वृक्षके नाम–तेंदुकवृक्ष आस्तिकावृक्ष कविटवृक्ष

अचाडग वृक्ष, दाडिम, उम्बर वडनदी वृक्ष, पीपरी जंगाली मिथावृक्ष दालीवृक्ष कादालीवृक्ष इत्यादि औरभी जिस वृक्षके फलमें अनेक बीज हो वह सब इनके सामिल समझना चाहिये जिस्के मूल कन्द स्कन्ध साग्व परवालमें असख्यात जीव है पत्रोंमे प्रत्येक जीव पुष्पोंमे अनेक जीव फलमें बहुत जीव है।

(२) गुच्छाः-अनेक प्रकारके होते है वैगण सल्लाइ थुडसी जिमुणीके लच्छाइके मलानीके मादाइके इत्यादि—

(३) गुम्मा-अनेक प्रकारके होते है जाइ जुइ मोगरा मालता नौमालती बसन्ती माधुली कायुली नगराइ पोहिना इत्यादि।

(४) लता-अनेक प्रकारकी होती है पद्मलता वसन्तलता नागलता अशोकलता चम्पकलता चुमनलता वेणलता आइमुक्तलता कुन्दलत्तर श्यामलता इत्यादि।

(५) वेलीके अनेक भेद है तुंबीकीवेली तौसंडी, तिउसी, पुंसफली, कालंगी, पल, वालुकी, नागरवेली घोसाडाइ (तौरू) इत्यादि।

(६) इक्षुके अनेक भेद है इक्षु इक्षुवाडी धारूणी कालइक्षु पुडइक्षु वरडइक्षु पकडइक्षु इत्यादि।

(७) तृणके अनेक भेद है साडीयातृण मोतीयातृण होतीयातृण धोय कुशतृण अर्जुनतृण आसाढतृण इकडतृण इत्यादि.

(८) वलहके अनेक भेद ताल तमाल तेकली तम्र तेतली शाली परंड कुरूवन्ध जगाम लौण इत्यादि।

(९) हरियाके अनेक भेद है अजारूवा कृष्णहरिय तुलसी तंदुल दगपीपली सीभेदका सराली इत्यादि।

(२) दुसरा साधारण वनास्पतिकाय है उसीके अनेक भेद है मूला कान्दा लसण आदो अदवी रतालु पींडालु आलु सकरकन्द गाजर सुवर्णकन्द वयकन्द कृष्णकन्द मागफली मुगफली हरदी कर्चुर नागरमोथ उगते अङ्कूरे पांच वर्णकि निलण फूलण कचे कोमल फल पुष्प विगडे हुवे पासी अन्नमें पेदा हुए दुर्गन्धमें अनन्तकाय है औरभी जमीनके अन्दर उत्पन्न होनेवाले वनास्पति सब अनन्तकायमें मानी जाती है दृष्टान्त जेसा लोहाका गोला अग्निमें पचानेसे उन लोहाके सब प्रदेशमें अग्नि प्रदीप्त हो जाती है इसी माफीक साधारण वनास्पतिके सब अंगमें अनंते जीव होते है वह अनंते जीव सायहीमें पेदा होते है सायही में आहार ग्रहन करते है सायही में मरते है अर्थात् उन अनंते जीवोंका एक ही शरीर होते है उसे साधारण वनास्पतिकाय या बादर निगोदभी कहते है।

वनास्पतिकायके च्यार भांगे बतलाये जाते है।

(१) प्रत्येक वनास्पतिकायके निश्रायमें प्रत्येक वनास्पति उत्पन्न होती है जेसे वृक्षके सालायों।

(२) प्रत्येक वनास्पतिकि निश्रायमें साधारण वनास्पतिकाय उत्पन्न होती है कचे फल पुष्पोंके अन्दर कोमलतामें अनंते जीव पेदा होना।

(३) साधारण वनास्पतिकि निश्राय प्रत्येक वनास्पति उत्पन्न होना जेसे मूलोंके पत्ते, कान्दोंके पत्ते इत्यादि उन पत्तोंमें प्रत्येक वनस्पति रहती है

(४) साधारणकि निश्राय साधारण वनस्पति उत्पन्न होती है जेसे कान्दा मूला।

(४) चोरिन्द्रिय के अनेक भेद ह अंधिका पत्तिका मक्खी मत्सर कीडे तीड पतंगीये विच्छु जलविच्छु कृष्णविच्छु दयाम-पत्तिका यावत् श्वेत पत्तिका भ्रमर चित्रपक्खा विचित्रपक्खा जलचारा गोमयकीडा भमरी मधु मक्षिका-टाटीया डंस मंसगा कीसारी मेलक दंभक इत्यादि जीस जीवोंके शरीर जीभ नाक नेत्र होते है यह सब चोरिन्द्रियकी गीणतीमें समजना. इन तीन वैकलेन्द्रियके पर्याप्ता अपर्याप्ता मिलानेसे ६ भेद होते है।

(५) पांचेन्द्रिय जीवोंके च्यार भेद है नारकी, तीर्यच, मनुष्य, देवता, जिस्मे नारकीके सात भेद है यथा-गम्मा वंसा शीला अञ्जना रिठा मघा माघवती-सात नरकके गौत्र. रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमः-प्रभा तमस्तमःप्रभा इन सातों नरकके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीला-नेसे चौदे भेद होते है।

(२) तीर्यच पांचेन्द्रियके पांच भेद है यथा-जलचर, स्थलचर, खेचर, उरपुरिसर्प भुजपुरिसर्प. जिस्मे जलचरके पांच भेद है मच्छ कच्छ मगरा गाहा और सुसमारा।

(१) मच्छके अनेक भेद है यथा-सन्हमच्छा युगमच्छा विद्युतमच्छा हलीमच्छा नागरमच्छा रोहणीयामच्छा तंदुलमच्छा कनकमच्छा शालीमच्छा पत्तंगमच्छा इत्यादि (२) कच्छके दो भेद है (१) अस्थि हाडवाले कच्छ (२) मांसवाले कच्छ (३) गोहके अनेक भेद दीलीगोह वेडीगोह मुदीगोह तुला-गोह सामागोह मयलागोह कोनागोह दुमोहीगोह इत्यादि (४) मगरा-मगरा सोडमगरा हलीत मगरा पालपमगरा नायकमगरा हलीपमगरा इत्यादि (५) सुसमारा एकही प्रकारका होते है यह आढाइ द्विपके बाहार होते है यह पांच प्रकारके जलचर जीव संज्ञी भी होते है ओर समुत्सम भी होते है जो संज्ञी होते

है यह गर्भजभि पुरुष नपुंसक तीनो प्रकारके होते है और जो
समुत्सम होते है वह एक नपुंसकही होते है।

(२) स्थलचरके च्यार भेद है यथा-एकखुरा दोखुरा
गंडीपदा सन्हपदा जिस्मे एक खुरोका अनेक भेद है अश्व खर
खचर इत्यादि दो खुरोके अनेक भेद है गौ भैस ऊंट बकरी
रोझ इत्यादि-गंडीपदाके भेद गज हस्ति गेंडा गोलड इत्यादि
सन्हपदके भेद सिंह-व्याघ्र नाहार केशरीसिंह बन्दर मंजार
इत्यादि इनोके दो भेद है गर्भज और समुत्सम।

(३) खेचरके च्यार भेद है यथा. रोमपक्खी चर्मपक्खी
समुगपक्खी. वीततपक्खी-जिस्मे रोमपक्खी-ढेंक पक्खी कंक-
पक्खी, बगासपक्खी. हंसपक्खी. गजहंस० कालहंस, क्रौंच-
पक्खी, सारसपक्खी, कोयल० रायीराजा. मयूर पारेवा तोता
मैना चीडी कमेडी इत्यादि चर्मपक्खी चमचेड विगुल भारंड
समुद्रवयस इत्यादि समुगपक्खी जोन्की पाक्खो हमेशां जुडी
हुइ रहेते है वितत पक्खी जीस्की पाखो हमेशां खुली हुइ रहती
है इनोकेभी दो भेद है गर्भज समुत्सम पूर्ववत्।

(४) उरपरीसर्प के च्यार भेद है अहिसर्प अजगरसर्प
मोहरगसर्प. अलसीयो. जिस्मे अहिसर्पके दो भेद है एक फण
करे दुसरा फण नही करे. फण करे जिस्के अनेक भेद है आसी-
विष सर्प दृष्टिविषसर्प त्वचाविषसर्प उग्रविषसर्प भोगविषसर्प
लालविषसर्प उश्वासविषसर्प निश्वासविषसर्प कृष्णसर्प सु-
पेदसर्प इत्यादि जो फण न करे उनोका अनेक भेद है-दोमोगा
गोणसा चीतल पेणा सेना होणसर्प पेलगसर्प इत्यादि।
अजगर एकही प्रकारका होते है। मोहरग नामका सर्प
अढाइद्विपके बाहार होते है उनोकी अवगाहना उत्कृष्ट १००
योजनकी होती है।

अलसीया आढाइद्विपके पंदरा क्षेत्रमें ग्राम नगर सेड कविट आदिके अन्दर तथा चक्रवर्त वासुदेवकी सैन्याके निचे जघन्य अगुलके असंख्यात भाग उत्कृष्ट बारहा योजनका शरीर होता है जिनके शरीरमें रक्त पाणी पसा तो जोरदार होते है कि उन पाणीसे वह बारहा योजनकी भूमिको वांधी बना देते है।

(५) भुजपरकेभी अनेक भेद है जैसे नाकुल कोल मूषा आदि यह जलचर थलचर खेचर उरपुरसर्प भुजपुर सर्प पांच प्रकारके संज्ञी गर्भज मनवाले होते है और यहही पाचों प्रकारके तीर्यच असंज्ञी मन रहीत समुत्सम होते है जो गर्भज है वह स्त्रि पुरुष नपुंमक होते है और जो समुत्सम होते है वह मात्र नपुंमक होते है एव १० भेद हुवे इन दशोंके पर्याप्ता और दशोंके अपर्याप्ता मिलाकर तीर्यच पांचेन्द्रियके २० भेद होते है एकेन्द्रियके २२ विकलेन्द्रियके ६ और पांचेन्द्रियके २० सर्व मीलाके तीर्यंचके ४८ भेद होते है।

(३) मनुष्यके दो भेद हैं (१) गर्भज मनुष्य (२) समुत्सम मनुष्य-जिस्मे समुत्सम मनुष्य जो आढाइ द्वीप पंदरा क्षेत्र के कर्मभूमि १५ अकर्मभूमि ३० अन्तरद्विपा ५६ एवं १०१ जाति के मनुष्योंके निम्नलिखित चौदा स्थानमें आंगुलके असंख्याते भागकि अवगाहाना अन्तरमहुर्तका आयुष्यवाले अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव उत्पन्न होते है चौदा स्थानोंके नाम यथा टटी, पेशाब, श्लेष्म, नाकके मेलमें, वमन (उलटी) पीत्त, रौद्र रसी (बीगडा रक्त) वीर्य, सुके हुवे वीर्य फीरसे भीना-आला होनेसे, स्त्रि पुरुषके संयोगमें, मृत्यु मनुष्यके शरीरमें, नगरके कि खमें, सर्व असूची-लाल मैल थुक विगेरे तथा असूची स्थान इन चौदे स्थानोंमें अन्तरमहुर्नके बाद जीवोत्पत्ति होती है और गर्भज मनुष्योंके तीन भेद है कर्मभूमि, अकर्मभूमि, अन्तरद्विप-जिस्में पहला

आहासिय, वेसाणिय, नागल, हयकन्न, गयकन्न, गोकन्न, शस्कुल-कन्न, अर्यसमुहा, मेषमुहा, अस्समुहा, गोमुहा, आसमुहा, हस्थिमुहा, सिंहमुहा, वाग्घमुहा, आसकन्ना, हरिकन्ना, अकन्ना, कन्नपाउरणा, उक्कामुख, मेहमुहा, विज्जुमुहा, विज्जुदान्ता, घणदान्ता, लट्ठ-दान्ता, गूढदान्ता, शुद्धदान्ता एवं २८ द्विपचुल हेमवन्त पर्वतकि निश्राय है इसी माफीक २८ द्विप इसी नामके सीखरी पर्वतकी निश्राय समझना एवं ५६ द्विपा है उस प्रत्येक द्विपमें युगल मनुष्य निवास करते हैं उन्होंका शरीर आठसो धनुष्यका है पल्योपमके असंख्यातमें भागकी स्थिति है. दश प्रकारके कल्पवृक्ष उन्होंकी मनोकामना पुरण करते है यहांपर असी मसी कसी राजा राणी चाकर ठाकुर कुच्छ भी नहीं है. देखो छे आरोंके थोकडेसे विस्तार इति।

अकर्मभूमियोंके ३० भेद है पांच देवकुरु, पांच उत्तरकुरु, पांच हरिवास, पांच रम्यक्वास, पांच हेमवय, पांच एरणवय एवं ३० जिसमें एक देवकुरु, एक उत्तरकुरु, एक रम्यक्वास, एक हरीवास, एक हेमवय, एक एरणवय एवं ६ क्षेत्र जम्बुद्विपमें. इसे दुगुणा बारहा क्षेत्र धातकीखंडमें बारहा क्षेत्र पुष्करार्द्ध द्विप में एवं ३० भेद यह अकर्मभूमिमें मनुष्ययुगल है यहां भी असी मसी कसी आदि कर्म नहीं है. उन्होंके भी दश प्रकारके कल्पवृक्ष मनोकामना पूरण करते है (छे आराधिकारसे देखो)

कर्मभूमि मनुष्योंके पंदरा भेद है पांच भरतक्षेत्रके मनुष्य, पांच ऐरवत पांच महाविदेह जिसमें एक भरत, एक ऐरवत, एक महाविदेह एवं तीन क्षेत्र जम्बुद्विपमें तीनसे दुगुणा छे क्षेत्र धातकीखंड द्विपमें है छे क्षेत्र पुष्करार्द्ध द्विपमें है कर्मभूमि यहां-पर राजा राणी चाकर ठाकुर साधु साध्वी तथा असी मसी कसी आदिमें वैपार वैपार कर आजीविका करते हो, इसे कर्मभूमि

कहते है. यहांपर भरतक्षेत्रके मनुष्योंका विशेष वर्णन करते है. मनुष्य दो प्रकारके है (१) आर्य मनुष्य, (२) अनार्य मनुष्य. जिस्में अनार्य मनुष्योंके अनेक भेद है. जैसे शकदेशके मनुष्य, यवरदेशके, यवनदेशके, बंबरदेशके, चिलतदेशके, पीकदेशके, पाचालदेशके, गौरंददेशके, पुलाकदेशके, पारसदेशके इत्यादि जिन मनुष्योंकी भाषा अनार्य व्यवहार अनार्य, आचार अनार्य, खानपान अनार्य, कर्म अनार्य है इस वास्ते उनोंको अनार्य कहा जाते है उनोंके ३१९७४॥ देश है।

आर्य मनुष्योंके दो भेद है (१) ऋद्धिमन्ता, (२) अनऋद्धिमन्ता. जिस्में ऋद्धिमन्ते आर्य मनुष्योंके छे भेद है. तीर्थंकर, चक्रवर्ति, बलदेव, वासुदेव, विद्याधर और चारणमुनि।

अनऋद्धिमन्ता मनुष्योंके नौ भेद है. क्षेत्रार्य, जातिआर्य, कुलआर्य, कर्मार्य, शिल्पार्य, भाषार्य, ज्ञानार्य, दर्शनार्य, चारित्रार्य. जिस्में क्षेत्रआर्यके साढापचवीस क्षेत्रआर्य माने जाते है. उनोंके नाम इस माफिक है. मागधदेश राजगृहनगर, अंगदेश चम्पानगरी, वंगदेश ताम्रलीपुरी, कलिंगदेश कंचनपुर, काशीदेश बनारसी, कोशलदेश संकेतपुर, कुरुदेश गजपुर, कुशावर्त सोरीपुर, पंचालदेश कपिलपुर, जंगलदेश (मारवाड) अहिछता, सोरठदेश द्वारामति, विदेहदेश मिथिला, वच्छदेश कोसंबी, संडिलदेश नंदिपुर, मलीयादेश भद्दलपुर, वत्सदेश वैराटपुर, वरणदेश अच्छापुर दशार्णदेश मृतकावती, चेदीदेश शक्तावती, सिन्धुदेश वीतभयपट्टन, सूरसेनदेश मथुरा, भङ्गदेश पावापुरी, पुरिवर्त्तदेश सुसमापुर, कुनाला सावत्थी, लाटदेश कोटीवर्ष केकइ नामका अर्द्धदेशमें स्वेताम्बिकानगरी इति। इन आर्यदेशोंका लक्षण जहां २४ तीर्थंकर चक्रवर्त्ति, वासुदेव, बलदेव, प्रतिवासुदेव आदिके जन्म होते है, तीर्थंकरोंके पंचकल्याणक होते है,

अहांपर भाषा, आचार, व्यवहार, वैपारादि आर्यकर्म होते है अनु समफल देवे उनीको आर्यदेश कहते है।

आर्यज्ञातिके छे भेद है. यथा—अम्बष्टजाति, कलिंदजाति, विदेहजाति, वेदांगजाति, हरितजाति, चुंचणवाजाति. उन जमानेमें यह जातियों उत्तम गीनी जाती थी।

कुलार्यके छे भेद है. उग्रकुल, भोगकुल, राजनकुल, इक्षाक कुल, ज्ञातकुल, कौरवकुल. इन छे कुलोंसे केइ कुल निकले है. इन कुलोंको उत्तम कुल माने गये थे।

कर्मआर्य—वैपार करना. जैसे कपडाका वैपार, सुंका वैपार, सुतके वैपार, सोनाचान्दीके दागीनेका वैपार, कांसी पीतलके बरतनोंके वैपार, उत्तम जातिके कियाणाके वैपार. अर्थात् जिस्मे पंद्रा कर्मादान न हो, पांचेन्द्रियादि जीवोंका बध न हो उसे कर्मआर्य कहते है।

शिल्पार्य—जैसे सुनारकी कला. तंतुपथ याने कपडे बनानेकी कला, काट कोरनेकी, चित्र करनेकी, सोनाचान्दी घडनेकी सुत्रकला, दारुकला, मंत्रकला, पत्थर चित्रकला, पत्थर कोरणी कला, रांगनकला, कोटागार निपजानेकी कला, गुंथणकला, बन्धणलबन्धन कला, पाक पकावनेकी कला इत्यादि. यह आर्यभूमिकी आर्य कलायों है।

भाषार्य—जो अर्ध मागधी भाषा है, वह आर्य भाषा है. इनके सिवाय भाषाके लिये अटारा जातिकी लीपी है वह भी आर्य है।

ज्ञानार्यके पांच भेद है. मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान. इन पांचों ज्ञानोंको आर्य ज्ञान कहते है।

दर्शनार्यके दो भेद है. (१) सराग दर्शनार्य, (२) वीतराग दर्शनार्य. जिस्मे सराग दर्शनार्यके दश भेद है।

कण्डे महाकण्डे कोहंड पयंगदेवा, वाणव्यन्तरोमें दश जातिके जंभृकदेवोंके नाम आणजंभृक पाणजंभृक लेणजंभृक शेनजंभृक वत्थजंभक पुप्फजंभृक फलजंभृक पुप्फफलजंभृक विद्युत्जंभृक अग्निजंभृक।

ज्योतिषीदेव पांच प्रकारके है. चन्द्र सूर्य, ग्रह. नक्षत्र, तारा पांच स्थिर अढाइ द्विपके बाहार है जिनोंकि क्रान्ति अन्दरके ज्योतिषीयोंसे आधि है सूर्य सूर्यके लक्ष योजन और सूर्य चन्द्रके पचासहजार योजनका अन्तर है अढाइ द्विपके बाहार जहां दिन है वहां दिनही है और जहां रात्री है वहां रात्रीही है और पांचों प्रकारके ज्योतिषी अढाइ द्विपके अन्दर है वह सदैव गमनागमन करते रहते है। चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा।

वैमानिक देवोंके दो भेद है. (१) कल्प, (२) कल्पअतित. जो कल्प वैमानवासी देव है उनोंमें इन्द्र सामानिक आदि देवों की छोटा बडापणा है जिनोंकि बारहा भेद है सौधर्मकल्प, इशानकल्प सनत्कुमार, महेन्द्र ब्रह्मदेवलोक लांतकदेवलोक महाशुक्रदेवलोक सहस्रादेवलोक अणत्देवलोक पणतदेवलोक अरणदेवलोक अच्युतदेवलोक॥ जो तीन किल्विषीदेव है वह मनुष्यभवमें आचार्योपाध्यायके अवगुण बादबोलके किल्विषीदेव होते है वहांपर अच्छे देव उनोंसे प्रसन्न रहते है. अपने विमानमें आने नहीं देते है अर्थात् बडा भारी तिरस्कार करते है जिनोंके तीन भेद है (१) तीन पल्योपमकि स्थितिवाले पहले दुसरे देवलोकके बाहार रहते है (२ तीन सागरोपमकी स्थितिवाले तीजा चोथा देवलोकके बाहार रहते है (३) तेरह सागरोपमकी स्थितिवाले छट्टा देवलोकके बाहार रहते है. और पांचमा देवलोकके तीसरा रिष्ट नामके प्रतरमें जो लोकांतिकदेव रहते है उनोंका नाम

सारस्वत आदित्य वन्ह वारूण गर्दतोये तुषीये अव्याबाद अगिचा और रिष्ट ॥

कल्पातित्त–जहां छोटे बडेका कायदा नही है अर्थात् जहां सबदेव 'अहमिंद्रा' है उनोंके दो भेद है ग्रीवग और अनुत्तर वैमान जिस्मे ग्रीवेगके नौ भेद है यथा—भद्दे सुभद्दे सुजाये सुमानसे सुदर्शने प्रीयदर्शने आमोय सुपडिबुद्धे और यशोधरे। अनुत्तरवैमानके पांच भेद है. विजय विजयवन्त जयन्त अपराजित और सर्वार्थ सिद्ध वैमान इति १०-१५-१६-१०-१२-९-३-९-५ एवं ९९ प्रकारके देवतोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता करनेसे १९८ भेद देवतोंके होते है देवतोंके स्थान=भुवनपतिदेवता अधोलोकमें रहते है वाणमित्र व्यंतर। ज्योतिषीदेव तीर्छालोकमें और वैमानिकदेव उर्ध्वलोकमें निवास करते है इति ।

उपर बतलाये हुये ५६३ भेद जीवोंका संक्षेपमें निर्णय—

१४ नरक सातोंका पर्याप्ता अपर्याप्ता ।

४८ तीर्यचके सूक्ष्म पृथ्वीकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता बादर पृथ्वीकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं ४ भेद अपकायके चार भेद तेउकायके च्यार भेद वायुकायके च्यार भेद और वनास्पति का सूक्षम साधारण प्रत्येक इन तीनोंमें पर्याप्ता अपर्याप्ता से छे भेद मीलाके २२ भेद. बे इन्द्रिय तेइन्द्रिय चौरिन्द्रिय इन तीनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके ६ भेद. तीर्यच पांचेन्द्रिके जलचर स्थलचर खेचर उरपुर भुजपुर यह पांच संज्ञी और पांच असंज्ञी मील दश भेद इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलके २० भेद होते है. २२-६-२० सर्व ४८ भेद ।

३०३ मनुष्य-कर्मभूमि १५ अकर्मभूमि ३० अन्तर द्विपा ५६

मीलाके १०१ भेद इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता करनेसे २०२ एकमोएक मनुष्योंके चौदा स्थानमें समुत्सम जीव उत्पन्न होते है वह अपर्याप्ता होनेसे १०१ मीलाकेमवे ३०३ देवतोंके दशभुवनपति १५ परमाधामी १६ वाणमित्र १० भजम्भृक दश जोतीषी बारहा देवलोक तीन कल्विषी नौ लोकान्तिक नौ ग्रीवेग पांच अनुतर वैमान एवं ९९ इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके १९८ भेद हुये १४-४८-३०३-१९८ एवं जीव तत्वके ५६३ भेद होते है इनके सिवाय अगर अलग अलग किया जावे तो अनंते जीवोंके अनंते भेदभी हो सकते है। इति जीव तत्व।

(२) अजीवतत्वके जडलक्षण-चैतन्यता रहित पुन्यपापका अकर्ता सुख दुःखके अभक्ता पर्याय प्राण गुणस्थान रहित द्रव्यसे अजीव शाश्वता है भूत कालमें अजीव था वर्तमान कालमें अजीव है भविष्यमें अजीव रहेगा तीनों कालमें अजीवका जीव होवे नही. द्रव्यसे अजीवद्रव्य अनंते हैं क्षेत्रसे अजीवद्रव्य लोकालोक व्यापक है कालसे अजीवद्रव्य अनादि अनंत है भावमे अगुरु लघुपर्याय संयुक्त है. नाम निक्षेपासे अजीव नाम है स्थापना निक्षेपा अजीव एसे अक्षर तथा अजीवकि स्थापना करना. द्रव्यसे अजीव अपना गुणोंको काममें नही ले. भावसे अजीव अपना गुणोंको अन्यके काममें आवे जैसे कीसीके पास एक लकडी है जबतक उन मनुष्यके वह लकडी काममें न आती हो तबतक उन मनुष्यकि अपेक्षा वह लकडी द्रव्य है और वह ही लकडी उन मनुष्यके काममें आति है तब वह लकडी भाव गीनी जाती है.

अजीवतत्वके दो भेद हैं (१) रूपी (२) अरूपी जिस्मे अरूपी अजीवके ३० भेद है यथा-धर्मास्तिकायके तीन भेद है. धर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश अधर्मास्तिकायके स्कन्ध,

देश, प्रदेश. आकाशास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश. एवं ९ भेद और एक कालका समय गीननेसे दश भेद हुवे. धर्मास्तिकाय पांच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे एक द्रव्य. क्षेत्रसे लोकव्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी जिस्मे वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श नही है गुणसे चलन गुण. जेसे पानीके आधारसे मच्छी चलती है इसी माफीक धर्मास्तिकायके आधारसे जीवाजीव गमनागमन करते है। अधर्मास्तिकाय पांच बोलोंमे जानी जाती है द्रव्यसे एक द्रव्य. क्षेत्रसे लोकव्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी वर्ण. गन्ध, रस, स्पर्श रहित, गुणसे-स्थिरगुण जैसे श्रम पाये हुए पुरुषोंको वृक्षकी छायाका दृष्टान्त। आकाशास्तिकाय पांच बोलोंसे जानी जाती है। द्रव्यसे एक द्रव्य, क्षेत्रसे लोकालोक व्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरुपी वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहित गुणसे आकाशमें विकासका गुण भींतमें खुटी तथा पानीमें पतासाका दृष्टान्त। कालद्रव्य पांच बोलोंसे जाने जाते है द्रव्यसे अनंत द्रव्य कारण काल अनंते जीव पुद्गलोंकि स्थितिको पुरण करता है इस वास्ते अनंत द्रव्य माना गया है क्षेत्रसे आढाइ द्विप परिमाणे कारण चन्द्र, सूर्यका गमनागमन आढाइद्विपमें ही है समयावलिक आदि कालका मान हो आढाइद्विपसे ही गीना जाते है. कालसे आदि अन्त रहित है भावसे अरूपी. वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श रहित है गुणसे नवी वस्तुको पुराणी करे और पुराणी वस्तुको क्षय करे जैसे कपडा कतरणीका दृष्टान्त एवं ३-३-३-१-५-५-५-५ सर्व मील अरूपी अजीवके ३० भेद हुवे.

एवं अजीवतत्त्वके ५६० भेद है निश्चयनयसे तो सर्व पुद्गल परमाणु है व्यवहारनयसे पुद्गलोंके अनेक भेद है जैसे द्वी प्रदेशी

स्कन्ध, तीन प्रदेशी स्कन्ध एवं च्यार पांच यावत् दश प्रदेशी स्कन्ध संख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध, अनंत प्रदेशी स्कन्ध कहे जाते हैं. निश्चयनयसे परमाणु जीस वर्णका होते है वह उसी वर्णपणे रहते है कारण वस्तुधर्मका नाश कीसी प्रकारसे नही होता है व्यवहारनयसे परमाणुवोंका परावर्तन भी होते है व्यवहारनयसे एक पदार्थ एक वर्णका कहा जाता है जैसे कोयल श्याम, तोताहरा, मांमजीया लाल, हल्दी पीली, हंस सुपेद परन्तु निश्चयनयसे इस सब पदार्थोंमें वर्णादि वीसों बोल पाते है कारण पदार्थोंकि व्याख्या करनेमें गौणता और मुख्यता अवश्य रहेती है जैसे कोयलकों श्यामवर्णी कही जाती है यह मुख्यता पेक्षासे कहा जाता है परन्तु गौणतापेक्षासे उनोंकि अन्दर पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श भी मीलते है इसी अपेक्षानुसार पुद्गलोंकि ५३० भेद कहते है यथा पुद्गल पांच प्रकारसे प्रणमते है (१) वर्णपणे (२) गन्धपणे ३) रसपणे (४) स्पर्शपणे (५) संस्थानपणे इनोंकि उत्तर भेद २५ है जैसे वर्ण श्याम हरा, रक्त (लाल), पीला, सुपेद. गन्ध दो प्रकार सुभिगन्ध, दुभिगन्ध रस-तिक्त, कटुक, कषायत, अम्बील, मधुर, स्पर्श, कर्कश, मृदुल, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष. संस्थान-परिमंडल (चुडीके आकार) वट (गोल लड्डुके आकार) तंस (तीन्नुणासींघाडेके आकार) चौरस-चोकीके आकार, आयतन (लंबा वांसके आकार एवं ५-२-५-८-५ मीलाके २५ भेद होते है।

कालावर्णकि पृच्छा शीष्य च्यार वर्ण प्रतिपक्षी रखके शेष कालावर्णमें दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान एवं २० बोल मीलते है इसी माफीक हरावर्णकि पृच्छा शीष्य च्यार वर्ण

प्रतिपक्षी है उन दोयवर्णमें दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान एवं वीस बोल पावे इसी माफीक लालवर्णमें २० बोल पीला वर्णमें २० बोल श्वेतवर्णमें २० बोल, कुल पांचों वर्णोंके १०० बोल होते है. सुभि गन्धकि पृच्छा दुर्भिगन्ध उसका प्रतिपक्षी जिसमें बोल पांच वर्ण पांच रस, आठ स्पर्श, पांच संस्थान एवं २३ बोल पावे इसीमाफीक दुर्भिगन्धमें भी २३ बोल पावे एवं गन्धके ४६ बोल रस तिक्त रसकि पृच्छा कषाय रस प्रतिपक्षी जिसके बोल पांच वर्ण, दो गन्ध आठ स्पर्श पांच संस्थान एवं २० एवं कटुकमें २० कषायलेमें २० आम्बिलमें २० मधुरमें २० एव पांचोंके रसके १०० बोल होते है।

एवं कर्कश स्पर्श कि पृच्छा मृदुल स्पर्श प्रतिपक्षी जिस बोल पांच-वर्ण दोगन्ध पांच रस छे स्पर्श पांच संस्थान एवं बोल २३ पावे एवं मृदुल स्पर्शमें भी २३ बोल पावे एवं गुरु स्पर्श कि पृच्छा लघु प्रतिपक्ष बोल २३ पावे एव लघुमें २३ शीतकि पृच्छा उष्ण प्रतिपक्ष बोल २३ एवं उष्णमें २३ बोल स्निग्ध कि पृच्छा रूक्ष प्रतिपक्ष बोल पावे २३ इसी माफीक रूक्ष स्पर्शमें भी २३ बोल पावे. परिमंडल संस्थान की पृच्छा वट्ट संस्थान प्रति पक्ष बोल पावे पांच वर्ण दोगन्ध पांच रस आठ स्पर्श एवं २० बोल. इसी माफीक वट संस्थानमें २० त्र्यंस संस्थानमें २० चौरंस सं-स्थानके २० आयतान संस्थानके २०। कुल बोल वर्णके १०० गन्धके ४६ रसके १०० स्पर्शके १८४ संस्थानके १०० एवं बोलोंके ५३० बोल और अरूपि अजीवके ३० बोल एवं अजीव तत्त्वके ५६० भेद होते है इसके सिवाय अजीव ५६० कहते है उसीके अनेक भेद भी होते है इति अजीवतत्त्व।

(१ पुद्गल आपके शुभ करता है पुद्गल शुभ दुर्गंध पावे करने

है और सुखपूर्वक भोगवीये जाते है जब जीवके पुन्य उदय रस विपाक में आते है तब अनेक प्रकारसे इष्टपदार्थ सामग्री प्राप्त होती है उनके जरिये देवादिके पौद्गलिक सुखोका अनुभव करते है परन्तु मोक्षार्थी पुरुषोंके लिये यह पुन्य भी सुवर्ण कि बेडी तुल्य है यद्यपि जीवको उच स्थान प्राप्त होनेमे पुन्य अवश्य सहायताभूत है जेसे कोसी पुरुषको समुद्र पार जाना है तो नौका कि आवश्यका जरूर होती है इसी माफीक मोक्ष जानेवालोंको पुन्यरूपी नौकाकी आवश्यका है मानो पुन्य-एक संसार अटवी उलंघनेके लिये भोमीयाकी माफीक सहायक सरीके है वह पुन्य नौ कारणोंसे बन्धता है यथा—

(१) अन्न पुन्य-दीनोंको अशानादि भोजन करानेसे ।
(२) पाणी-जल प्यासोंको जल पीलानेसे पुन्य होते है ।
(३) लेण पुन्य-मकान आदि स्थानका आश्रय देनासे ।
(४) सेणपुन्य-शय्या पाट पाटला आदि देनेसे पुन्य ।
(५) वस्त्रपुन्य-वस्त्र कम्बल आदि के देनेसे पुन्य ।
(६) मनपुन्य-दुसरोंके लिये अच्छा मन रखनेसे ।
(७) वचन पुन्य-दुसरोंके लिये अच्छा मधुर वचन बोलनेसे ।
(८) काय पुन्य-दुसरोंकी व्यावच या बन्दगी बजानेसे ।
(९) नमस्कार पुन्य-शुद्ध भावोंसे नमस्कार करनेसे ।

इन नौ कारणोंसे पुन्य बन्धते है वह जीव भविष्यमें उन पुन्यका फल ४२ प्रकारसे भोगवते है यथा—

सातावेदनी, शरीर आरोग्यतादि, उंचीगोत्र, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, देवगति, देवानुपूर्वी, पांचेन्द्रियजाति औदारीक शरीर, वैक्रय शरीर, आहारीक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर औदारीक शरीर अंगोपांग वैक्रयशरीर अंगोपांग, आहारीक

शरीर अंगोपांग. वज्र ऋषभनाराचसंहनन,समचतुस्रसंस्थान,शुभ वर्ण,शुभगंध शुभरस शुभस्पर्श, अगुरु लघु नाम (ज्यादा भारीभी नही ज्यादा हलका भी नही) पराघात नाम, (बलवानको भी पराजय करसके) उश्वास नाम(श्वासोश्वास सुखपूर्वक ले सके) आताप नाम. (आप शीतल होनेपर भी दुसरोंपर अपना पुरा असर पाडे) उद्योत नाम, (सूर्य कि माफीक उद्योत करने वाला हो) शुभगति (गजकी माफीक गति हो) निर्माण नाम, (अंगोपांग स्वस्वस्थानपर हो) त्रस नाम, बादर नाम, पर्याप्ता नाम प्रत्येक नाम, स्थिर नाम (दांत हाड मजबुत हो) शुभ नाम (नाभीके उपरका अंग सुशोभीत हो तथा हरेक कार्यमें दुनिया तारीफ करे) सौभाग्य नाम (सब जीवोंको प्यारा लगे और सौभाग्यको भोगवे) सुस्वर नाम जिस्का (पंचम स्वर जैसा मधुर स्वर हो) आदेय नाम (जीनोंका वचन सब लोग माने) यशो कीर्ति नाम-यश एक देशमें कीर्ति बहुत देशमे, देवतोंका आयुष्य, मनुष्यका आयुष्य. तीर्यंचका शुभ आयुष्य. और तीर्थंकर नाम, जिनके उदयसे तीनलोगमें पुजनिक होते हैं एवं ४२ प्रकृति उदय रस विपाक आनेसे जीवको अनेक प्रकारसे आहलाद सुख देती हैं जिस्के जरिये जीव धन धान्य शरीर कुटम्बानुकुल आदि सर्व सुख भोगवता हुवा धर्मकार्य साधन कर सके इसी वास्ते पुन्यको शास्त्रकारोंने घोलावा समान मदद-गार माना हुवा है इति पुन्यतत्त्व ।

(४) पापतत्त्वके अशुभ फल सुखपूर्वक बान्धते हैं. दुःखपूर्वक भोगवते है जब जीवोंके पाप उदय होते हैं तब अनेक प्रकारे अनिष्ट दशा हो नरकादि गतिमें अनेक प्रकारके दुःख रस विपाकको भोगवने पडते है कारण नरकादि गतिमें मूल्य

कारणभूत पाप ही है पाप दुनियामें लोहाकी बेडी समान है अठारा प्रकारसे जीव पाप कर्म बन्धन करते है-यथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य परपरीवाद, मायामृषावाद और मिथ्या दर्शन शल्य इस अठारा कारणोंसे जीव पाप कर्म बन्ध करते है उसीको ८२ प्रकारसे भोगवते है यथा—

ज्ञानावर्णियकर्म जीवको अज्ञानमय बना देते हैं जैसे प्राणीका बैलके नेत्रोंपर पाटा बान्ध देनेसे कीसी प्रकारका ज्ञान नही रहता है इसी माफीक जीवोंके ज्ञानावर्णियका पडल छा जानेसे कीसी प्रकारका ज्ञान नही रहता है जिस ज्ञानावर्णिय कर्मकी पांच प्रकृति है- मतिज्ञानावर्णिय श्रुतज्ञानावर्णिय, अवधिज्ञानावर्णिय, मनःपर्यवज्ञानावर्णिय, केवलज्ञानावर्णिय यह पांचों प्रकृति पांचों ज्ञानको रोक रखती है। दर्शनावर्णियकर्म जैसे राजाके पोलीयाकि माफीक धर्मराजासे मिलने तक न देवे जिस्की नौ प्रकृति है चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षुदर्शनावर्णिय अवधिदर्शनावर्णिय केवलदर्शनावर्णिय निद्रा (सुखे सोना सुखे जागना) निद्रानिद्रा (सुखे सोना दुःखे जागना) प्रचला (बेठे बेठेको निद्रा होना) प्रचलाप्रचला. (चलते फीरतेको निद्रा होना) स्त्यानर्द्धि. निद्रा (दिनको विचारा हुवा सर्व कार्य निद्रामें करे वासुदेव जितने बलवाले हो) असातावेदनीय. मिथ्यात्वमोहनिय (विप्रीतश्रद्धा अतत्व पर रुची) अनंतानुबन्धी क्रोध (पत्थरकि रेखा) मान (वज्रका स्थंभ) माया वांसकी जड़ लोभ करमजी रेसमका रंग) मान करे तो समकितकी स्थिति जावजीवकी गतिनरककी। अप्रत्याख्यानी क्रोध (तलावकी तड) मान-हाडका स्थंभ, माया में ढाका श्रृंग. लोभ नगरका कीच। मान करे तो श्रावकके व्रतोंकी

स्थिति बारहमास. गति तिर्यंचकी । प्रत्याख्यानी क्रोध-गाडाकी लीक. मान-काष्टका स्थंभ. माया-चालते बैलका मात्रा. लोभ-का जलका रंग (घात करेतो संयमकी स्थिति च्यार मासकी गति मनुष्यकी) संज्वलनके क्रोध (पाणीकी लीक) मान (तृणके स्थंभ मायाबांसकी छाल. लोभ (हल्द पतंगका रंग) घात वीतरागताकी स्थिति क्रोधकी दो मास मानकी एक मास, मायाकी पंदरादीन,लोभकी अन्तरमहूर्त. गति देवलोककी करे. और हांसी (ठठा मश्करी) भय. शोक. दुगछा रति अरति. स्त्रिवेद, पुरुषवेद. नपुंसकवेद. नरकायुष्य नरकगति नरकानुपुर्वि. तीर्यंचगति. तीर्यंचानुपुर्वि एकेन्द्रियजाति बेइन्द्रियजाति चोन्द्रियजाति ऋषभ नाराचसंहनन नाराच० अर्द्धनाराच० किलका० छेवटों संहनन. निग्रोदपरिमंडल संस्थान, सादीयो० वामनसं० कुब्जसं० हुंडकसं० स्थावरनाम सूक्ष्मनाम अपर्यात्तानाम साधारणनाम, अशुभनाम अस्थिरनाम दुर्भाग्यनाम दुःस्वरनाम अनादेयनाम अयशनाम अशुभगतिनाम, उपघातनाम निचगोत्र अशुभवर्ण गन्ध रस स्पर्श—दानान्तराय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय वीर्यान्तराय. एवं पापकर्म ८२ प्रकारसे भोगवीया जाते है इति पापतत्व ।

(५) आश्रवतत्व-जीवोंके शुभाशुभ प्रकृतिसे पुन्य पाप रूपी कर्म आनेका रहस्ता जैसे जीवरूपी तलाव कर्मरूपी नाला पुन्य पापरूपी पाणीके आनेसे जीव गुरु हो संसारमें परिभ्रमन करते है उसे आश्रवतत्व कहते हैं जिसके सामान्य प्रकारसे २० भेद है मिथ्यात्वाश्रव यावत् सूची कुशाग्र जयनासे लेना रखना आश्रव (देखो पचीस बोलमे चौदवां बोल) विशेष ४२ प्रकार प्राणातिपात (जीवहिंसा

करना) मृषावाद (झूठ बोलना) अदत्तादान चोरीका करना. मैथुन, परिग्रह (ममत्व बढाना) श्रोतेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय मन वचन काय इन आठोंको खुला रखना अर्थात् अपने कब्जामें न रखना आश्रव है क्रोध मान माया लोभ एवं १७ बोल हुवे। अब क्रिया कहते है.

काइयाक्रिया-अयत्नासे हलना चलना तथा अव्रतसे
अधिगरणियाक्रिया-नये शस्त्र बनाना तथा पुराने तैयार करा
पावसीयाक्रिया-जीवाजीवपर द्वेषभाव रखनेसे
परतापनियाक्रिया-जीवोंको परिताप देनेसे
पाणाइवाइक्रिया-जीवोंको प्राणसे मारदेनेसे
आरंभीकाक्रिया-जीवाजीवका आरंभ करनेसे
परिग्रहकिक्रिया-परिग्रहपर ममत्व मुर्च्छा रखनेसे
मायवतीयाक्रिया-कपटाइसे दशवे गुणस्थानक तक
मिथ्यादर्शनक्रिया-तत्वकि अश्रद्धना रखनेसे
अप्रत्याख्यानकिक्रिया-प्रत्याख्यान न करनेसे
दिठ्ठीयाक्रिया-जीवाजीवको सरागसे देखना
पुठ्ठीयाक्रिया-जीवाजीवको सरागसे स्पर्श करनेसे
पाडुचीयाक्रिया-दुसरेकि वस्तु देख इर्षा करना
सामंतवणिय-अपनि वस्तुका दुसरा तारीफ करनेपर आप हर्ष लानेसे
सहन्थियाक्रिया-नोकरोंकि करने योग्य कार्य अपने हाथोंसे करनेसे कारण इसमें शासनकी लघुता होती है

नसिहत्थिया अपने हाथोंसे करने योगकार्य नोकरादिसे करानेसे कारण वह लोग वेदरकारी अयत्नासे करनेसे अधिक पापका भागी होना पडता है।

आणवणियाक्रिया-राजादिके आदेशसे कार्य करनेसे
वेदारणीयाक्रिया-जीवाजीवके टुकडे कर देनेसे।
अणाभोगक्रिया-शून्योपयोगसे कार्य करनेसे
अणवकंखवत्तीया-वीतरागके आज्ञाका अनादर करनेसे
योग-प्रयोगक्रिया-अशुभ योगोंसे क्रिया लगती है
पेज्ज-रागक्रिया-माया लोभ कर दुसरोंको प्रेमसे ठगना
दोस-द्वेषक्रिया-क्रोध-मानसे लगे द्वेषको बढाना
समुदाणीक्रिया-अधर्मके कार्यमें बहुत लोग एकत्र हो वहां
सबके एकसा अध्यवसाय होनेसे सबके समुदाणी कर्म बन्धते है
इरियावहीक्रिया-वीतराग ११-१२-१३ गुणस्थानवालोंके
केवलयोगोंसे लगे-एवं २५ क्रिया

इन ४२ द्वारोंसे जीवके आश्रव आते है इति आश्रवतत्त्व।

(६) संवरतत्त्व-जीवरूपी तलाव कर्मरूपी नाला पुन्यपाप
[illegible]पी पाणी आते हुवेको संवर रूपी पाटीयासे नाला बन्ध कर
[illegible] आते हुवे पाणीको रोक देना उसे संवरतत्त्व कहते है अर्थात्
[illegible]सत्ता आत्मरमणता करनेसे आते हुवे कर्म रूकजाते है उसे
[illegible]र कहते हैं जिस्के सामान्य प्रकारसे २० भेद पैतीस बोलोंके
[illegible]र चौदवा बोलमें कह आये है अब विशेष ५७ प्रकारसे संवर
[illegible]वते है वह यहांपर लिखा जाता है।

[illegible]इर्यासमिति-देखके चलना भाषासमिति विचारके बोलना,
[illegible]समिति शुद्धाहार पाणी लेना आदानभंडोपकरण-मर्यादा
[illegible] रखना उनोंको यत्नासे वापरणा, उच्चार पासवण जल
[illegible] परिष्ठापनिकासमिति. परठन परठावण यत्नाके साथ

करना । मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति अर्थात् मन, वचन काया को अपने कब्जेमें रखना, पापारंभमें न जाने देना एवं ८ बोल. क्षुधापरिसह, पीपासापरिसह, शितपरिसह, उष्णपरिसह, दंश-मंशकपरिसह, अचेल (वस्त्र) परिसह, आरतिपरिसह, इस्थि (स्त्री) परिसह, चरिय (चलनेका) परिसह, निषेद (स्मशानोंमें कायोत्सर्ग करनेसे) शय्या परिसह (मकानादिकं अभाव) अक्रोशपरिसह, वद्यपरिसह, याचनापरिसह, अलाभपरिसह, रोगपरिसह, तृणपरिसह, मैलपरिसह, सत्कारपरिसह, प्रज्ञापरिसह, अज्ञानपरिसह, दर्शनपरिसह एवं २२ परिसहकों सहन करना समभाव रखनासे संवर होते है.

क्षमासे क्रोधका नाश करे, मुक्त निर्लोभतासे ममत्वका नाश करे, अर्ज्जवसे मायाका नाश करे, मार्दवसे मानका नाश करे, लघवसे उपाधिका नाश करे, सच्चे सत्यसे मृषावादका नाश करे, संयम से असंयमका नाश करे, तपसे पुराणे कर्मोका नाश करे, चेइये, वृद्ध मुनियोंकी अशनादिसे समाधि उत्पन्न करे, ब्रह्मचर्य. व्रत पालके सर्व गुणोंकी प्राप्त करे यह दश प्रकारके मुनिका मौख्य गुण है.

अनित्यभावना-भरत चक्रवर्तीने करी थी.
अशरणभावना-अनाथी मुनिराजने करी थी.
संसारभावना-शालीभद्रजीने करी थी.
एकत्वभावना-नमिराज ऋषिने करी थी.
असारभावना-मृगापुत्र कुमरने करी थी.
असुची भावना-सनत्कुमार चक्रवर्तीने करी थी.
आश्रवभावना-पलायची पुत्रने करी थी.

संवरभावना-केशी गौतमस्वामिने करी थी.

निर्ज्जराभावना-अर्जुन मुनि महाराजने करी थी.

लोकसारभावना-शिवराज ऋषिने करी थी.

बोधीबीज भावना-आदीश्वरके ९८ पुत्रोंने करी थी.

धर्मभावना-धर्मरूची अनगारने करी थी.

यह बारह भावना भावनेसे संवर होते है।

सामायिक चारित्र, छदोपस्थापनिय चारित्र, परिहारविशुद्ध चारित्र, सुक्ष्मसपराय चरित्र यथाख्यात चारित्र यह पांच चारित्र संवर होते है एवं ८-२२-१०-१२-५ सर्व मीलके ५७ प्रकारके संवर है इति संवरतत्त्व।

(७) निर्ज्जरातत्त्व-जीवरूपी कपडो कर्मरूपी मैल लगा हुवा है जिस्को ज्ञानरूपी पाणी तपश्चर्यारूपी साबुसे धो के उज्वल बनाये उसे निर्ज्जरातत्त्व कहते है यह निर्ज्जरा दो प्रकारकी एक देशसे आत्मप्रदेशोंको निर्मल बनावे: दुसरी सर्वसे आत्मप्रदेशों को निर्मल बनावे. जिसमें देश निर्ज्जरा दो प्रकार (१. सकाम निर्ज्जरा (२) अकाम निर्ज्जरा जैसे सम्यक् ज्ञान दर्शन बिना अनेक प्रकारके कष्ट क्रिया करनेसे कर्मनिर्ज्जरा होती है वह सब अकाम निर्ज्जरा है और सम्यक् ज्ञान दर्शन संयुक्त कष्ट क्रिया करना यह सकाम निर्ज्जरा है सकामनिर्ज्जरा और अकामनिर्ज्जरामें इतना ही भेद है जो अकामनिर्ज्जरासे कर्म दूर होते है वह कोसी भवोमें कारण पाके वह कर्म और भी चोप जाते है और सम्यक् सकामनिर्ज्जरा हुइ हो वह फीर कोसी भवमें यह कर्म जीवके नही लगते है यह ही सम्यक् ज्ञानकी बलीहारी है इसवास्ते पहिले सम्यक् ज्ञान दर्शन प्राप्त कर फीर यह निर्ज्जरा करना चाहिये।

अब सामान्य प्रकारसे निर्झराके बारहा भेद इसी माफीक है। अनसन, उनोदरी, भिक्षाचरी, रस परित्याग, कायाक्लेश, प्रतिसंलेषना, प्रायश्चित, विनय, वैयावच, स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग इनोंके विशेष ३५४ भेद है।

अनसन तपके दो भेद है (१) स्वल्पमर्यादितकाल (२) यावत् जीव जिसमे स्वल्पकालके तपका छे भेद है श्रेणितप, परतरतप, घनतप, वर्गतप, वर्गावर्गतप, आकरणीतप.

श्रेणितपके चौदा भेद है एक उपवास करे, दो उपवास करे, तीन उपवास करे, च्यार उपवास करे, पांच उपवास करे, छे उपवास करे, सात उपवास करे, अद्ध मास करे, मास करे, दो मास करे, तीन मास करे, च्यार मास करे, पांच मास करे, छे मास करे.

परतरतप जिस्के सोलह पारणा करे देखो यंत्रमे. एसी च्यार परिपाटी करे. पहले परपाटीमें विगइ सहित आहार करे दुसरी परपाटीमें विगइ रहित आहार करे, तीसरी परिपाटीमें लेप रहित आहार करे, चोथी परिपाटीमें पारणेके दिन आंबिल करे, एक उपवास कर पारणो करे, फीर दो उपवास करे, पारणो कर तीन उपवास करे, पारणो कर च्यार उपवास करे. यह पहली परिपाटी हुइ- इसी माफीक कोष्टकमें अंक माफीक तपस्या करे. अन्तरामें पारणो करे. एवं च्यार परिपाटी करे. घनतपके

१	२	३	४
२	३	४	१
३	४	१	२
४	१	२	३

चौसठ पारणा करे. च्यार परिपाटी पूर्ववत् समझना।

१	२	३	४	५	६	७	८
२	३	४	५	६	७	८	१
३	४	५	६	७	८	१	२
४	५	६	७	८	१	२	३
५	६	७	८	१	२	३	४
६	७	८	१	२	३	४	५
७	८	१	२	३	४	५	६
८	१	२	३	४	५	६	७

एक उपवास पारणो दो उपवास पारणो तीन उपवास पारणो एवं यावत् आठ उपवास कर पारणो करे यह पहली ओलीकी मर्यादा हुइ. इसी माफिक सम्पूर्ण तप करनेसे एक परिपाटी होती है. इसी माफिक च्यार परिपाटी समजना.

वर्गतप जिस्मे चौसट कोटकका यंत्र करे ४०९६ पारणे होते है.

वर्गावर्गतपके १६७७७२१६ पारणेके कोटक ४०९६ होते है.

अवर्णीतपका अनेक भेद है यथा एकावलीतप, रत्नावली तप, मुक्तावलीतप, कनकावलीतप, लुडियाकसिंहनिकलेकतप, महासिंहनिकलंक तप, भद्रतप, महाभद्रतप, सर्वतोभद्रतप, यवमध्यतप, वज्रमध्यतप, कर्मचूरतप, गुणरत्नसंवत्सरतप, आंबिल वर्द्धमानतप, तपाधिकार देखो अन्तगडसूत्रके भाषान्तर भाग १७ वा से इति स्वल्पकालकातप.

यावत् जीवके तपका तीन भेद है (१) भत्त प्रत्याख्यान,

(२) इंगीतमरण, (३) पादुगमन, जिस्में भक्तप्रत्याख्यान मरण जेसे कारणसे करे अकारण से करे, ग्रामनगरके अन्दर करे, जंगल पर्वत आदिके उपर करे, परन्तु यह अनसन सप्रतिक्रमण होते है. अर्थात् यह अनसन करनेवाले व्यावच करते भी है और कराते भी है कारण हो तो विहार भी कर सकते है दुसरा इंगीतमरणमें इतना विशेष है कि भूमिकाकी मर्यादा करते है उन भूमिसे आगे नही जा सके शेष भक्तप्रत्याख्यानकी माफीक. तीसरा पादुगमन अनसनमें यह विशेष है कि यह छेदा हुवा वृक्षकी डालके माफीक जीस आसन से अनसन करते है फीर उन आसनकों बदलाते नही है. अर्थात् काष्टकी माफीक निश्चलपणे रहते है उन्होंके अप्रतिक्रमण अनसन होते हैं यह वज्रऋषभनाराच संहननवाला ही कर सकते है इति अनसन.

(२) ओणोदरीतपके दो भेद है. (१) द्रव्य ओणोदरी (२) भाव ओणोदरी जिस्मे द्रव्य ओणोदरीके दो भेद है (१) औपधि ओणोदरी (२) भात पाणी ओणोदरी. औपधि ओणोदरीके अनेक भेद है जेसे स्वल्पवस्त्र, स्वल्प पात्र, जीर्णवस्त्र, जीर्णपात्र, एकवस्त्र, एकपात्र, दोवस्त्र, दो पात्र इत्यादि दुसरा आहार ओणोदरीके अनेक भेद है अर्थात् आहार खुराक हो उनके ३२ विभाग करले उनो से आठ विभागका आहार करे तो तीन भागकी ओणोदरी होती है और बारहा विभागका आहार करे तो आधासे अधिक० सोलहा विभागका आहार करे तो आदि० चौवीस विभागका आहार करे तो एक होस्साकी ओणोदरी होती है अगर ३१ विभागका आहार कर एक विभाग भी कम खावे तो उसे किंचित् ओणोदरी और एक विभागका हो आहार करे तो उत्कृष्ट ओणोदरी होती है अर्थात् अपनी खुराकसे किसी प्रकारसे कम खाना उसे ओणोदरी तप कहा जाता है।

भाव ऑणोदरीके अनेक भेद हैं. क्रोध नहीं करे, मान नहीं करे, माया नहीं करे, लोभ नहीं करे, रागद्वेष नहीं करे, द्वेष न करे क्लेश नहीं करे, हास्य भयादि नहीं करे अर्थात् जो कर्मबन्ध के कारण है उनोंको क्रमशः कम करना उसे ऑणोदरी कहते है।

(३) भिक्षाचारी-मुनि भिक्षा करनेको जाते है उस समय अनेक प्रकारके अभिग्रह करते है यह उत्सर्ग मार्ग है जीतना जीतना ज्ञान सहित कायाको कष्ट देना उतनी उतनी कर्मनिर्जरा अधिक होती है इसी अभिग्रहोंके यहांपर तीस बोल बतलाये जाते है। यथा —

(१) द्रव्याभिग्रह-अमुक द्रव्य मीले तो लेना.

(२) क्षेत्राभिग्रह अमुक क्षेत्रमें मीले तो लेना.

(३) कालाभिग्रह-अमुक टाइममें मीले तो लेना.

(४) भावाभिग्रह-पुरुष या स्त्री इस रूपमें दे तो लेना.

(५) उक्खीताभिग्रह-बरतन से निकालके देवे तो लेना.

(६) निक्खीताभिग्रह-बरतनमें डालताहुवा देवेतो लेना.

(७) उक्खीतनिक्खीत-ब० निकालते डालते दे तो लेना.

(८) निक्खीतउक्खीत-ब० डालते निकालते दे तो लेना.

(९) वट्टीज्जाभिग्रह-भेंटते हुवे आहार दे तो लेना.

(१०) साहारीज्जाभिग्रह-एक बरतन से दुसरे बरतनमें डालते हुवे देवे तो लेना.

(११) उवनित अभिग्रह-दातार गुण कीर्तन करके आहार देवे तो लेना.

(१२) अयनित अभिग्रह-दातार अवगुण बोलके आहार देवे तो लेना.

(१३) उयनित अथनित-पहले गुण और पीच्छे अवगुण करते हुये आहार देवे तो लेना.

(१४) अथ० उप० पहले अवगुण और पीछे गुण करता देवे.

(१५) संसठ्ठ ,, पहलेसे हाथ खरडे हुये हो वह देवे तो लेना

(१६) असंसठ्ठ ,, पहलेसे हाथ साफ हो वह देवे तो लेना.

(१७) तज्ञत ,, जोस द्रव्यसे हाथ खरडे हो वहही द्रव्य लेवे.

(१८) अणषण ,, अज्ञात कुलकि गौचरी करे।

(१९) मोण ,, मौनव्रत धारण कर गौचरी करे।

(२०) दिठ्ठाभिग्रह, अपने नेत्रोंसे देखा हुवा आहार ले.

(२१) अदिठ्ठ ,, भाजनमें पडा हुवा अदेखा हुआ " लेवे.

(२२) पुठ्ठाभिग्रह पुच्छके देवे क्या मुनि आहार लोगे तो लेना.

(२३) अपुठ्ठाभिग्रह-विनो पुच्छे दे तो आहार लेना.

(२४) भिक्ख ,, आदर रहीत तिरस्कारसे देवे तो लेना.

(२५) अभिक्ख ,, आदार सत्कार कर देवे तो लेना

(२६) अणगीलाये ,, बहुत क्षुधा लगजाने पर आहार लेवे.

(२७) ओवणिया ,, नजीक नजीक घरोंकी गोचरी करे.

(२८) परिमत ,, आहारके अनुमानसे कम आहार ले.

(२९) शुद्धेसना ,, एकही जातका निर्दोष आहार ले.

(३०) संखीदात ,, दातादिकी संख्याका मान करे.

इनके सिवाय पेडागोचरी अदपेडागोचरी संखावृतन गोचरी चमवाल गोचरी गाउगोचरी पतंगीया गोचरी इत्यादि अनेक प्रकारके अभिग्रह कर सकते हैं यह सब भिक्षाचरीके ही भेद है।

(४) रस परित्यागतपके अनेक भेद हैं सरसाहारका त्याग, निवी करे, आंबिल करे ओसामणसे एक सीतले, अरस आहार ले विरस आहार ले लुख आहार ले, तुच्छ आहार ले, अन्ताहार ले. पांताहार ले, बचा हुवा आहार ले, कोइ रांक भिक्षु, काग कुते भी नही वांच्छे एस फासुक आहार ले अपनि संयमयात्राका निर्वाहा करे.

(५) कायाक्लेशतप—काउस्सग माफीक खडा रहे. ओकडु आसन करे. पद्मासन करे वीरासन निषधासन दंडासन लगडासन, आम्रखुज्जासन गोदुआसन. पीलंकासन. अधोशिरासन. सिंहासन, कोचासन, उष्णकालमें आतापना ले, शीतकालमें वस्त्रदूर रख ध्यान करे. थुक थुके नही खाज खीणे नही मैल उतारे नही, शरीरकी विभूषा करे नही और मस्तकका लोच करे इत्यादि.

(६ पडिसलीणतातपके च्यार भेद (१) कषाय पडिसलेणता याने नयाकषाय करे नही उदय आयेको उपशान्त करे जिस्के च्यार भेद क्रोध मान माया लोभ।४। (२) इन्द्रिय पडिसलेणता, इन्द्रियोंके विषय विकारमें जातेको रोके उदय आये विषय विकारको उपशान्त करे जिस्के पांच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय (३) योगपडिसलिणता। अशुभ भागोके व्यापारको रोके और शुभ योगों के व्यापारमें प्रवृति करे जिस्के तीन भेद है, मनयोग, वचन

याग, काययोग. (४) गिवतसयनासन याने स्त्रि नपुंसक और पशु आदि विकारीक निमत्त कारण हो एसे मकानमें न रहे इति।

इन छे प्रकारके तपको बाह्यतप कहते है।

(७) प्रायश्चित्ततप-मुनि ज्ञान दर्शन चारित्रके अन्दर सम्यक् प्रकारसे प्रवृत्ति करते हुवेको कदाचित् प्रायश्चित लग जावे, तो उन प्रायश्चितकी तत्काल आलोचना कर अपनि आत्माको विशुद्ध बनाना चाहिये यथा—

दश प्रकारसे मुनिको प्रायश्चित लगते है यथा-कंदर्प पीडित होनेसे, प्रमादवश होनेसे, अज्ञातपणेसे, आतुरतासे, आपतियों पडनेसे शंका होनेसे, सहसात्कारणसे, भयोत्पन्न होनेसे द्वेषभाव प्रगट होनेसे, शिष्यकि परिक्षा करनेसे।

दश प्रकार मुनि आलोचन करते हुवे दोष लगावे. कम्पता कम्पता आलोचन करे पहले उन्मान पुच्छे कि अमुक प्रायश्चित सेवन करनेका क्या दंड होगा फीर ठीक लागे तो आलोचना करे। लोकोंनि देखा हो उन पापकि आलोचना करे दुसरेको नहीं अदेखा हुवे दोषकि आलोचना करे। बडे बडे दोषोंकी आलोचना करे. छोटे छोटे पापोंकी आलोचना करे. मंद स्वरमें आलोचना करे और लोगोंके शब्दोंसे० एक पापकी बहुतसे गीतार्थोंके पास आलोचना करे. अगीतार्थोंके पास आलोचना करे.

दशगुणोंका धर्णी हो वह आलोचना करे. जातिवन्त, कुलवन्त विनयवन्त उपशान्तकषायवन्त, जितेन्द्रियवन्त, ज्ञानवन्त, दर्शनवन्त, चारित्रवन्त, अमायवन्त, और प्रायश्चित ले के पश्चाताप न करे।

दशगुणोंके धणी के पास आलोचना लि जाति है स्वयं आचारवन्त हो. दुसरोंसे धारणवन्त हो. पांच व्यवहारके जानकार हो. लज्जा छोडाने समर्थ हो शुद्धकरने योग हो आग-

लोंके मर्म प्रकाश न करे. निर्वाहाकरने योग्य हो अनालोचनाके अनर्थ बतलानेमें चातुर हो. प्रीय धर्मी हो. और दृढधर्मी हो।

दश प्रकारके प्रायश्चित आलोचना, प्रतिक्रमण, दोनों साथमें करावे. विभाग कराना. कायोत्सर्ग कराना. तप, छेद. मूलसे फीर दीक्षा देना. अणुटप्पा. और पारंचिय प्रायश्चित इन ५० बोलोंका विशेष खुलासा है, सो शीघ्रबोध भाग २२ के अन्तमें इति।

(८) विनयतप जिस्का मूल भेद ७ है यथा. ज्ञानविनय, दर्शनविनय. चारित्रविनय. मनविनय, वचनविनय, कायविनय, लोकोपचार विनय. इन सात प्रकार विनयके उत्तर भेद १३४ है।

ज्ञानविनयके पांच भेद है मतिज्ञानका विनय करे, श्रुतिज्ञानका विनय करे. अवधि ज्ञानका विनय करे, मनः पर्यवज्ञानका विनय करे. केवलज्ञानका विनय करे. इन पांचों ज्ञानका गुण करे. भक्ति करे पूजा करे. बहुमान करे तथा इन पांचों ज्ञानके धारण करनेवालोंका बहुमान भक्ति करे तथा ज्ञानपद कि आराधना करे।

दर्शन विनयका मूल भेद दो है. (१) शुश्रुषा विनय, (२) अनाशातना विनय, जिस्में शुश्रुषा विनयका दश भेद है. गुरुमहाराजको देख खडा होना, आसनकि आमन्त्रण करना, आसन बिच्छादेना, वन्दन करना पांचांग नमाके नमस्कार करना वस्त्रादिदे के सत्कार करना गुण कीर्तनसे सन्मान करना. गुरु पधारे तो सामने लेनेको जाना. विराजे वहांतक सेवा करना. पधारे जब साथमें पहुंचानेको जाना, इत्यादि इनको शुश्रुषा विनय कहते है।

अनअशातनाविनयके ४५ भेद है अरिहन्तोंकि आशातना

न करे. अरिहंतोंके धर्मकि आ० आचार्य० उपाध्याय० स्थविर कुल० गण० संघ० क्रियावंत० संभोगी स्वाधर्मि, मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान अवधिज्ञान मनः पर्यवज्ञान और केवलज्ञान इन १५ महापुरुषोंकि आशातना न करे इन पंदरोंका बहुमान करे इन पंदरों कि सेवा भक्ति करे एवं ४५ प्रकारका विनय समझना।

नोट—दशवा बोलमें संभोगी कहा है जिस्का समवायांगजी सूत्रमें संभोग बारहा प्रकारका कहा है अर्थात् सरीखी समाचारी वाले साधुवोंके साथ अल्पा स्वल्पा करना जेसे एक गच्छके साधुवोंसे दुसरे गच्छके साधुवोंको औपधिका लेन देन रखना, सूत्र वाचनाका लेना देना, आहारपाणीका लेना देना, अर्थ वाचना लेना देना, आपसमे हाथ जोडना, आमंत्रण करना. उठके खडा होना, वन्दना करना, व्यावच करना, सायमें रहना, एक आसन पर बेठना, आलाप संलापका करना.

चारित्रविनयके पांच भेद सामायिक चारित्रका विनय करे. छदोपस्थापनिय चारित्रका विनय करे, परिहारविशुद्ध चारित्रका विनय करे, सूक्ष्म संपराय चारित्रका विनय करे. यथाख्यात चारित्रका विनय करे।

मनविनयके भेद २४ मूल भेद दोय. (१) प्रशस्त विनय, (२) अप्रशस्त विनय, जैसे प्रशस्त विनयके १२ भेद है मनको सावद्य कार्यमें जाते हुवेको रोकना, इसी माफीक पापक्रियासे रोकना, कर्कश कार्यसे रोकना. कठोर कार्यसे रोकना, फरुसतीक्षण पापसे रोकना, निष्ठुर कार्यसे रोकना, आश्रवसे रोकना, छेद करानेसे, भेद करानेसे, परितापना करानेसे, उद्रिम करानेसे और जीवोंकि घात करानेसे रोकना इस्का नाम प्रशस्त मन विनय है और इन बारहा बोलोंको विप्रीत करनेसे बारहा

प्रकारका अप्रशस्त विनय होते हैं अर्थात् विनय तो करे परन्तु मन उक्त अशुद्ध कार्यमें लगा रखे इनोंसे अप्रशस्त विनय होते हैं एवं २८ भेद मन विनयका है।

वचन विनयका भी २८ भेद हैं. मूल भेद दो. (१) प्रशस्त विनय. (२) अप्रशस्त विनय. दोनोंके २८ भेद मन विनयकि माफीक समझना।

काय विनयके १४ भेद हैं मूल भेद दो (१) प्रशस्तविनय. (२) अप्रशस्त विनय जिस्मे प्रशस्त विनय के ७ भेद हैं. उपयोग सहित यत्नापूर्वक चलना, बेठना उभारहना सुना एक वस्तुको एक दफे उलंघन करना तथा वारंवार उलंघन करना इन्द्रियों तथा कायाको सर्व कार्यमें यत्ना पूर्वक वरताना. इसी माफीक अप्रशस्त विनयके ७ भेद हैं परन्तु विनय करते समय कायाको उक्त कार्योमें अयत्नासे वरतावे एवं १४.

लोकोपचार विनयके ७ भेद हैं यथा (१) सदैव गुरुकुलवासाको सेवन करे. (२) सदैव गुरु आज्ञाको ही परिमाण करे र प्रवृति करे. (३) अन्य मुनियोंका कार्य भि यथाशक्ति के परको साता उपजावे (४ दुसरोंका अपने उपर उपकार ो इनोंके बदलेमें प्रत्युपकार करना. (५) ग्लानि मुनियों ावेपन। कर उनोंकि व्यावच्च करना. (६) द्रव्य क्षेत्र काल ो जानकर बन आचार्यादि सर्व संघका विनय करना, सर्व साधुवोंके सर्व कार्यमें सबको प्रसन्नता रखना यहही लक्षण है इति.

८ व्यावच्च तपके दश भेद हैं आचार्य महाराज उपा- ो स्थिवरजी गण (बहुताचार्य) कुल (बहुताचार्यो समुदाय संघ. स्वाधर्मि. तपस्वी मुनिको क्रिया- नवदिक्षित शिष्य इन दशों जीवोंकि बहुमान पूर्वक

व्यावच्च करे याने आहारपाणी लाके देवें और भी यथा उचित कार्यमें सहायता पहुंचाना जिनसे कर्मोंकी महा निर्जरा और संसारसमुद्रसे पार होनेका सिधा रहस्ता है।

(१०) स्वाध्याय तपके पांच भेद है. वाचना देना या लेना, पृच्छना-प्रश्नादिका पुच्छना. परावर्तना-पठनपाठन करना. अनुपेक्ष पठनपाठन कीये हुवे ज्ञानमें तत्वरमणता करना. धर्मकथा-धर्माभिलापीयोंको धर्मकथा सुनाना ॥ तीन जनोंको वाचना नहीं देना. (१) नित्य विगइ याने सरस आहारके करनेवालेको, (२) अविनयवंतको, (३) दीर्घ कषायवालेको। तीन जनोंको वाचना देना चाहिये. विनयवंतको, निरस भोजन करनेवालेको २ जिस्के क्रोध उपशान्त हो गया है तथा अन्यतीर्थी पासंडी हो धर्मका द्वेषी हो उनको भी वाचना न देनी और न उनोंसे वाचना लेनी, कारण वाचना देनेसे उनोंको विप्रीत होगा ता धर्मकी निंदा करेंगा और वाचना लेना पडे तो भी वह उपहास करेंगे कि जैनोंको हम पढाते है, हम जैनोंके गुरु है. इस वास्ते एसे धर्मद्वेषीयोंसे दूर ही रहना अच्छा है. अगर भद्रिक प्रणामी हो उसे उपदेश देना और मिथ्यात्वका रहस्ता छोडाना मुनियोंकी फर्ज है।

वाचनाकी विधिका छे भेद है. संहितापद, पदछेद, अन्वय, अर्थ, निर्युक्ति तथा सामान्यार्थ और विशेषार्थ। प्रश्नादि पूच्छनेका सात भेद है। पहले व्याख्यानादि शान्त चित्तसे श्रवण करे. गुरुवादिका बहुमान करे अर्थात् वाणि झेले हुंकारा देवे. तहकार करे अर्थात् भगवानका वचन सत्य है. जो पदार्थ समझमें नहीं आवे उसीके लिये तर्क करे, उनका उत्तर सुन विचार करे. विस्तारसे प्रश्न करे प्रश्न कीये ज्ञानको धारण कर याद रखे।

प्रश्न करनेके छे भेद है, अपनेको शंका होनेसे प्रश्न करे. दुसरे मिथ्यात्वीयोंको निरुत्तर करनेको प्रश्न करे। अनुयोग ज्ञानकी प्राप्तिके लीये प्रश्न करे. दुसरोंको बोलानेके लिये प्रश्न करे. जानता हुवा दुसरोंको बोधके लीये प्रश्न करे. अनजानता हुवा गुर्वादिकी सेवा करनेके लिये प्रश्न करे।

परावर्तन करनेके आठ भेद है काले, विनये बहुमाणे, उवहाणे, अनिन्हवणे व्यंजन अर्थ, तदुभय इन आठ आचारोंसे स्वाध्याय करे तथा इनोंकी ३४ अस्वाध्याय है उनको टालके स्वाध्याय करे. अस्वाध्याय आगे लिखी है सो देखो।

अनुप्रेक्षाके अनेक भेद है. पढा हुवा ज्ञानको वारंवार उपयोगमें लेना. ध्यान. श्रवण मनन. निदिध्यासन. वर्तन. चैतन्य नटादिके भेद करना।

धर्मकथाके च्यार भेद है. अक्षेपणी, विक्षेपणी, संवेगणी. निर्वेगणी. इनके निशाद विविध प्रकारकी धर्मकथा है.

जैन सिद्धान्त पढनेवालोंको पहलां इस माफीक—

(१) द्रव्यानुयोगके लिये न्यायशास्त्र पढो.

(२) चरणकरणानुयोगके लिये नीतिशास्त्र पढो.

(३) गणितानुयोगके लिये गणितशास्त्र पढो.

(४) धर्मकथानुयोगके लिये अलंकारशास्त्र पढो

यह च्यार लौकीक शास्त्र च्यारों अनुयोगद्वारके लिये मद-[illegible]र है इनोंके पहला गुरुकुलवासकी खास आवश्यक्ता है इस [illegible] जैनागम पढनेवालोंको पहले गुरुकुलोंकी उपासना [illegible] चाहिये

जैनागम पढनेवालोंको निम्नलिखित अस्वाध्याय टालनी चाहिये।

(१) तारों तूटे तो एक पेहर सूत्र न वांचे. (२) पश्चिम दिशा लाल रहे वहांतक सूत्र न पढे. (३) आर्द्रा नक्षत्रसे चित्रा नक्षत्र तक तो गाजविज्ञ कडेकेका काल है. इनोंके सिवाय अकाल कहा जाते है. उन अकालमें विद्युत्पात हो तो एक पहर, गाज हो तो दो पेहर, भूमिकम्प हो तो जघन्य आठ पेहर, मध्यम बारहा उत्कृष्ट सोलहा पेहर सूत्र न पढे, (४-५-६) बालचन्द्र हरेक मासके शुद १-२-३ रात्री पहले पहरमें सूत्र न पढे, (७) आकाशमें अग्निका उपद्रव हो वह न मीटे वहांतक सूत्र न पढे, (८) धूवर, (९) सुपेत धुमस, (१०) रजोघात यह तीनों जहां-तक न मीटे वहांतक सूत्र न पढे, (११) मनुष्यके हाड जिस जगहपर पडा हो उनोंसे १०० हाथ तीर्यंचका हाड ६० हाथके अन्दर हो तथा उनकी दुर्गन्ध आति हो मनुष्यका १२ वर्ष तीर्य-चका ८ वर्ष तकका हाडकी अस्वाध्याय होती है वास्ते सूत्र न पढे। (१२) मनुष्यका मांस १०० हाथ तीर्यंचका ६० हाथ काल से मनुष्यका ८ पेहर तीर्यंचके ३ पेहर इनोंकी अस्वाध्याय हो तो सूत्र न वाचे। (१३) इसी माफीक मनुष्य तीर्यंचका रुद्रकी अस्वाध्याय (१४) मनुष्यका मल मूत्र-जहांतक जिस मंडलमें हो वहांतक सूत्र न पढे तथा जहांपर दुर्गन्ध आति हो वहांभी सूत्र न पढना चाहिये। (१५) स्मशानभूमि चौतर्फ १०० हाथके अन्दर सूत्र न पढे (१६) राजमृत्यु होनेके बाद नया राजापाट न बेठे वहांतक उनोंके राज्यमें सूत्र न पढे (१७) राज-युद्ध जहांतक शान्त न हो वहांतक उनोंके राजमें सूत्र न पढे (१८) चन्द्रग्रहन (१९) सूर्यग्रहन जघन्य ८ पेहर मध्यम १२ पेहर उत्कृष्ट १६ पेहर सूत्र न पढे। (२०) पांचेन्द्रियका मृत्यु

कलेवर जीस मकानमें पडा हो वहांतक सूत्र न पढे। यह वीस अस्वाध्याय ठाणांयांगसूत्रके दशवे ठाणामें कही है। प्रभात, स्याम मध्यान्ह आदि रात्री एवं च्यार अकाल एकेक मुहुर्त तक सूत्र न पढे।२१। २२। २३।२४। आषाढ शुद १५ श्रावण वद १ भाद्रवा शुद १५ आश्विन वद १ आश्विन शुद १५ कार्तिक वद १ कार्तिक शुद १५ मागशर वद १ चैत शुद १५ वैशाख वद १ एवं दश दिन सूत्र न पढे यह १२ अस्वाध्याय निशियसूत्रके उन्नीसवे उद्देशामें कही है और दो अस्वाध्याय ठाणांयांगसूत्रमें कही है एवं सर्व मिल ३४ अस्वाध्याय अवश्य टालनी चाहिये।

सवैया—तारोतुटे. रातांदिश, अकालमें गाजविज्ञ, कडक आकाश तथा भूमि कम्प भारी है. वालचन्द्र यक्षचेन्ह आकाश अग्निकाय काली धोली धूमर और रजघात न्यारी है. हाड मांस लोहिराद दर्द मसान जले चन्द्र सूर्य ग्रहन और राजमृत्यु टालीये, पांचेन्द्रिका कलेवर राजयुद्ध सर्व मील वीस बोल टाल कर ज्ञानी आज्ञा पाली है. आसाढ. भाद्रवो. आसोज, कार्ती, चैती पुनम जाण: इनहीज पांचो मासकी पडिवा पांच व्याख्यान पडिवा पांच व्याख्यान स्याम शुभे नही भणीये। आदी रात दे फार सर्व मीली चोतीस पुणिये. चोतीस अस्वाध्याय टालके सूत्र भणले सोय, लालचन्द इनपर कहे जहां विघ्न न व्यापे कोय ॥ १ ॥ इति स्वाध्याय।

(११ ध्यान—ध्यानके च्यार भेद है. (१) आर्त्तध्यान. रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान जिस्मे आर्त्तध्यानके च्यार पाया है अच्छी मनोज्ञ वस्तुकि अभिलाषा करे. खराब अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चिनवे रोगादि अनिष्ट पदार्थोका वियोग चिनवे.

फीकर चिंता शोकका करना, आशुपातका करना, आक्रन्द शब्द करना रोना, छाती मस्तक पीटना विलापातका करना.

रौद्रध्यानके च्यार पाये. जीवहिंस्या कर खुशीमनाना, जुठ बोल खुशीमनाना, चौरी कर कुशीमनाना, दुसरोंको कारागृहमें डलाके हर्प मानना. एवं रौद्रध्यानके च्यार लक्षण है. स्वल्प अपराधका बहुत गुस्सा द्वेष रखना, ज्यादा अपराधका अत्यन्त द्वेष रखना, अज्ञानतासे द्वेष रखना, जाव जीवतक द्वेष रखना. इन परिणामवालोंको रौद्रध्यान कहते है।

धर्मध्यानके च्यार पाये. वीतरागकि आज्ञाका चिंतवन करना, कर्म आनेके स्थानोंको विचारना, कर्मोके शुभाशुभ विपाकका विचार करना, लोकका संस्थान चिंतवन करना, धर्मध्यान के च्यार लक्षण इस मुजब है आज्ञारूची याने वीतरागके आज्ञा का पालन करनेकी रूची, नि:सर्गरूची याने जातिस्मरणादिज्ञान से धर्मध्यानकि रूची होना, उपदेशरूची याने गुरवादिके उपदेश श्रवण करनेकि रूची हो. सूत्ररूची-सूत्रसिद्धान्त श्रवण कर मनन करनेकी रूची यह धर्मध्यानके च्यार लक्षण है। धर्मध्यानके च्यार अवलम्बन है. सूत्रोंकि वाचना, पृच्छना, परावर्तना और धर्मकथा कहेना. धर्मध्यानके च्यार अनुपेक्षा है. संसारको अनित्य समझना. संसारमें कोसी सरणा नही है सुखदुःख अपने आप ही को भोगवना पडेगा, यह जीव एकेला आया है और अकेला ही जायेंगा. एकत्वपणा चिंतवे. हे चैतन्य ! तुं इस संसारमें एकेक जीवोंसे कीतनो कीतनीवार संबन्ध कीया है इस संबन्धीयोंमें तेरा कोन है, तुं कीसका है, कीसके लिये तुं ममत्वभाव करता है आखीर सब संबन्धीयोंको छोडके एकलेको ही जाना पडेगा।

शुक्लध्यानके च्यार पाया है. एक ही द्रव्यमें भिन्न भिन्न गुणपर्याय अथवा उपनेवा विग्नेवा ध्रुवेवा आदि भावका विचार करना, बहुत द्रव्योंमें एक भावका चिंतवना जैसे षट्द्रव्योंमें अगुरुलघुपर्याय साधर्मिताका. चिंतवना अचलावस्थामें तीनों योगोंका निरुद्धपना चिंतवना. चौदवां गुणस्थानमें सूक्ष्मक्रियासे निवृतन होनेका चिंतवन करना.

शुक्लध्यानके च्यार लक्षण देवादिके उपसर्गसे चलायमान न होवे. सूक्ष्मभाव श्रवण कर ग्लानी न लावे, शरीरसे आत्मा अलग और आत्मासे शरीर अलग चिंतवे. शरीरको अनित्य समझ पुद्गल जो पर वस्तु जान उनका त्याग करे।

शुक्लध्यानका च्यार अवलम्बन. क्षमा करे, निर्लोभता रखे. निष्कपटी हो. मदरहित हो.

शुक्लध्यानके च्यार अनुप्रेक्षा. यह मेरा जीव अनंतवार संसारमें परिभ्रमन कीया है. इन आरापार संसारमें यह पौद्‌गलीक वस्तु सर्व अनित्य है. शुभ पुद्गल अशुभपने और अशुभ-पुद्गल शुभपने प्रणमते है इसी वास्ते पुद्गलोंसे प्रेम नही रखना एसा विचार करे। संसारमें परिभ्रमन करनेका मूल कारण शुभाशुभ कर्म है इन्होंका मूल कारण च्यार हेतु है उन्होंका त्याग कर स्वसत्ताके रमणता करना एसा विचार करे उसे शुक्ल-ध्यान कहते है इति ध्यान।

(१२) विउत्सर्गतप–त्याग करना जिसका दो भेद है (१) ...य त्याग (२) भावत्याग–जिसमें द्रव्यत्यागके च्यार भेद है ...रीरका त्याग करना. उपाधिका त्याग करना गच्छादि संघका ...ग करना. याने एकान्तमें ध्यान करे। भातपाणीका त्याग ...ना. और भावत्यागके तीन भेद है कषाय–क्रोधादिका त्याग

करना कर्म ज्ञानावर्णियादिका त्याग करना, संसारा-नरकादि गतिका त्याग करना इति त्याग ॥ इति निर्झरातत्व ।

(८) बन्धतत्व-जीवरूपी जमीन, कर्मरूपी पत्थर राग-द्वेषरूपी चुनासे मकान बनाना इसी माफीक जीवोंके शुभाशु अध्यवसायसे कर्म पुद्गल एकत्र कर आत्माके प्रदेशोंपर ब होना उसे बन्धतत्व कहते हैं.

(१) प्रकृतिबन्ध-१४८ प्रकृतियोंका बन्धना.

(२) स्थितिबन्ध-१४८ प्रकृतियोंकी स्थितिका बन्धना.

(३) अनुभागबन्ध-कर्मप्रकृति बन्धते समये रस पडन

(४) प्रदेशबन्ध-प्रदेशोंका एकत्र हो आत्मप्रदेशपर ब होना

इसपर लड्डुका दृष्टान्त जैसे लड्डु सुंठी दांनेका बनता है व प्रकृति हैं यह लड्डु कीतने काल रहेगा यह स्थिति है यह ल क्या दुगुणी सकर तीगुणी सकर चोगुणी सकरका है यह र विपाक है यह लड्डु कीतने प्रदेशोंसे बना है इत्यादि.

केवल प्रकृति और प्रदेश बन्ध योगोंसे होते है और स्थिति तथा अनुभागबन्ध कषायसे होते हैं कर्मबन्ध होनेमें मौख्य हेर च्यार है मिथ्यात्व, अव्रत, कषाय योग जिसमें मिथ्यात्व पांच प्रकारके है अभिग्रह मिथ्यात्व अनाभिग्रह मिथ्यात्व, संसयमि थ्यात्व, विपीत मिथ्यात्व अभिनिवेस मिथ्यात्व।

अव्रत-पांच इन्द्रियकि पांच अव्रत, छे कायाकि अव्रत छे बारहवीमनकि अव्रत एवं १२ अव्रत।

कषाय पांचवीस=सोलह कषाय नौ नो कषाय एवं २५.

योग पंदरा. च्यार मनका, च्यार वचनका, सात कायाका

आयुष्य कर्मबन्ध होनेका कारण-नरकायुष्य बन्धनेका च्यार कारण है महा आरंभ, महा परिग्रह पांचेन्द्रियका घाती. मांस भक्षण करना इन च्यार कारणोंसे नरकायुष्य बन्धता है। माया करे गुढ माया करे. कुडा तोल माप करे. असत्य लेख लिखना इन च्यार कारणोंसे जीव तीर्यचका आयुष्य बन्धता है। प्रकृतिका भद्रीक हो विनयवान हो. दयाका परिणाम है दुसरेकी संपत्ती देख इर्षा न करे इन च्यार कारणोंसे मनुष्यका आयुष्य बन्धता है। सराग संयम संयमासंयम, अकाम निर्ज्जरा, बालतप इन च्यार कारणोंसे देवताओंका आयुष्य बन्धता है।

नाम कर्मबन्ध के कारण-भावका सरल; भाषाका सरल कायाका सरल, और अविषमवाद योग इन च्यार कारणों शुभ नाम कर्मका बन्ध होता है तथा भावका असरल भाषाका असरल, कायाका असरल, विषमवाद योग इन च्यार कारणोंसे अशुभ नाम कर्मबन्ध होता है इति

गौत्र कर्मबन्ध के कारण जातिका मद करे. कुलका मद क बलका मद करे रूपका मद करे तपका मद करे लाभका मद क सूत्रका मद करे ऐश्वर्यका मद करे इन आठ मदके त्याग करने उच्च गौत्र कर्मका बन्ध होते हैं इनोंसे विप्रीत आठ मद करने निच गौत्र कर्मका बन्ध होते हैं।

अन्तराय कर्मबन्धके पांच कारण है दान करते हुवेको अं राय करना कीसी के लाभ होते हो उनों में अंतराय करना. भो में अन्तराय करना. उपभोग में अंतराय करना. वीर्य याने को पुरुषार्थ करता हो उनोंके अन्दर अंतराय करना. इन पांच कारणोंसे अंतराय कर्मबन्ध होते है।

(९) मोक्षतत्व-जीव रूपी सुवर्ण कर्म रूपी मेल ज्ञान दर्श चारित्र रूपी अग्निसे सोधके निर्मल करे उसे मोक्ष तत्व कहते जीव के आत्म प्रदेशोंपर कर्मदल अनादि काल से लगे हुवे

उनोंको अनेक प्रकारकी तपश्चर्या कर सर्वथा कर्मोका नाश कर जीवकों निर्मल बना अक्षयपद कों प्राप्त करना उसे मोक्ष तत्त्व कहते हैं जिस्के सामान्य चार भेद ज्ञान, दर्शन, चारित्र. वीर्य. विशेष नौ भेद है

(१) सत्पद परूपना, सिद्ध पद सदाकाल शास्वता है

(२) द्रव्य प्रमाण-सिद्धोंके जीव अनंता है।

(३) क्षेत्र प्रमाण-सिद्धोंके जीव सिद्ध शीलाके उपर पैंतालीस लक्ष योजन के विस्तारवाला एक योजनके चौवीसवां भाग में सिद्ध भगवान विराजते है।

(४) स्पर्शना-एक सिद्ध अनेक सिद्धोंको स्पर्श कर रहे हैं अनेक सिद्ध अनेक सिद्धोंको स्पर्श कर रहे है।

(५) काल प्रमाण-एक सिद्धोंकि अपेक्षा आदि है परन्तु अन्त नही है ओर बहुत सिद्धोंकि अपेक्षा आदि भी नही ओर अन्त भी नही है।

(६) अन्तर-सिद्धोंके परस्पर आंतरा नही है

(७) संख्या-सिद्धोंके जीव अनंता है वह अभव्य जीवोंसे अनंत गुणा और सर्व जीवोंके अनंतमें भाग है।

(८) भाव-सिद्धोंके जीव क्षायक ओर परिणामीक भावमें है।

(९) अल्पाबहुत्व—

(१) सर्व स्तोक चोथी नरकसे निकला सिद्ध हुवे है

(२) तीजी नरकसे निकले सिद्ध हुवे संख्यात गुणे

(३) दुजी नरकसे निकले सिद्ध हुवे संख्यात गुणा

(४) वनास्पतिसे " " "

(५) पृथ्वी कायसे " " "

(३२) पहला देवलोककी देवी .. (१२२)
(३३) पहला देवलोकके देवसे .. ::
नोट—नरकादिसे निकल मनुष्यका भव कर मोक्ष जाने कि .. अपेक्षा है।

इति मोक्ष तत्व ॥ इति नव तत्व संपूर्ण.

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्.

थोकडा नम्बर २.

(श्री पन्नवणादि सूत्रोंसे क्रियाधिकार)

(१) नामद्वार
(२) अर्थद्वार
(३) सक्रियाद्वार
(४) क्रिया कौनसे करे
(५) क्रियाकरतां कीतने कर्म बन्धे.
) कर्म बान्धतो क्रिया
) एक जीवको कीतनी०
) काइयादि क्रिया
अन्नोन्नीया क्रिया
) कीती क्रिया करे
आरंभीयादि क्रिया
क्रियाका भांगा
प्राणानिपादि
क्रियाका लगना
(१५) अल्पाबहुत्व
(१६) शरीरोत्पन्न
(१७) पांचक्रिया लागे
(१८) नौ जीवोंको क्रिया
(१९) मृगादि क्रिया
(२०) अग्नि
(२१) जाल
(२२) किरियाणे
(२३) भंड वेचे
(२४) ऋषीश्वर
(२५) अन्त क्रिया
(२६) समुद्घात
(२७) नौ क्रिया
(२८) तेरहा क्रिया
(२९) पचवीस क्रिया

इन थोकडेके सर्व १९४७२ भांगा है।

(१) नामद्वार क्रिया पांच प्रकारकि है यथा—काइया क्रिया, अधिकरणीया क्रिया, पावसिया क्रिया, परितापनिय क्रिया, पाणाइवाइया क्रिया।

(२) अर्थद्वार—काइया क्रिया-अव्रतसे लागे तथा अशुभ योगोंसे लागे। अधिगरणीया क्रिया, नयाशस्त्र बनानेसे तथ पुराणा शस्त्र तैयार करानेसे। पावसिया क्रिया—स्वात्मापर द्वेष करना, परमात्मापर द्वेष करना, उभयात्मापर द्वेष करनासे, परितापनिया क्रिया, स्वात्माको प्रताप उत्पन्न करना, परआत्माको प्रताप करना, उभयात्माको प्रताप करना, पाणाइवाइया क्रिया-स्वात्माको घात करना परात्माकी घात करना, उभयात्माकी घात करना। उसे प्राणातिपात कहते है.

(३) सक्रियद्वार—जीव सक्रिय है या अक्रिय १ जीव सक्रिय अक्रिय दोनों प्रकारका है कारण जीव दो प्रकारके है सिद्धोंके जीव, सांसारी जीव जिस्में सिद्धोंके जीवतों अक्रिय है और ससारी जीवोंके दो भेद है-सयोगि जीव, अयोगिजीव जिस्में अयोगि चौदवे गुणस्थानवाले वह अक्रिय है शेष जीव संयोगि वह सक्रिय है एवं नरकादि २३ दंडक संयोगि होनेसे सक्रिय है मनुष्य समुचय जीवकी माफीक अयोगि है वह अक्रिय है और सयोगि है वह सक्रिय है इति।

(४) क्रिया कीनसे करते है। प्राणातिपातकी क्रिया छे कायके जीवोंसे करते है. मृषावाद की क्रिया सर्व द्रव्यसे करते है। अदत्तादानकि क्रिया लेने लायक ग्रहन करने योग्य द्रव्योंसे करते है। मैथुनकि क्रिया-भोग उपभोगमें आने योग्य द्रव्यसे

अथवा रूप और रूपके अनुकुल द्रव्योंसे करते है। परिग्रहकि क्रिया सर्व द्रव्यसे करते है एवं क्रोध, मान, माय, लोभ, राग, द्वेष, कलह अभ्याख्यान, पैशुन्य परपरीवाद रति अरति माया मृषावाद और मिथ्यादर्शन इन सबकी क्रिया सर्व द्रव्यसे होती है अर्थात् प्राणातीपात, अदत्तादान, मैथुन इन तीन पापकि क्रिया देश द्रव्यी है शेष पंदरा पापकी क्रिया सर्व द्रव्यी है। समुच्चय जीवापेक्षा अठारा पापकि क्रिया बतलाइ है इसी माफीक नरकादि चौवीस दंडक भी समझ लेना. इसी माफीक समुच्चय जीवों और नरकादि चौवीस दंडकके जीवों (बहुवचन) का सूत्र भी समझना एवं ५० बोलोंको अठारा गुने करनेसे ९०० तथा १२५ पहले पांच क्रियाके भीलाके सर्व यहांतक १०२५ भांगे हुवे.

जीव प्राणातिपातकि क्रिया करता हुवा. स्यात् सात कर्म बान्धे स्यात् आठ कर्म बन्धे एवं नरकादि २४ दंडक। बहुत जीवोंकि अपेक्षा सात कर्म बान्धनेवाला भी घणा, आठ कर्म बन्धनेवाले भी घणा। बहुतसे नारकीके जीवों प्राणातिपातकि क्रिया करते हुवे. सात कर्म तो सदैव बांधते है सात कर्म बान्धने वाले बहुत आठ कर्म बांधनेवाले एक. सात कर्म बांधनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले भी बहुत है. इसी माफीक एकेन्द्रिय वर्जके १९ दंडकमें तीन तीन भांगे होनसे ५७ भांगे हुवे, एकेन्द्रिके पांच दंडकमें सात कर्म बन्धनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले भी बहुत है। इसी माफीक मृषावादादि यावत् मिथ्याशल्य अठारे पापकि क्रिया करते हुवे समुच्चय जीव और चौवीस दंडकके पूर्ववत् सात कर्म (आयुष्य वर्जके) तथा आठ कर्मोका बन्ध होते है जिस्के भांगे प्रत्येक पापके ५७ सतावन होते है सतावनको आठ गुणे करनेसे १०२६ भांगे हुवे।

जीव ज्ञानावर्णिय कर्म बान्धे तो कितनी क्रिया लागे स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लागे कारण दुसरोंके लिये अशुभयोग होनेसे तीन क्रिया लगती दुसरोंकों तकलीफ होनेसे च्यार क्रिया लगती है अगर जीवोंकि घात होतो पांचों क्रिया लगती है. जब जीव ज्ञानावर्णिय क बान्ध समय पुद्गलोंकों ग्रहन करते है उनो पुद्गल ग्रहन सम जीवोंकों तकलीफ होती है जोनसे क्रिया लगती है। इसी माफी नरकादि चौवीस दंडक एक वचनापेक्षा स्यात् ३-४-५ क्रिय लागे एवं बहुवचनापेक्षा. परन्तु यहां स्यात् नही कहना कार जीव बहुत है इसी वास्ते बहुतसी तीन क्रिया, बहुतसी च्या क्रिया बहुतसी पांच क्रिया समुचय जीव और चौवीस दंडक एक वचन। और समुचय जीव और चौवीस दंडक बहुवचन ५ सूत्र हुवे जेसे ज्ञानावर्णिय कर्मके पचास सूत्र कहा इसी माफी दर्शनावर्णिय, वेदनिय, मोहनिय, आयुष्य नाम, गौत्र औ अंतराय एवं आठों कर्मो के पचास पचास सूत्र होनेसे ४० भांगा होते है।

एक जीवने एक जीवकि कीतनी क्रिया लागे ? समुचय ए जीवने एक जीवकी स्यात् तीन क्रिया, स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लागे स्यात् अक्रिय. कारण समुचय जीव सिद्ध भगवान्‌भी सामेल है। एवं घणा जीवोंकि स्यात् ३-४-५-० एवं घणा जीवोंकों एक जीवकी स्यात् ३-४-५-० एव घणा जी वोंने घणा जीवोंकी परन्तु घणी तीन क्रिया घणी च्यार क्रिय घणी पांच क्रिया घणी अक्रिया. एवं एक जीवकों नारकी के जीवक कीतनी क्रिया लागे ? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया. स्यात् अक्रिया. कारण नारकी नोपक्रमि होनेसे मारा हुवा नही मरते इस वास्ते पांचवी क्रिया नही लागे एवं एक जीवने घणे

नारकीकी स्यात् ३-४-० । एवं घणा जीवोंने एक नारकिकी स्यात् ३-४-० एवं घणा जीवोंको घणी नारकी की तीन क्रियाभी घणी च्यार क्रियाभी घणी अक्रियाभी है. इसी माफीक १३ दंडक देवतोंकाभी समझना. तथा पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रि, तीर्यचपांचेन्द्रिय और मनुष्य यह दश दंडक औदारीकके समुचय जीवकी माफीक ३-४-५-० समझना। समुचय जीवसे समुचयजीव और चौवीस दंडकसे १०० भांगा हुवे। एक नारकीने एक जीवकी कीतनी क्रिया लागे ? स्यात् ३-४-५. क्रिया लागे एक नारकीने घणा जीवोंकि कीतनी क्रिया ? स्यात् ३-४-५. क्रिया लागे. घणी नारकीने एक जीवकी कीतनी क्रिया ? स्यात ३-४-५. क्रिया लागे. घणी नारकीने घणा जीवोंकी कीतनी क्रिया ? घणी ३-४-५ क्रिया लागे. एक नारकीने वैक्रिय शरीवाले १४ दंडकके एकेक जीवोंकी स्यात् ३-४ क्रिया लागे. एवं एक नारकीने १४ दंडकके घणा जीवोंकी स्यात ३-४ क्रिया एवं घणा नारकीने १४ दंडकोंके एकेक जीवोंकी स्यात् ३-४ क्रिया एवं घणा नारकीने १४ दडकोंके घणा जीवोंकी घणी ३-४ क्रिया लागे. इसी माफीक दश दडक औदारीकके परन्तु यह स्यात् ३-४-५ क्रिया कहना कारण वैक्रिय शरीर मारा हुवा नही मरते है और औदारीक शरीर मारा हुवा मरभी जाते है। इति नरकके १०० भांगा हुवा इसी माफीक शेष २३ दंडकके २३०० भांगा समझना परन्तु यह ध्यानमें रखना चाहिये कि मनुष्यका दंडक समुचय जीवकी माफीक कहना कारण मनुष्यमें चौदवे गुणस्थान वालोंको बिलकुल क्रिया है ही नही इस वास्ते समुचय जीवकी माफीक अक्रिय भी कहना एवं समुचयजीवके १०० और चौवीस दंडकके २४०० सर्व मील २५०० भांगे हुवे।

क्रिया पांच प्रकारकी है काइया अधिगरणीया पावसीया

परतापनिया. पाणाइवाइया. जीव काइया क्रिया करेसो क्या अधिगरणी या भी करे ? यंत्रसे देखे समुचय जीव और चौवीस

क्रियाकेनाम	काइया	अधिगरणी	पावसीया	परताप निका	पाणाई वाइया
काइयाक्रिया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
अधिगरणिया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
पावसीया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
परतापनिका	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	भजना
पाणाइवाइया	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा

दंडकमें पांच पांच क्रिया होनेसे १२५ भांगा हुवा पत्येक भांगे यंत्र मुजब नियमा भजना लगानेसे ६२५ भांगा होते है । यहतों समुचय सूत्र हुवा इसी माफीक जीस समय काइयाक्रिया करे उन समय अधिगरणीया क्रिया करे इसकाभी यंत्रकी माफीक ६२५ भांगा कहना अधिकता एक समय ? कि है इसी माफिक जीस देशमें काइया क्रिया करे उन देशमें अधिगरणीया क्रिया करे ? यत्र माफीक ६२५ भांगा कहना एवं प्रदेशकाभी ६२५ भांगा जीस प्रदेशमें काइया क्रिया करे उन प्रदेशमें अधिगरणीया क्रिया करे समुचयके ६२५ समयके ६२५ देश (विभाग) के ६२५ प्रदेशके ६२५ सर्व मीली २५०० भांगा होते हैं इसी माफीक 'अन्नोन्नीया' क्रियाकाभी उपरवत २५०० भांगा करना. विशेषता इतनी है कि समुचयमें उपयोग संयुक्त २५०० भांगा और अन्नोन्नीया उपयोग शुन्यके २५०० भांगे है एवं ५००० ।

क्रिया पांच प्रकारकि है काइयाक्रिया अधिगरणीया पावक्रिया परतापनिया पाणाइवाइकिया समुच्चयजीव और चोवीस दंडकमें पांच पांच क्रिया पावे. एवं १२५ भांगा हुवा. (१) जीव-काइया अधिकरणीया. पावक्रिया यह तीन क्रिया करे वह परतापनीया पाणाइवाइयाभी करे (२) तीन क्रिया करे वह चोथी क्रिया करे पांचमी नहीं करे. (३ तीन क्रिया करे वह चोथी पांचवी नभी करे. (४) तीन क्रिया न करे वह चोथी पांचवी क्रियाभी न करे. इसी माफीक च्यार भांगा स्पर्श करनेकाभी समझ लेना. यह समुच्चय जीवोंमें आठ भांगा कहा इसी माफीक मनुष्यमेंभी समजना शेष २३ दंडकमें चोथो आठवों भांगो छोडके छे छे भांगा समझना. कुल भांगा १५४ हुवे।

क्रिया पांच प्रकारकी है आरंभिया, परिग्रहिया, मायावत्तिया. मिथ्यादर्शन वत्तिया, अपच्चखानिया. समुच्चजीव और चोवीसदंडकमें पांच पांच क्रिया पानेसे १२५ भांगा होते है।

समुच्चयजीव आरंभियाक्रिया करे वह परिग्रहीयाक्रिया करते है या नहीं करते है देखो यंत्रसे

क्रिया नाम	आरं०	परि०	मायावत्ति	मिथ्यादर्श.	अपच्चखानि.
आरंभिया	नियमा	भजना	नियमा	भजना	भजना
परिग्रहीया	नियमा	नियमा	भजना	भजना	भजना
मायावत्तिया	भजना	भजना	नियमा	भजना	भजना
मिथ्यादर्शन	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा
अपच्चखानि	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	नियमा

एवं २५ भांगे हुवे। समुचय जीव और चौवीस दंडकपर पचवीस गुण करनेसे ६२५ भांगे हुवे. जीस समयके ६२५ जीस देशमें वे ६२५ जीस प्रदेशके ६२५ एवं सर्व २५०० एवं बहुवच नापेक्षा २५०० मीलाके सर्व ५००० भांगे हुवे।

जीव प्राणातीपातका विरमण (त्याग) करे वह छे जीवनी कायासे करे. मृषावाद का त्याग सर्व द्रव्यसे करे. अदत्तादानका त्याग ग्रहनधरण द्रव्योंसे करे मैथुनका त्याग रूप और रूप के अनुकूल द्रव्योंसे करे परिग्रह के त्याग सर्व द्रव्यसे करे. क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह अभ्याख्यान पैशुन्य परपरीवाद रति अरति मायामृषावाद और मिथ्यादर्शन शल्यका त्याग सर्व द्रव्य से करे. एवं मनुष्य तथा २३ दंडक के जीव सतरा पापों का त्याग नही कर सके मात्र पांचेन्द्रिय के १६ दंडक के जीव मिथ्यादर्शन शल्यका त्याग कर सके है शेष आठ दंडक नही करे एवं समुचय जीव और चौवीस दंडक को अठारा गुणे करनेसे ४५० भांगे होते है।

समुचय जीव प्राणातिपात का त्याग कीया हुवा कीतने कर्म बान्धे ? सात कर्म बान्धे आठ कर्म बान्धे छे कर्म बान्धे एक कर्म बान्धे तथा अबन्धकभी होता है। बहुत जीवोंकि अपेक्षा सात, आठ, छे एक कर्म बान्धनेवाले तथा अबन्धकभी होते है। इसी माफीक मनुष्यमें भी समजना शेष तेवीस दंडकमें प्राणा तिपातका सर्वथा त्याग नही होते है॥

समुचय जीवोंमें सात कर्म बान्धनेवाले तथा एक कर्म बान्धनेवाले सदैव सास्वता मीलते है और आठ, छे और अबान्धक असास्वता होते है जिनके भांगे २७ होते है।

भांगा.	सात कर्म के बांधक	आठ कर्म	छे कर्म	अबन्धक
१	३	०	०	०
२	३	१	०	०
३	३	३	०	०
४	३	०	१	०
५	३	०	३	०
६	३	०	०	१
७	३	०	०	३
८	३	१	१	०
९	३	१	३	०
१०	३	३	१	०
११	३	३	३	०
१२	३	१	०	१
१३	३	१	०	३
१४	३	३	०	१
१५	३	३	०	३
१६	३	०	१	१
१७	३	०	१	३
१८	३	०	३	१

जहांपर तीनका अंक है वह बहुवचन और एक का अंक है उसे एकवचन समझना जहां ० है वह कुच्छभी नहीं।

मनुष्य जीवकी माफीक मनुष्योंमेंभी २७ भांगे समझना. एवं ५४ एक प्राणातीपातके त्याग के ५४ भांगे हुवे इसी माफीक अठारा पापों के भी ५४-५४ भांगे गीननेसे ९७२ भांगे हुवे शेष तेवीस दंडकमें अठारा पापका विरमन नही होते है परन्तु इतना विशेष है की मिथ्यादर्शन शल्यका विरमन नारकी देवता और तीर्यंच पांचेन्द्रिय एवं १५ दंडक कर सकते है वह जीव सात आठ कर्म बान्धते है बहुत जीवों कि अपेक्षा सात कर्म बान्धनेवाले सदैव सास्वत है आठ कर्म बान्धनेवाले असास्वते है जिस्के भांगे तीन होते है (१) सात कर्म बान्धनेवाले सास्वते (२) सात कर्म बान्धनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले एक (३) सात कर्म बान्धनेवाले घने और आठ कर्म बान्धनेवालेभी बहुत है. एवं पंदरा दंडक के ४५ भांगे होते है सर्व मीलके १०१७ भांगे होते है।

मनुष्य जीव प्राणातीपातके त्याग करनेवालों के क्या आरंभकि क्रिय-

१९	३	०	३	३
२०	३	१	१	१
२१	३	१	१	३
२२	३	१	३	१
२३	३	१	३	३
२४	३	३	१	१
२५	३	३	१	३
२६	३	३	३	१
२७	३	३	३	३

लागे ! स्यात् लागे (छटे गुणस्थान) स्यात् न भी लागे (अप्रमातादि गुणस्थान) परिग्रह, मिथ्यादर्शन, और अप्रत्याख्यानकि क्रिया नही लागे-तथा मायावत्तिया क्रिया स्यात् लागे (दशवे गुणस्थान तक) स्यात् न भी लागे (वीतरागी गुणस्थान) एवं मृषावादादि यावत् मिथ्यादर्शन शल्यतक अटारा पाप के त्याग किये हुवे को समझना समुचय जीवकी माफीक मनुष्य को भी समजना शेष २३ दंडक के जीव १८ पापों के त्याग नही कर सकते है इतना विशेष है कि मिथ्यादर्शन के त्याग नारकी देवता तीर्यंच पांचेन्द्रिय एवं १५ दंडक के जीव कर सकते है उनों को मिथ्यात्वकी क्रिया नही लगती है। समुचय जीव चौवीस दंडक को अठारा पापसे गुणा करनेसे ४५० भांगे हुवे।

अल्पा बहुत्व—सर्वस्तोक मिथ्यात्वकि क्रियावाले जीव है अप्रत्याख्यानकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है. परिग्रहकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है. आरंभकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है मायावत्तिया क्रियावाले जीवविशेषाधिक है।

समुचय जीव पांच शरीर, पांच इन्द्रिय, तीनयोग उत्पन्न करते हुवे को कितनी क्रिया लगती है ? स्यात् तीन स्यात् च्यार स्यात् पांच क्रिया लगती है इसीमाफीक दशदंडकके जीव औदारीक शरीर, सतरादंडकके जीव वैक्रिय शरीर, एक मनुष्य आहारीक शरीर, चौवीस दंडकके जीव तेजस, कारमण स्पर्शेन्द्रिय और कायाका योग, शोलह दंडकके जीव श्रोत्रेन्द्रिय और मन-

योग, सतरा दंडकके जीव चक्षु इन्द्रिय, अठारा दंडकके जीव घ्राणेन्द्रिय उन्नीस दंडकके जीव रसेन्द्रिय, और वचनके योग उत्पन्न करते हुवेको स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लगती है।

मनुष्य एक जीवको एक औदारीक शरीर कि कीतनी क्रिया लागे? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया स्यात् अक्रिया, एवं एक जीवने घना औदारीक शरीरको घना जीवोंको एक औदारीक शरीर की घना जीवोंको घना औदारीक शरीरकी. घनी तीन क्रिया घनी च्यार क्रिया घनी पांच क्रिया घनी अक्रिया। एक नारकीके जीवको औदारीक शरीरकि स्यात् ३-४-५ क्रिया, एवं एक नारकीने घना औदारीक शरीरको घना नारकीयों एक औदारीक शरीरकी और घना नारकीयों घना औदारीक शरीरकी घनी ३-४-५ क्रिया लागे. एवं चौवीस दंडक मीलाके १०० भांगे हुवे. इसी माफीक जीव और वैक्रिय शरीर परन्तु क्रिया ३-४ एवं आहारीक शरीर क्रिया ३-४ लागे कारण वैक्रिय आहारीक शरीरके उपक्रम लागे नही. तेजस-कारमन शरीरके ३-४-५ क्रिया, पांचोंक शरीरसे मनुष्य जीव और चौवीस दंडक पचवीसको च्यार गुना करनेसे १०० सो भांगे हुवे एवं पांच शरीरके ५०० सो भांगे समझना।

एक मनुष्य मृगको मारते है उन्होंकि निश्चय नौ जीवोंको पांच पांच क्रिया लगती है जैसे मृग मारनेवाले मनुष्यको, धनुष्य जो बांस से बना है उन बांसके जीव अन्य गतिमें उत्पन्न हुवे है वह इस प्रत्याख्यान नहीं कीया हो तो उन्होंके शरीरसे धनुष्य बना है वास्ते मृग मारनेमें वह धनुष्य भी सहायक होनेसे उन जीवोंको भी पांच क्रिया लगती है

जीवा जो धनुष्यके अग्र भागमें सुतकी डोरी, भैसाका श्रृंग जो धनुष्यके अधोभागमें रखा जाता है. पाणच, चर्म, बाण भालोडी फूदा इन उपकरणोंके जीव जीस गतिमें है उनों सबकों पांच पांच किया लगती है। कोइ जीव मृग मारनेकों बाण तैयार कीया कांन तक खीचके बाण फेंकनेकि तैयारीमें था इतनेमें दुसरा मनुष्य आके उनका शिरच्छेद किया जीस्के जरिये वह बाण हाथसे छुटा जीनसे मृग मर गया तो कोनसा जीवके पापसे कोन स्पर्श हुवा ? मृग मारनेके परिणामवालोंकों मृगका पाप लगा और मनुष्य मारनेवालेके परिणामवालाकों मनुष्यका पाप लगा।

एक मनुष्य बांससे पाक्षी मारनेका विचारमें था. उन बाणसे पाक्षीकों मारा पाक्षी निचे गिरता हुवा उनके शरीरसे दुसरा जीव मर गया तो पाक्षी मारनेवाला मनुष्यकों पाक्षीकी पांच क्रिया और दुसरे जीवकि च्यार क्रिया लागे पाक्षीकों दुसरा जीवकी पांचों क्रिया लागे।

अग्नि— कीसी दुष्टने अग्नि लगाइ और कीस सुज्ञने अग्नि बुझाइ जिस्मे अग्नि लगानेवालेकों महाश्रव महाकर्म महाक्रिया महावेदना है और अग्नि बुझानेवालेकों स्वल्पाश्रव स्वल्पकर्म स्वल्पक्रिया, स्वल्प वेदना है कारण अग्नि लगानेवालेका परिणाम दुष्ट और बुझानेवालेका परिणाम विशुद्ध था। अग्नि जलानेके इरादेसे काष्ट कचरा एकत्र किया तथा मृगमारनेकों बाण तैयार कीया मच्छी पकडनेको जाल तैयार करी पगोंदा झालनेकों हाथ बाहार निकाला उन सबकों पांच पांच किया लगति है कारण अपना परिणाम खराब होनेसे ३ क्रिया देखके दुसरे जीवोंको तकलीफ होना ४ क्रिया इनोंसे जीव मरनेकी भावना होनेसे पांचो क्रिया लगति है।

कीसी याचकके अन्न पाणी वस्त्रादिकी आवश्यका होनेसे उने तीव्र क्रिया लगति है और कीसी दातारने अपनि वस्तुकि ममत्व उतार उसे देदी तों उन याचक कों पतली क्रिया लगती है और दातारकी ममत्व उतारनेसे उन पदार्थकि क्रिया बन्ध हो गइ है।

कियाणा-कीसी मनुष्यने कियाणा वेचा. कीसी मनुष्यने कियाणा खरीद किया, वेचनेवालेकों क्रिया हलकी हुइ, और लेनेवालोंको भारी हुइ कारण वेचनेवालोंकों तो संतोष हो गया अब लेनेवालोंको उनका संरक्षण तथा-तेजी मंदीका विचार करना पडता है माल वेचीयों तोकों तोल दीनों रूपैया लीना नहीतों वेचनेवालोंकों दोनों क्रिया हलकी. लेनेवालोंकों दोनो क्रिया भारी लगती है। मालतों तोलीयों नही और रूपैया ले लीना इनसे वेचनेवालोंकों क्रिया भारी खरीदनेवालोंकों रूपैया कि क्रिया हलकी हुइ। माल तोलके रूपैया ले लीना तो रूपैया लेनेवालोंको रूपयाकी क्रिया भारी. माल उठानेवालोंकों मालकी क्रिया भारी लगती है।

कीसी मनुष्यकी दुकानपरसे एक आदमि एक वस्तु ले गया उनकी शोधके लिये घरधणी तलास कर रहा, उनोंकों कीतनी क्रिया? जो सम्यग्दृष्टि हो तो च्यार क्रिया. मिथ्यादृष्टि हो तो पाचों क्रिया. परन्तु क्रिया भारी लागे और तलास करनेपर वह वस्तु मील जावे तो फीर वह क्रिया हलकी हो जाति है।

ऋषि—कोइ मनुष्य अम्बगजादि कोइ जीवको मारेतों उन अम्बगजादिके पापसे स्पर्श करे अगर दुसरा कोइ जीव विचमें मरजावे तो उनके पापसे भी मारनेवाला जरूर स्पर्श करे। एक

ऋषिको कोइ पापीष्ट मारे तो उन ऋषिके पापके साथ निश्चय अनंत जीवोंके पापसे स्पर्श करे कारण ऋषि अनंत जीवोंके प्रतिपालक है. इसी माफीक एक ऋषिको समाधि देना अनंत जीवोंको समाधि दीनी कहीजे.

हे भगवान् जीव अन्त क्रिया करे? जो जीव हलन चलनादि क्रिया करता है वह जीव अन्त क्रिया नही करे कारण तेरहवे गुणस्थान तक हलन चलनादि क्रिया है यहां तक अन्त क्रिया नही है चौदवे गुणस्थान योगनिरूद्ध होते है हलन चलन क्रिया बन्ध होती है तब अंत समय कि अन्त क्रिया होती है (पन्नवणा)

जीव वेदनि समुद्घात करते हुवेको स्यात् ३-४-५ क्रिया लगतो है इसी माफीक कषाय समु० मरणान्तिक समु० वैक्रिय समु० आहारीक समु० तेजस समुद्घात करते हुवेको स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे. दंडक अपने अपने कहना। (पन्नवणा)

मुनिक्रिया—मुनि जहां मासकल्प तथा चतुर्मास रहे हो फीर दुणो तिगुणोकाल व्यतीत करीयों विगर उसी नगरमें आवे तो कालान्तिकांत क्रिया लागे। वार वार उनी मकानमें उतरे तो क्रिया लागे। परंतु कोसी शरीरादि कारण हो तो ज्यादा रहना या जलदी आना भी कल्पते है।

कोसी श्रद्धालु गृहस्थने अन्य योगि सन्यासी श्रीदंडीयोंके लिये मकान बनाया है। जहांतक वह उन मकानमें न उतरे हो वहांतक साधुवोंको उन मकानमें ठेरना नही कल्पे. अगर उन मकानमें ठेरे तो अमाभि कान्त क्रिया लागे। अगर वह लोक भोगव भी लिया हो तो भी जैन मुनियोंको उन मकानमें नही ठेरना. कारण वह लोग दुर्गच्छा करे पीछा मकान धोवावे निपावे आदि पश्चात्कर्म लागे. अगर वस्तीके अभाव दातार सुलभ हो तो वस्तीवासी मुनि उनोंकी इजाजतसे ठेर भी सकते है।

वज्रक्रिया—अगर कोइ गृहस्थ मुनियोंके वास्ते (
कराया है कदाच मुनि उनमें न ठेरे तो गृहस्थ विचार
अपने रहनेका मकांन मुनिको देदो अपने दुसरा बन्ध
अगर एसा मकानमें मुनि ठेरे तो उने वज्र क्रिया लागे।

महावज्र क्रिया—कोइ श्रद्धालु गृहस्थ अन्य तीर्थीयोंके
मकांन बन्धाया है जिस्में भी उनोंका नाम सोनके अलग
मकांन बन्धाया हो उनमें तो साधुवोंको उतरना कल्पता हो न
है अगर उतरे तो महावज्र यि लागे।

सावद्य क्रिया—बहुतसे साधुवोंके नामसे एक धर्मशालादि
क मकांन कराया है उनमें मुनि ठेरे तो सावद्य क्रिया लागे. तथा
एक साधुका नामसे मकांन बनावे उनमें उतरे तो महा सावद्य
क्रिया लागे। गृहस्थ अपने भोगवने के लिये मकांन बनाया है
परन्तु साधुवोंके ठेरनेके लिये उन मकानको लीपनसे लिपावे.
छान छवावे; छपरा करावे एसा मकानमें साधुवोंको ठेरना
नही कल्पे।

अगर गृहस्थ अपने उपभोग के लिये मकांन बनाया है वह
निर्वद्य होनेसे मुनि उन मकानमें ठेरे तो उनोंको कोसी प्रकारकी
क्रिया नही लगती है उसे अल्प सावद्य क्रिया कहते है अल्प
निषेध अर्थमें माना गया है वास्ते क्रिया नही लगती है (आचा-
रांग सूत्र .

क्रिया तेरहा प्रकारकी है अर्थादंड क्रिया अपने तथा
अपने संबन्धीयों के लिये कार्य करनेमें क्रिया लगति है उसे
अर्थादंड कहते है अनर्थादंड याने विगर कारन कर्मबन्ध स्थान
सेवन करना। हिंस्यादंड क्रिया हिंस्या करनेसे. अकस्मात् दुसरा
कार्य करते बिचमें बिगर परिणामोंसे पाप हो जावे. दृष्टि विपर्यास

डानेसे पाप लागे । मृषावाद बोलनेसे क्रिया लागे । चोरी कर्म करनेसे क्रिया लागे । खराब अध्यवसायमे० मित्रद्रोहीपणा करनेसे । मानसे, मायासे, लोभसे, इर्यापथिकी क्रिया. (सूत्रकृतांग सूत्र).

हे भगवान् कोइ श्रावक सामायिक कर बेठा है उनको क्रिया क्या संपराय कि लगती है या इर्यावहि कि ? उन श्रावकको संपराय की क्रिया लगती है किन्तु इर्यापथिकी क्रिया नहा लागे । कारण सामायिकमें बेठे हुवे श्रावककी आत्मा अधिकरण है यहां अधिकरण दो प्रकारके होते है द्रव्याधिकरण हलशकटादि सीर्तो सामायिकके समय श्रावक के पास है नही और दुसरा भावाधिकरण जो क्रोध, मान, माया, लोभ. यह आत्म प्रदेशोंमें रहा हुवा है इस वास्ते श्रावकके इर्यावहि क्रिया नही लागे किन्तु संपराय क्रिया लगती है ।

बृहत्कल्पसूत्र उदेशा १ अधिकरण नाम क्रोधका है.

बृहत्कल्पसूत्र उदेशा ३ अधिकरण नाम क्रोधका है.

व्यवहारसूत्र उदेशा ४ अधिकरण नाम क्रोधका है.

निशियसूत्र उदेशा १३ वा अधिकरण नाम क्रोधका है.

भगवतिसूत्र शतक १६उ०१ आहारीकशरीरवाले मुनियोंकी कायाको भी अधीकरण कहा है

कीतनेक अज्ञलोग कहते है कि श्रावकको खानपान आदिसे साता उपजानेसे शास्त्रको तीक्षण करने जेसा पाप लगता है लेकीन यह उन लोगोंकी मूर्खता है कारण श्रावको को शास्त्रमें पात्र कहा है अम्बड श्रावक छट छट पारणा करता था यह एक दिन के पारणामें सो सो घर पारणा करता था (उववातिकसूत्र) पडिमाधारी श्रावक गौचरी कर भिक्षा लाते है दशाश्रुत स्कन्ध,

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं. २८

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जो।

थोकडा नम्बर. २०

सूत्र श्री अनुयोग द्वारादि अनेक प्रकरणोंसे.

(बालावबोध द्वार पच्चवीस)

(१) नयसात (२) निक्षेपा च्यार (३) द्रव्यगुण पर्याय (४) द्रव्य क्षेत्र काल भाव (५) द्रव्य भाव (६) कार्य कारण (७) निश्चय व्यवहार (८) उपादान निमित्त (९) प्रमाण च्यार (१०) सामान्य विशेष (११) गुणगुणी (१२) ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी (१३) उपजना, विगमना, ध्रुवना (१४) अधेय आधार (१५) आविर्भाव तिरोभाव (१६) गौणता मोख्यता (१७) उत्सर्ग अपवाद (१८) आत्मातीन (१९) ध्यान च्यार (२०) अनुयोग च्यार (२१) जागृतातीन (२२) व्याख्या नौ (२३) पक्ष आठ (२४) सप्तभंगी (२५) निगोद स्वरूप इतिद्वार ॥

नय-निक्षेपादि के विवेचनसे बड़े बड़े ग्रन्थ भरपूर है परन्तु इसी ग्रन्थ में विस्तारसे विवेचन करनेसे सामान्य बुद्धिवाले सुगमता पूर्वक लाभ उठा नहीं सकते है अतः विस्तारापेक्षा करनेसे यह [illegible] स्वरूपसे आवश्यक प्रमाण दृष्टान्त द्वारा दिखलाते ताकि [illegible] है इस थोकडे को [illegible] कंठस्थ करके [illegible] इसीसे बड़

संक्षिप्तसे सार लिख आपसे निवेदन करते है कि इस नयादिको कण्टस्थ कर फीर विवेचनवाले ग्रंथ पढो ।

(१) नयाधिकार

(१) नय—वस्तु के एक अंश को गृहन कर वक्तव्यता करना उनको नय कहते है जब वस्तुमें अनंत (पर्याय) अंश है उनोंकि वक्तव्यता करने के लिये नयभी अनंत होना चाहिये ! जीतना वस्तुमें धर्म (स्वभाव) है उनोंकि व्याख्या करनेको उतनाही नय है परन्तु स्वल्प बुद्धिवालों के लिये अनंत नयका ज्ञानको संक्षिप्त कर सात नय बतलाया है । अगर नैगमादि एकेक नयसे ही एकांत पक्ष ग्रहन कर वस्तुतत्त्वका निर्देश करे तो उनोंको नयाभास (मिथ्यात्वी) कहा जाता है कारण वस्तुमें अनंतधर्म है उनोंकि व्याख्या एकही नयसे संपुरण नही होसक्ती है अगर एक नयसे एक अंशकि व्याख्या करेंगे तो शेप जो धर्म रहे हुवे है उनोंका अभाव होगा । इसी वास्ते शास्त्रकारोंका फरमान है कि एक वस्तुमें एकेक नयकि अपेक्षा से अलग अलग धर्मकि अलग अलग व्याख्या करनासेही सम्यक् ज्ञानकि प्राप्ती हो सके उनोंकाही सम्यग्दृष्टि कहाजाते है.

इसपर हस्ती और सात अंधे मनुष्यका दृष्टान्त—एक ग्राम के बाहार पहले पहलही एक महा कायावाला हस्ति आयाथा उन समय ग्रामके सब लोग हस्ति देखनेको गये उन मनुष्योंमें सात अन्धे मनुष्य भीथे । उनोंसे एक अन्धे मनुष्यने हस्तिके दान्तापूलपे हाथ लगाके देखाकि हस्ति मुशल जैसा होता है दुसरेने शुंढपर हाथ लगाके देखा कि हस्ति हडूमान जैसा होता है तीसराने कांनोपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति सुपडे जैसा होता है चोथाने उदरपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति कोटी जैसा

होता है पांचवाने पैरोंपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति स्तंभ जैसा होता है छट्ठाने पुच्छपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति चम्र जैसा होता है सातवाने कुम्भस्थलपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति कुम्भ जैसा है हस्तिको देख ग्राम के लोग ग्राममें गये और वह सातों अन्धे मनुष्य एक वृक्ष निचे बेठे आपसमें विवाद करने लगे अपने अपने देखे हुये एकेक अंगपर मिथ्याग्रह करने लगे एक दुसरोंको झुठे बनने लगे इतनेमें एक सुज्ञ मनुष्य आया और उन सातों अन्धे मनुष्योंकि बातों सुन बोला के भाइ तुम एकेक बातको आग्रहसे तांनते हो तबतो सबके सब झूटे हो अगर मेरे कहने माफीक तुमने एकेक अंगहस्तिके देखे है अगर सातों जनों सामीलहो विचार करोंगे तो एकेकापेक्षा सातों सत्य हो। अन्धोने कहा की कैसे? तब उन सुज्ञ विद्वानने कहाकी तुमने देखा वह हस्तिका दान्ताशूल है दुसराने देखा वह हस्तिकि शुंड है यावत् सातवाने देखा वह हस्ति के पुच्छ है इतना सुनके उन अन्ध मनुष्योंको ज्ञान होगया कि हस्ति महा कायावाला है अपने जो देखा था वह हस्तिका एकेक अंग है इसका उपनय-वस्तु एक हस्ति माफीक अनेक अंश (विभाग) संयुक्त है उनको माननेवाले एक अंगको मानके शेष अंगका उच्छेद करनेसे अन्धे मनुष्योंके कदाग्रह तूल्य होते है अगर संपुरण अंगोंको अलग अलगअपेक्षासे माना जाये तों सुज्ञ मनुष्यकि माफीक हस्ती ठीकतौरपर समझ सकते है इति.

नय के मूल दो भेद है (१) द्रव्यास्तिक नय जो द्रव्यको ग्रहन करते है (२) पर्यायास्तिक नय वस्तुके पर्यायको ग्रहन करे। जिस्में द्रव्यास्तिक नयके दश भेद है यथा नित्य द्रव्यास्तिक. एक द्रव्यास्तिक, सत् द्रव्यास्तिक, वक्तव्य द्रव्यास्तिक, अशुद्ध द्रव्यास्तिक, अन्वय द्रव्यास्तिक, परमद्रव्यास्तिक, शुद्धद्रव्या-

कालमें वस्तुका अस्तित्व भाव माने जिन नैगमनय के तीन भेद है (१) अंश. (२) आरोप (३) विकल्प।

(क) अंश-वस्तुका एक अंशको ग्रहन कर वस्तुको वस्तुमाने शेष निगोदीये जीवोंको सिद्ध समान माने कारण निगोदीये जीवों के आठ रूचक प्रदेश+ सदेव निर्मल सिद्धों के माफीक है इस वास्ते एक अंशको ग्रहन कर नैगमनयवाला निगोदीये जीवोंकोभी सिद्ध ही मानते है। तथा चौदवे अयोगी गुणस्थानवाले जीवों को संसारी जीव माने; कारण उन जीवोंके अभीतक चार अघाति कर्म बाकी है अन्तर महुर्त संसार बाकी है उतने अंशको ग्रहन कर चौदवे गुणस्थानक वृति जीवोंको संसारी माने यह नैगम नयका मत है।

(ख) आरोप-आरोपके तीन भेद है (१) भूत कालका आरोप (२) भविष्य कालका आरोप (३) वर्तमान कालका आरोप जिस्मेभूत कालका आरोप जेसे भूतकालमें वस्तु हो गइ है उनको वर्तमान कालमें आरोप करना. यथा-भगवान वीरप्रभुका जन्म चैत्र शुक्ल १३ के दिन हुवा था उनका आरोप, वर्तमान कालमें कर पर्युषण में जन्म महोत्सव करना उनोकी मूर्ति स्थापन कर सेवा पूजा भक्ति करना तथा अनंते सिद्ध हो गये है उनोंके नामका स्मरण करना तथा उनोंकि मूर्ति स्थापन कर पूजन करना यह सब भूतकालका वर्तमानमें आरोप है (२) भविष्यकाल में होने वालोंका वर्तमान कालमें आरोप करना जेसे श्री पद्मनाभ

+ श्री नन्दीजी सूत्रमें कहा है कि जीवोंके अक्षर के अनन्त में भाग में कर्म दल नहीं लगे यह हो जीवका चेतन्यता गुण है अगर वहा भी कर्म लग जावे तो जीवका अजीव हो जाते है परन्तु यह कभी हुवा नहीं और होगा भी नहीं इस वास्ते ८ रूचक प्रदेश सदैव सिद्ध समान गीना जाते है

तीर्थंकर उत्सपिणी कालमें होंगे उनोंको (ठाणायांगजी सूत्र
नौंवे ठाणेमें) तीर्थंकर समझ उनोंकी मूर्ति स्थापनकर सेवाभ
करना तथा मरीचीयाके भवमें भावि तीर्थंकर समझ भरतमह
राज उनकों वन्दन नमस्कार कीथाथा. यह भविष्यकालमें होने
वालोंका वर्तमानमें आरोप करना (३) वर्तमानमें वर्तती वस्तु
का आरोप जेसे आचार्योपाध्याय तथा मुनि मत्तंगोंके गुण कीर्तन
करना यह वर्तमानका वर्तमानमे आरोप है तथा एक वस्तुमें तीन
कालका आरोप जेसे नारकी देवता जम्बुद्विप मेरुगिरी देवलोकों
में सास्वते चैत्य-प्रतिमा आदि जोजो पदार्थ तीनो कालमें सास्व
ते हैं उनोंका भूतकालमें थे भविष्यमें रहेंगे वर्तमान मे वर्त रहें
है एसा व्याख्यान करना यह एकही पदार्थ मे तीनों कालका
आरोप हो सकते है.

(ग) विकल्प-विकल्पके अनेक भेद है जेसे जेसे अध्यवसाय
उत्पन्न होते है उनको विकल्प कहते है द्रव्यास्तिक और पर्याया-
स्तिक नयके विकल्प ७०० होते है वह नय चक्र सारादि ग्रंथ से
देखना चाहिये, उन नैगमनयका मूल दो भेद है (१) शुद्ध नैगम-
नय (२) अशुद्ध नैगमनय जिसपर वसति-पायली-और प्रदेशका
दृष्टांत आगे लिखाजावेगा उसे देखना चाहिये ।

(२) संग्रहनय-वस्तुकि मूल सत्ता कों ग्रहन करे जेसे जीवों के
असंख्यात आत्म प्रदेश में सिद्धो कि सत्ता मोजुद है इस वास्ते
सर्व जीवो कों सिद्ध सामान्य माने और संग्रह-संग्रह वस्तुको ग्रहन
करनेवाले नयकोसंग्रहनय कहते है यथा 'एगे आया-एगे अणाया'
यथार्थ-जीवात्मा अनंत है परन्तु सबजीव सातकर असंख्यात
प्रदेशी निर्मल है इसी वास्ते अनन्त जीवोंका संग्रह कर 'एगे
आया' कहते है एवं अनंत पुद्गलोंमें सडन पडण विध्वंसन स्वभाव
होनेसे 'एगे अणाया' संग्रह नय वाला सामान्य माने विशेष नही

वि—मागध देशमें नगर बहुत है तुम कौनसा नगरमे रहते है ?

सा—में पाडलीपुर नगरमें निवास करता हुं.

वि०—पाडलीपुरमें तो पाडा (मोहला) बहुत है तुम०

सा०—में देवदत्त ब्राह्मणके पाडामें रहता हु।

वि०—वहां तो घर बहुत है तुम कहां रहते हो।

सा०—में मेरे घरमें रहता हु—यहांतक नैगम नय है।

संग्रहनयवाला बोलाके घरतो बहुत बडा है एसे कहो कि मे मेरे संस्ताराके अन्दर रहता हुं। व्यवहारनय वाला बोलाकि संस्तारा बहुत बडा है एसे कहो कि में मेरे शरीरमें रहता हु ऋजुसूत्रवाला बोलाकी शरीरमें हाड, मांस, रौद्र, चरबी बहुत है एसा कहो कि मे मेरे परिणाम वृत्तिमें रहता हु। शब्दनयवाला बोलाकी परिणाम मणमन है उनोमें सूक्ष्मबादर जीवोंके शरीर आदि अवगहा है वास्ते एसा कहो कि मे मेरे गुणोमे रहता हु। संभिरूढनयवाला बोला कि में मेरा ज्ञानदर्शनके अन्दर रहताहु। एवंभूतनयवाला बोला की मे मेरे अध्यात्म सत्तामें रमणता करता हु।

इसी माफीक पायलीका दृष्टान्त जेसे कोइ सुथार हाथमें कुल्हाडा ले पायलीके लिये जंगलमें काष्ट लेनेकों जा रहाथा इतनेमें विशेष नैगमनय वाला बोलाकि भाइ साहिब आप कहां जाते हो जब सामान्य नैगमनयवाला बोला कि में पायली लेनेको जाताहु. काष्ट काटते समय पुच्छने पर भी कहा कि में पायली काटता हु। घरपर काष्ट लेके आया उस समय पुच्छनेपर भी कहा कि में पायली लाया हुं यह नैगमनयका वचन है संग्रहनय सामग्री तैयार करनेसे सत्तारुप पायली मानी। व्यवहारनय

पायली तैयार करनेपर पायली मानी। ऋजुसूत्रनय
मादी होनेसे धान्य भरने पर पायली माने। शब्दन
के उपयोग अर्थात् धान्य भर के उनकि गणोती लगाने
मानी। संभिरूढनय पायली के उपयोगको पायली मान
भूतनय-सर्व दुनिया उने मंजूर करने पर पायली मानी

प्रदेशका दृष्टान्त—नैगमनयवाला कहता है कि
के प्रकारके है यथा—धर्मास्तिकायका प्रदेश, अधम
कायका प्रदेश, आकाशास्तिकायका प्रदेश, जीवास्तिक
प्रदेश, पुद्गलास्तिकायके स्कन्धका प्रदेश, तस्स देशका प्र
इस नैगमनय वालासे संग्रहनयवाला बोलाकि एसा मत
क्यो कि जो देशका प्रदेश कहा है वहां तो देश स्कन्धका है
वास्ते प्रदेश भी स्कन्धका हुवा तुमारा कहेने पर दृष्टान्त
कीसी साहुकारका दासने अपने मालक के लिये एक खर मूल
खरीद कीया तब साहुकारने कहा कि यह दास भी मेरा औ
खर भी मेरा है इस न्यायसे दास और खर दोनों साहुकारक
ही हुवा इसी माफीक स्कन्धका प्रदेश और देशका प्रदेश दोनो
पुद्गल द्रव्यका ही हुवा इस वास्ते कहो कि पांच प्रकारके प्रदेश है
यथा-धर्मास्तिकायका प्रदेश० अधर्म० प्रदेश-आकाश० प्रदेश, जी-
वप्रदेश, स्कन्ध प्रदेश, इन संग्रहनयवाले ने पांच प्रदेशमाना इस
पर व्यवहारनयवाला बोला कि पांच प्रदेश मत कहो ! क्यो कि
पांच गोटीले पुरुषोंके पास द्रव्य है वह चान्दी सुवर्ण धन धान्य
तो एसा एक गोटीले के अन्दर च्यारो धनका समावेश हो सकेगे
इसी वास्ते कहो के पांच प्रकारके प्रदेश है यथा धर्मास्तिकायका
प्रदेश यावत् स्कन्ध प्रदेश इन माफीक व्यवहारनयवाला बोलने
पर ऋजुसूत्रनयवाला बोला कि एसा मत कहो कि पांच प्रकार

के प्रदेश है कारण एसा कहनेसे यह शंका होगी कि यह पांचों प्रदेश धर्मास्तिकायका होगा। यावत् पांचो प्रदेश स्कन्धके होंगे एसे २५ प्रदेशोंकी संभावना होगी. इस वास्ते एसा कहो कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश यावत् स्यात् स्कन्धका प्रदेश है। इस पर शब्दनयवाला बोला कि एसा मत कहों कारण एसा कहनेसे यह शंका होगी कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश है वह स्यात् अधर्मास्तिकायका प्रदेश भी हो सकेगें इसी माफीक पांचों प्रदेशोंके आपसमें अनवस्थित भावना हो जायगी इस वास्ते एसा कहो कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश सो धर्मास्तिकायका प्रदेश है एवं यावत् स्यात् स्कन्ध प्रदेश सो स्कन्धका ही प्रदेश है। इसी माफीक शब्दनयवाला के कहनेपर संभिरूढनयवाला बोला कि एसा मत कहो यहांपर दो समास है तत्पुरुष और कर्मधारय जो तत्पुरुषसे कहो तो अलग अलग कहो और कर्मधारसे कहो तो विशेष कहो कारण जहां धर्मास्तिकायका एक प्रदेश है वहां जीव पुद्गलके अनंत प्रदेश है वह सब अपनि अपनि क्रिया करते है एक दुसरे के साथ मीलते नही है इस पर एवं भूतवाला बोला कि तुम एसे मत कहो कारण तुम जो जो धर्मास्तिकायादि पदार्थ कहते हो वह देश प्रदेश स्वरूप है हो नही. देश है वह भी कीसीका प्रदेश है वह भी कीसीके एक समय में स्कन्ध देश प्रदेशकी व्याख्या हो ही नही सक्ती है वस्तु भाव अभेद है अगर एक समय धर्मद्रव्य कि व्याख्या करोगे तो शेर देश प्रदेशादि शब्द निरर्थक हो जायगें तो एसा करते ही क्यों हो एक ही अभेद भाव रखो इति।

जीवपर सात नय—नैगमनय, जीव शब्दकों ही जीव माने. संग्रहनय सत्तामें असंख्यात प्रदेशी आत्माकों जीव मानें इसने अजीवात्माकों जीव नही माना, व्यवहारनय त्रस थावर के भेद

कर जीव माने, ऋजुसूत्रनय परिणामग्राही होनेसे सुख दुःख वेदते हुवे जीवोंको जीव माने इसने असंज्ञीको नही माने. शब्द-नय क्षायक गुणवालेको जीव माना, संभिरूढनयवाला केवल-ज्ञानको जीव माना, एवंभूतनय सिद्धोंको जीव माना।

सामायिक पर सात नय. नैगमनयवाला, सामायिक के परिणाम करनेवालोंको सामायिक माने. संग्रहनयवाला सामायिकके उपकरण चरवलो, मुखवस्त्रोकादि ग्रहन करनेसे सामायिक माने. व्यवहारनयवाला सामायिक दंडक उचारण करनेसे सामायिक माने. ऋजुसूत्रनयवाला ४८ मिनीट समता परिणाम रहनेसे सामायिक माने. शब्दनय अनन्तानुबन्धी चोक और मिथ्यात्वादि मोहनिका क्षय होनेसे सामायिक माने. संभिरूढ नयवाला रागद्वेषका मूलसे नाश होनेपर वीतरागको सामायिक माने. एवंभूतनय संसारसे पार होना (सिद्धावस्था) को सामायिक माने.

धर्म उपर सात नय. नैगमनय धर्मशब्दको धर्म माने. इसने सर्व धर्मवालोंको धर्म माना. संग्रहनय कुलाचारको धर्म माना. इसने अधर्मको धर्म नहो मानते हुवे नीतिको धर्म माना. व्यवहारनयवाला पुन्यादि करणीको धर्म माना. ऋजुसूत्रनयवाला अनित्यभावनाको धर्म माना इस्ने सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि दोनोंको ग्रहन कीया. शब्दनयवाला क्षायिकभावको धर्म माने. संभिरूढ केवलीयोंको धर्म माने. एवंभूतनय संपुरन धर्म प्रगट होने पर सिद्धोंको ही धर्म माने।

बाण पर सात नय. कीसी मनुष्यके बाण लगा तब नैगमनयवाला बाणका दोष समझा. संग्रहनयवाला सत्ताको ग्रहन कर बाण फेंकनेवालाका दोष समझा. व्यवहारनयवाला गृहगोचरका

दोष समझा. ऋजुसूत्रनयवाला अपने कर्मोका दोष समझा. शब्द नयवाला कर्मोके कर्ता अपने जीवका दोष समझा. समभिरूढनयवालाने भवितव्यता याने ज्ञानीयोंने अनंतकाल पहले यह ही भाव देख रखाया. एवंभूत कहता है कि जीवको तो सुख दुःख है ही नही. जीवतो आनन्दघन है।

राजा उपर सात नय. नैगमनयवाला कीसीके हाथो पगोंमें राजचिन्ह रेखा तील मसादि चिह्न देखके राजा माने. संग्रहनयवाला राजकुलमें उत्पन्न हुवा बुद्धि, विवेक, शौर्यतादि देख राजा माने. व्यवहारनयवाला युवराज पदवालेको राजा माने. ऋजुसूत्रनयवाले राजकार्यमें प्रवृत्तनेसे राजा माने. शब्दनयवाला सिंहासनपर आरूढ होनेपर राजा माने. संभिरूढनयवाला राज अवस्थाकी पर्याय प्रवृत्तनरूप कार्य करते हुयेको राजा माने. एवंभूतनय उपयोग सहित राज भोगवतो दुनियों सर्व मंजुर करे, राजाकी आज्ञा पालन करे, उन समय राजा माने. इसी माफीक सर्व पदार्थोपर सात सात नय लगा लेना इति नयद्वार।

(२) नक्षेपाधिकार.

एक वस्तुमें जैसे नय अनंत है इसी माफीक निक्षेपा भी अनंत है कहा है कि-" ज जत्थ जाणेजा, निक्खेवा निक्खेवण ठवे; ज जत्थ न जाणेज, चत्तारी निक्खेवण ठवे." भावार्थ—जहां पदार्थके व्याख्यानमें जीतने निक्षेप लगा सके उतने हो निक्षेपसे उन पदार्थका व्याख्यान करना चाहिये कारण वस्तुमें अनंत धर्म है वह निक्षेपों द्वारा ही प्रगट हो सके। परन्तु स्वल्प बुद्धिवाले वक्ता अगर ज्यादा निक्षेप नहीं कर सके; तथापि च्यार निक्षेपों के साथ उन वस्तुका विवरण अवश्य करना चाहिये। (प्रश्न) जब नयसे ही वस्तुका ज्ञान हो सकते है तो फोर निक्षेपेकि क्या

लक्षन हैं ? निक्षेपाद्वारे वस्तुका स्वरूपको जानना यह सामान्य पक्ष है और नयद्वारा जानना यह विशेष पक्ष है। कारण नय है सो भी निक्षेपाकि अपेक्षा रखते हैं, नयकि अपेक्षा निक्षेपा स्थुल है और निक्षेपाकि अपेक्षा नय सूक्ष्म है अन्यापेक्षा निक्षेपे है सो प्रत्यक्ष ज्ञान है और नय है सो परोक्ष ज्ञान है इस वास्ते वस्तुतत्व ग्रहन करनेके अन्दर निक्षेप ज्ञानकि परमावश्यकता है. निक्षेपोंके मूल भेद च्यार है यथा—नाम निक्षेप, स्थापनानिक्षेप, द्रव्यनिक्षेप और भावनिक्षेप।

(१) नामनिक्षेपा—जैसे जीव अजीव वस्तुका अमुक नाम रख दीया फीर उसी नामसे बोलानेपर उन वस्तुका ज्ञान हो उन नाम निक्षेपाका तीन भेद है. (१) यथार्थ नाम. (२) अयथार्थ नाम, (३) और अर्थशुन्य नाम जिन्मे।

यथार्थनाम—जैसे जीवका नाम जीव, आत्मा, हंस, परमात्मा, सच्चिदानंद, आनन्दघन, सदानन्द, पूर्णानन्द, नित्यानन्द, ज्ञानानन्द, ब्रह्म, शाश्वत, सिद्ध, अक्षय, अमूर्त्ति इत्यादि.

अयथार्थनाम—जीवका नाम हेमो, पेमो, मूलो, मोतो, माणक, लाल, चन्द्र, सूर्य, शार्दुलसिंह, पृथ्वीपति, नागचन्द्र इत्यादि.

अर्थशुन्यनाम—जैसे हांसी, खांसी, छींक, उभासी, मृदंग, ताल, सतार आदि ४९ जातिके वाजिंत्र यह सर्व अर्थशुन्य नाम है इनसे अर्थ कुच्छ भी नही निकलते है। इति नामनिक्षेप.

(२) स्थापना निक्षेपका—जीव अजीव कीसी प्रकारके पदार्थकि स्थापना करना उसे स्थापना निक्षेपा कहते है. जिस्के दो भेद है (१) सद्भाव स्थापना (२) असद्भाव स्थापना जिस्मे सद्भाव स्थापनाके अनेक भेद है जैसे अरिहन्तोका नाम

और अरिहन्तोंकि स्थापना (मूर्त्ति) सिद्धोंका नाम और सिद्धोंकि स्थापना एवं आचार्योपाध्याय साधु, ज्ञान, दर्शन, चारित्र इत्यादि जैसा गुण पदार्थमें है वैसे गुणयुक्त स्थापना करना उसे सत्यभाव स्थापना कहते है और असत्यभाव स्थापना जैसे गोल पत्थर रखके भेरूकि स्थापना तथा पांच सात पत्थर रख शीतलामाताकि स्थापना करनी इसमें भेरू और शीतलाका आकार तो नही है परन्तु नामके साथ कल्पना देवकी कर स्थापना करी है.

इस वास्ते हो सुज्ञ जन स्थापना देवकी आशातना टालते है जिस रीतीसे आशातना का पाप लगता है इसी माफोक भक्ति करनेका फल भी होते हैं उस स्थापनाका दश भेद हैं (सूत्र अनुयोगद्वार ।

(१) कठकम्मेवा-काष्टकि स्थापनाजैसेआचार्यादिकि प्रतिमा.

(२) पोत्थ कम्मेवा-पुस्तक आदि रखके स्थापना करना.

(३) चित्त कम्मेवा-चित्रादिकरके स्थापना करना.

(४) लेप्प कम्मेवा-लेप याने मट्टी आदिके लेपसे ॥

(५) येढीम्मेवा-पुष्पोंके बींटसे बींटकों मीलाके स्था० ॥

(६) गुंथीम्मेवा-चीडो प्रमुक को ग्रथीथ करना ॥

(७) पुरिम्मेवा-सुवर्ण चान्दी पीतलादि भरतका काम.

(८) संघाइम्मेवा-बहुत वस्तु एकत्र कर स्थापना.

(९) अखेइवा-चन्द्राकार समुद्रके अक्षकि स्थापना.

(१०) वराडइवा-संख कोडी आदि की स्थापना.

एवं दश प्रकार की सद्भाव स्थापना और दशप्रकारकी असद्भाव स्थापना एवं २० एकेक प्रकार की स्थापना एवं वीस

अनेक प्रकार कि स्थापना सर्व मील स्थापना के ४० भेद होते हैं. इनके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे भी स्थापना होती है.

प्रश्न—नाम और स्थापना में क्या भेद विशेष है ?

उत्तर—नाम यावत्काल याने चीरकाल तक रहता है और स्थापना स्वल्पकाल रहती है अथवा नाम निक्षेपाकि निष्पत् स्थापना निक्षेपा—विशेष ज्ञानका कारण है जेसे—

लोक का नाम लेना और लोक कि स्थापना (नकशा) देखना. अरिहंतोंकां नाम लेना और अरिहन्तोंकि मूर्त्ति को देखना. जम्बुद्विपका नाम लेना और नकशा देखना. मेरुयाम दिशा भांगा इत्यादि अनेक पदार्थ हैं कि जिनोंका नाम लेने कि निष्पत स्थापना (नकशा देखनेसे विशेष ज्ञान हो सकते हैं इति स्थापना निक्षेप ।

(३ द्रव्य निक्षेपा-भाव शुन्य वस्तु को द्रव्य कहते हैं जीस वस्तुमें भुतकाल मे भावगुण था तथा भविष्य में भावगुण प्रगट होनेवाला है उसे द्रव्य कहा जाता है जैसे भुतकालमें तीर्थंकर नाम कर्म उपार्जन किया है वहांसे लगाके जहांतक केवल ज्ञान उत्पन्न न हुवे ३४ अतिशय पैंतीस वाणि गुण अष्ट महा प्रतिहार प्राप्त न हुवे वहां तक द्रव्य तीर्थंकर कहा जाता है तथा तीर्थंकर मोक्ष पधारगये पे. बाद उनोंका नाम लेना वह सिद्धो का भाव निक्षेपा है परन्तु अरिहन्तोंका द्रव्य निक्षेपा है वह भूत भविष्य कालके अरिहन्त वन्दनीय पुजनीय है उन द्रव्य निक्षेपाके दो भेद है (१) आगमसे (२) नोआगमसे जिस्मे आगमसे द्रव्य निक्षेपा जो आगमों का अर्थ उपयोग शुन्यतासे करे जिस-पर आवश्यक का दृष्टान्त. यथा कोइ मनुष्य आवश्यक सुत्र का अध्ययन किया है जैसे—

पदं सिक्खितं—पद पदार्थ अच्छो तरफसे पढा हो.
ठितं—वाचनादि स्वाध्यायमें स्थिर कीया हुवा हो.
जितं—पढा हुवा ज्ञानको मूलना नही. सारणा वारणा धारणासे अस्खलित.
मितं—पद अक्षर बराबर याद रखना
परिजितं—क्रमोत्क्रम याद रखना.
नामसम—पढा हुवा ज्ञान कों स्व नामवत् याद रखना.
घोस सम—उदात्त अनुदात्त स्वर व्यञ्जन संयुक्त.
अहीण अक्खरं—अक्षर पद हीनता रहीत हो.
अणाव्वअक्खरं—अक्षर पद अधिक भी न बोले.
अव्वाइ अक्खरं—उलट पुलट अक्षर रहित.
अक्खलियं—अखिलत पणसे बोलना.
अमिलिय अक्खरं—विरामादि सयुक्त बोलना.
अवच्चामेलियं—पुनरूक्ती आदि दोषरहित बोलना.
पडि पुन्नं—अष्टस्थानोच्चारणसंयुक्त.
कठोट्ठविपमुक्त—बालक की माफीक अस्पष्टता न बोले।
गुरुवायणोवगयं—गुरु मुखसे वाचना ली हो उस माफीक
सेण तस्थ वायणाए—सूत्रार्थ की वाचना करना.
पुच्छणाए—शका होनेपर प्रश्न का पुच्छना
परिअट्ठणाए—पढा हुवा ज्ञानकि आवृत्ति करना.
धम्मकाहाए—उच्चस्वर से धर्मकथाका कहना.

इतनि शुद्धताके साथ आवश्यक करनेवाला होनेपर भी नोअणुपेहाए " जीस लिखने पढने वाचने के अन्दर जीनोंका अनुप्रेक्षा (उपयोग) नही है उन सबको द्रव्य निक्षेपा में माना

गया है अर्थात् जो काम कर रहा है उन काम को नही ज
तथा उनके मतलब को नही जानता है वह सब द्रव्यकार्य
आगमसे द्रव्य निक्षेपा.

नोआगमसे द्रव्य निक्षेपा के तीन भेद है (१) ज्ञाणग
(२) भविय शरीर (३) ज्ञाणग शरीर. भविय शरीर वितिर
जिस्में ज्ञाणगशरीर जैसे कोइ श्रावक कालधर्म प्राप्त
उनका शरीर का वन्द वस्त्र देख कीसीने कहा कि यह श्रा
आवश्यक जानता था-करता था-जैसे कीसी घृत के घडा को दे
कहाकि यह घृतका घडा था तथा मधुका घडा था। दूस
भाविय शरीर जैसे कीसी श्रावक के वहां पुत्र जन्मा उनका शरी
रादि चिन्ह देख कीसी तुझने कहा कि यह बचा आवश्यक पढेगें-
करेगें जैसे घट देख कहाकी यह घट घृतका होगा यह घट मधुका
होगा। तीसरा ज्ञाणग शरीर भविय शरीरसे वितिरक्तके तीन
भेद हैं लौकीक द्रव्यावश्यक लोकोत्तर द्रव्यावश्यक, कुप्रवचन
द्रव्य आवश्यक। लौकीक द्रव्यावश्यक जो लोक प्रतिदिन
आवश्य करने योग्य क्रिया करते हैं जैसे राजा राजेश्वर युगराजा
तलवर मांडवी कौटुम्बी सेट सेनापति सार्थवाह इत्यादि प्रातः
उठ स्नान मज्जन कर केशर चन्दन के तीलक लगा के राजसभामें
जावे इत्यादि अवश्य करने योग्य कार्य करे उसे लौकीक द्रव्या-
वश्यक कहते हैं और लोकोत्तर द्रव्यावश्यक जैसे.

जे इमे समणगुणमुक्क जोगी-लोकमें गुणरहीत साधु.
छक्काय निरणु कम्पा-छेकाया के जीवोंकी अनुकम्प रहित.
हयाइवउद्दमा—विगर लगामके अश्वकी माफीक.
गयाइव निरंकुसा— निरंकुश हस्तिकि माफीक.
घटा—शरीर वस्त्रादिको वारवार धोवे धोवावे।

मठा—शरीरको तेलादिकसे मालिसपीठी करे.
तुपुडा—नागरवेली के पानोंसे होठें को लाल बना रखे.
पैट्टर पट्ट पाउरणा—उज्वल सुपेद वस्त्री चोलपट्टा पहने।
जिणाणमणाणाए—जिनाज्ञाके भंगकों करनेवाले।
सच्छंद विहारीउणं—अपने छंदे माफीक चलनेवाला।

उभओकालं आवस्सयस्स उवटंति " अण उवओगदव्वं " दोनोंवख्त आवश्यक करने पर भी " उपयोग " न होनेसे द्रव्य-आवश्यक कहते है इति.

कुप्रवचन द्रव्यावश्यक जेसे चक्रचीरीया चर्मखंडा दंडधारी फलाहारी तापसादि प्रात: समय स्नान मञ्जन कर देव सभामें इन्द्रभुवनमें अर्थात् अपने अपने माने हुये देवस्थानमें जाके उपयोग शून्य क्रिया करे उसे कुप्रवचन द्रव्यावश्यक कहते है। इति द्रव्यनिक्षेपा।

(४) भावनिक्षेपा—जोस वस्तुका प्रतिपादन कर रहे हो उसी वस्तुमें अपना संपुरण गुण प्रगट हो गया हो उसे भाव निक्षेप कहते है जेसे अरिहन्तोका भाव निक्षेपा केवलज्ञान दर्शन संयुक्त समवसरणमे विराजमानकों भाव निक्षेप कहते है उन भावनिक्षेप के दो भेद है (१) आगमसे (२) नो आगमसे। जिस्मे आगमसे आगमोंका अर्थ उपयोग संयुक्त " उवओगो भावो " दूसरा नो आगम भावावश्यक के तीन भेद है (१) लौकीक भावावश्यक (२) लोकोत्तर भावावश्यक (३) कुप्रवचन भावावश्यक।

लौकीक भावावश्यक जेसे राजा राजेश्वर युगराजा तलवर माडम्बी कौटुम्बी सेठ सैनापति आदि प्रात: समय स्नान मञ्जन तीलक छापा कर अपने अपने माने हुवे देवोंकों भाव सहित

नमस्कार कर मुझे महाभाग्य, द्रोपदजी रामायण सुने उसे लौकीक भावावश्यक कहते हैं.

लोकोत्तर भावावश्यक जैसे साधु साध्वि श्रावक श्राविकाओं तदमन्ने तदचित्ते तदलेश्या तदअध्यवसाय उपयोग सयुक्त आवश्यक दोनोंवख्त प्रतिक्रमणादि नित्य कर्म करे उसे लोकोत्तर भावावश्यक कहते हैं।

कुप्रवचन भावावश्यक जैसे चक्रयोगीयों चर्मखंडा दंडधारा पलासा तपसादि प्रातः समय स्नान मञ्जन कर गोपीचन्दन के तीलक कर अपने माने हुवे नाग यक्ष भूतादि के देवालय में भावसहित ऊँकार शब्दादिसे देव स्तुति कर भोजन करे उसे कुप्रवचन भावावश्यक कहते हैं इति भावनिक्षेप।

कीसी प्रकारके पदार्थ का स्वरूप जानना हो उनोंको पहले च्यारों निक्षेपाओंका ज्ञान हांसल करना चाहिये। जैसे अरिहन्तोंके च्यार निक्षेप—नाम अरिहन्त सो नाम निक्षेपा—स्थापन अरिहन्त—अरिहन्तोंकि मूर्त्ति—द्रव्यारिहंत तीर्थंकर नाम गौत्र बन्धा उन समयसे केवलज्ञान न हो वहां तक—भाव अरिहन्त समवसरणमें विराजमान हो। इसी माफीक जीवपर च्यार निक्षेपा—नाम जीव सो नाम निक्षेपा, स्थापना जीव—जीवकि मूर्त्ति याने नरककी स्थापना एवं तीर्यच—मनुष्य—देव तथा सिद्धोंके जीव हो तो सिद्धोंकि मूर्त्ति—तथा सिद्ध एसा अक्षर लिखना, द्रव्य जीव—जीवपणाका उपयोग शुन्य तथा सिद्धोंका जीव हो तो जहांतक चौदवां गुण स्थान वृत्ति जीव हो वह द्रव्य सिद्ध है। भाव जीव जीवपणाका ज्ञान हो उसे भाव जीव कहते हैं

इसी माफीक अजीव पदार्थोपर भी च्यार च्यार निक्षेप लगालेना जैसे नाम धर्मास्तिकाय सो नाम निक्षेपा है धर्मास्ति-

कायका संस्थानकि स्थापना करना तथा धर्मास्तिकाय एसा अक्षर लिखना सो स्थापना निक्षेपा है जहां धर्मास्तिकाय हमारे काममें नहीं आति हो वह द्रव्य धर्मास्तिकाय द्रव्य निक्षेपहै जहां हमारे चलन में सहायता करती हो उसे भावनिक्षेप भाव धर्मास्तिकाय है इसी माफीक जीतने जीवाजीव पदार्थ है उन सब पर च्यार च्यार निक्षेपा उत्तरादेना इति निक्षेप द्वार ।

(३) द्रव्य-गुण-पर्यायद्वारद्रव्य-धर्मास्तिकाय द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य, जीवद्रव्य पौद्गल द्रव्य-कालद्रव्य इन छे द्रव्यकागुण अलग अलग है जेसे चलत गुण स्थिर गुण अवगाहन गुणउपयोग गुणमीलन पूरणगुण, वर्तनगुण, यह षट् द्रव्यके गुण है इन षट्द्रव्यके अन्दर जो अगुरु लघु पर्याय है वह समय समयमें उत्पात व्यय हुवा करती है दृष्टान्त जेसे द्रव्य एक लड्डू है उनका गुण मधुरता और पर्याय मधुरता मे न्युनाधिक होना. जेसे द्रव्य जीव गुण ज्ञानादि-पर्याय अगुरु लघु तथा पर्यायके दो भेद है (१) कर्म भावी, (२) आत्म भावी-जिस्मे कर्म भावी जो नरकादि च्यार गति मेजीव अष्टकर्म पाश में भ्रमन करते सुख दु खकी पर्यायका अनुभव करे और आत्मभावी जो ज्ञानदर्शन चारित्रको जेसा जेसा साधन कारन मीलता रहे वेसी वेसी पर्याय कि वृद्धि होती रहै ।

(४) द्रव्य क्षेत्र काल भाव द्वार — द्रव्य जीवा जीव द्रव्य-क्षेत्र आकाश प्रदेश, काल समयावलिका यावत् काल-चक्र-भाव वर्ण गन्ध रस स्पर्श-जेसे मेरु पर्वत द्रव्यसे मेरु है क्षेत्रसे लक्ष योजनका क्षेत्र अवगाहा रखा है. कालसे आदि अंत रहित है भावसे अनंतवर्ण पर्यव एवं गन्ध रस स्पर्श पर्यव अनंत है दुसरा दृष्टान्त द्रव्यसे एक जीव क्षेत्रसे असंख्यात प्रदेशी कालसे आदि

अन्त रहात भावसे ज्ञानदर्शन चारित्र संयुक्त इत्यादि सव प
योंपर द्रव्यक्षेत्र काल भाव लगा लेना. इन च्यारोंमे सर्व स्तो
काल है उनसे क्षेत्र असंख्यात गुणा है कारण एक सूचीके नि
जितने आकाश आये है उनको एकेक समय में एकेक आकाशप्रदेश
निकाले तो असंख्यात सर्पिणी उत्सर्पिणी व्यतित हो जावे. उनसे
द्रव्य अनंत गुणे है कारण एकेक आकाश प्रदेशपर अनंते अनन्ते
द्रव्य है उनोंसे भाव अनंत गुणे है कारण एकेक द्रव्यमें पर्याय
अनंत गुणी है। जैसे कोइ मनुष्य अपने घरसे मन्दिरजी आया
जिस्मे सर्व स्तोक काल स्पर्श कीया है उनोंसे क्षेत्र स्पर्श असं-
ख्यात गुणे कीया उनोंसे द्रव्यस्पर्श अनंत गुणे कीया उनोंसे भाव
स्पर्श अनंतगुण कीया। भावना उपर लिखी माफीक समझना।

(५) द्रव्य-भाव—द्रव्य है सो भावको प्रगट करने में सहा-
यता भूत है. द्रव्य जीव अमर सास्वता है भावसे जीव असा-
स्वता है. द्रव्यसे लोक सास्वता है भावसे लोक असास्वता है
द्रव्यसे नारकी सास्वती. भावसे असास्वती. अर्थात् द्रव्य है सो
मूल वस्तु है वह सदैव सास्वती है भाव वस्तुकि पर्याय है वह
असास्वती है जैसे कोसी भ्रमर ने एक काटको कोरा उसमें स्व-
भावसे क . का आकार वन गया वह (क) भ्रमरके लिये
द्रव्य (क) है और उनी (क को कीसी पंडित देख उन (क)
के पर्याय को पेच्छान के कहा कि यह क) है भ्रमर के लिये
ह द्रव्य क) है और उन पंडित के लिये भाव (क . है।

(६) कारण कार्य—कारण है सो कार्य को प्रगट करनेवाला है
र कारण कार्य वन नही सक्ता है। जैसे कुंभकार घट वनाना
तो दंड चक्रादि को सहायता अवश्य होना चाहिये जैसे
ो साहुकार को रत्नद्विप जाना है रहस्तामे ...

अब नौका कि आवश्यक्ता रहती है रत्नद्विप जाना यह कार्य है। और रत्नद्विपमें पहुंचने के लिये नौका में बेठना वह नौका कारण है। कीसी जीव को मोक्ष जाना है उनोंके लिये दान शील तप भाव पूजा प्रभावना स्वामि वात्सल्य संयम ध्यान ज्ञान मौन इत्यादि सब कारण है इन कारणोसे कार्यकी सिद्धि हो मोक्षमें जा सक्ते है। कारण कार्य के च्यार भांगा होते है।

(क) कार्य शुद्ध कारण अशुद्ध-जेसे सुबुद्धि प्रधान-दुर्गन्ध पाणी खाइसे लाके उनोंको विशुद्ध बना जयशत्रु राजाकों प्रतिबन्ध किया उन कारणमें यद्यपि अनते जीवोंकि हिंसा हुइ परन्तु कार्य विशुद्ध था कि प्रधानका इरादा राजाकोंप्रतिबोध देनेका था.

(ख) कार्य अशुद्ध है और कारण शुद्ध जेसे जमाली अनगार ने कष्ट किया तपादि बहुत ही उच्च कोटी का किया था परन्तु अपना कदाग्रह को सत्य बनाने का कार्य अशुद्ध था आखिर निन्हवों की पंक्ति में दाखल हुवा।

(ग) कारण शुद्ध ओर कार्यभी शुद्ध जेसे गुरु गौतम स्वामि आदि मुनिवर्ग तथा आनन्दादि श्रावकवर्ग इन महानुभावों का कारण तप संयम पूजा प्रभावना आदि कारण भी शुद्ध और वीतराग देवोंकी आज्ञा आराधन रूपकार्य भी शुद्ध था.

(घ) कारण अशुद्ध ओर कार्य भी अशुद्ध जेसे जीनोंकी क्रियादि प्रवृति भी अशुद्ध है कारण यज्ञ होम ऋतु दानादि भव वृद्धक किया भी अशुद्ध और इस लोक पर लोक के सुखो कि अभिलाषा रूप कार्य भी अशुद्ध है

इस वास्ते शास्त्र कारोंने कारण को मौख्यमाना है।

(७) निश्चय व्यवहार—व्यवहार है सो निश्चय को प्रगट करनेवाला है जिनशासनमें व्यवहारको बलवान माना है कारण

पहला व्यवहार होगा तो फीर निश्चय भी कभी आ जावें गे।
निश्चयमें जीव अमर है व्यवहार में जीव मरे जन्मे, निश
कर्मोंका कर्ता कर्म है व्यवहारमें कर्मोंका कर्ता जीव है, निश
जीव अव्याबाध गुणोंका भोक्ता है व्यवहार में जीव सुखदुःख
भोक्ता है निश्चयमें पाणी चवे. व्यवहार में घर चवे. निश्चयमें ल
लावे. व्य० ग्राम आवे. नि० देल चाले. व्य० गाडी चाले. नि
पाणी पडे. व्य० पनालपडे इत्यादि अनेक दृष्टान्तोंसे निश्च
व्यवहारकों समजना चाहिये. निश्चयकि श्रद्धना और व्यवहार
कि प्रवृति रखना शास्त्रकारों कि आज्ञा है।

(८) उपादान निमत्त-निमत्त है सो उपादान का साधक
बाधक है जैसे शुद्ध निमत्त मीलनेसे उपादानका साधक है अशुद्ध
निमत्त मीलना उपादानका बाधक है। जैसे उपादांन माताके
निमत्त पिताको पुत्रकि प्राप्ती हुइ-उपादांन गौको निमत्त गोपा-
लको दुध की प्राप्ती हुइ। उपादांन दुध निमत्त खटाइ दहीकी
प्राप्ती हुइ। उपादांन दहीका निमत्त भोलोने का घृतकि प्राप्ती
हुइ. उपादान गुरुका निमत्त सुशील शिष्य को ज्ञानकि प्राप्ती
हुइ. उपादांन भव्य जीवकों निमत्त ज्ञानदर्शन चारित्र तप
ध्यान मौन पूजा प्रभावनादिका जीनसे मोक्षकी प्राप्ती हुई

(९) प्रमाण च्यार—प्रत्यक्ष प्रमाण, आगम प्रमाण, अनुमान प्र-
माण ओपमा प्रमाण जिस्मे प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद ह (१) इन्द्रिय
प्रत्यक्ष प्रमाण (२) नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, इन्द्रिय प्रत्यक्ष
प्रमाण के पांच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, चक्षु इन्द्रिय
प्रत्यक्ष प्रमाण, घ्राणेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, रसेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण,
स्पर्शेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, । नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद
(१) देशसे २ सर्वसे । जिस्मे देशसेका दो भेद अवधिज्ञान
प्रत्यक्ष प्रमाण, मनःपर्यव ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण, सर्वसेका एक भेद

केवलज्ञान नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण । अर्थात् जिस्के जरिये वस्तुको प्रत्यक्ष जानी जाये उसे प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जाते है ।

(क) आगम प्रमाण—जो पदार्थका ज्ञान आगमोंद्वारा होते है उसे आगम प्रमाण कहते है उन आगम प्रमाण के बारहा भेद है आचारांगसूत्र, सूयगडायांगसूत्र, स्थानायांगसूत्र समवायांगसूत्र भगवतीसूत्र ज्ञातासूत्र उपासकदशांगसूत्र, अंतगडदशांगसूत्र अनुत्तरोववाइदशांगसूत्र प्रश्नव्याकरणसूत्र विपाकसूत्र दृष्टिवादसूत्र-अर्थ तीर्थकरोंने फरमाया है सूत्र गणधरोंने गुंथा है इस वास्ते अर्थ तीर्थंकरों के फरमाये हुये है यह सूत्र गणधरो के अतागम है और सूत्रोंका अर्थ गणधरोंके अनंतरागम है और उनोंके शिष्योंके अर्थ परम्परागम है इति आगम प्रमाण

(ख) अनुमान प्रमाण—जो वस्तु अनुमानसे जानी जावे उसे अनुमान प्रमाण कहते है उस अनुमान प्रमाणके तीन भेद है (१) पुर्व (२) सामव ३) दिट्ठि सामर्थ । जिस्मे पुर्व के च्यार भेद है जैसे कीसी माताका पुत्र बचपनमे प्रदेश गया वह युवक अवस्थामे पीच्छा घरपर आया, उन लडके को वह माता, पूर्व के चिन्होंसे पेच्छाने जैसे शरीर के तीलसे, मससे, शिरसे नाकसे आंखसे तथा कीसी प्रकारके चन्हसे माता जानेकि यह मेरा पुत्र है इसी प्रकार पिहनका भाइ स्त्रिका भरतार, मित्रका मित्र इनोंको अनुमान चन्हसे पेच्छाना जाय, यह पूर्व प्रमाण है दुसरा सामन्य अनुमान प्रमाण के पांच भेद है कज्जेणं कारणेणं, गुणेणं, आसयेणं, अवयवेणं । जिस्मे कज्जेणका च्यार भेद है, गुलगुलाट कर हस्ति जाने, हणहणाट कर अश्व जाने, हणहणाट कर रथ जाने कलकलाट कर मनुष्य समुह जाने अर्थात् इस अनुमानसे उक्त वातों ज्ञान सके ।

(ट) कारणेण के पांच भेद है यथा घटका कारण मट्टि है

किन्तु मट्टिका कारण घट नही है। पटका कारण तंतु है किन्तु तंतुका कारण पट नही है। रोटीका कारण आटा है किन्तु आटाका कारण रोटी नही है। सुवर्णका कारण कसोटी है किन्तु कसोटीका कारण सुवर्ण नही है। मोक्षका कारण ज्ञान दर्शन चारित्र है किन्तु ज्ञान दर्शन चारित्रका कारण मोक्ष नही है।

(ख) गुणेणके छे भेद है जैसे पुष्पोंमें सुगन्धका गुण, सुवर्णमें कोमलताका गुण, दुधमें पौष्टिक गुण, मधुमें स्वादका गुण, कपडामें स्पर्शका गुण, चैतन्यमें ज्ञान गुण, परमेश्वरमें पर उपकारका गुण। इत्यादि।

(ग) आश्रयणका छे भेद है. धुंवेको देख जाने कि यहां अग्नि होगा, विद्युत् बादलोंको देख जाने कि वर्षात होगें, बुंद देखके जाने कि यहां पाणी होगें। अच्छी प्रवृत्ति देख जाने कि यह कोइ उत्तम कुलका मनुष्य है। साधुको देख जाने यह अच्छा शील सत्यवान होगें। प्रतिमा देख जाने यह परमेश्वरका स्वरूप है।

(घ) आवयवेणके अठारा भेद है। यथा—दान्ताशूल से हस्ति जाने, शृंगकर भेंसा जाने, शिखासे कुर्कट जाने, तिक्षण दांतोंसे सुवर जाने, विचित्र वर्णवाली पांखो से मयूर जाने, स्कन्धकर अश्व जाने, नखकर व्याघ्र जाने, केशकर चमरी गौ जाने, लम्बी पुच्छ कर बंदर जाने, दो पांवसे मनुष्य जाने, च्यार पांवोंसे पशु जाने, बहु पावोंसे कानखजुरा जाने, केसरो करके शार्दूलसिंह जाने, चुडीयों से औरत जाने, हथियार से सुभट जाने, एक काव्यसे कवि जाने, एक दांणाकर रांधा हुवा अन्नको जाने। एक व्याख्यान से पंडित जाने, दयाका परिणाम कर सम्यक्त्व जीव जाने, शान्तवृत्ति स्वांसे मन्दकषाय जाने प्रतिबिंब देख परमेश्वर जाने इत्यादि-इतिमात्रये अनुमान प्रमाणके पांच भेद हुवे।

(३) दिट्ठिसामप्रके अनेक भेद—जेसे सामान्य से विशेष जाने, विशेष से सामान्य जाने, एक शिकाका रुपैयाको देख बहुत से रुपैयोंको जाने, एक देशके मनुष्यको देख बहुत से मनुष्योंको जाने इत्यादि। यह भी अनुमान प्रमाण है।

और भी अनुमान प्रमाण से तीन कालकि बातोंको जाने. जेसे कोइ प्रभावक मुनि विहार करते किसी देशमें जाते समय बागवगीचे शुके हुवे देखे, धरती कादे कीचड रहीत देखी, लाटों आदिमें धानके समूह कम देखा, इसपर मुनिने अनुमान कीयाकि यहांपर भूतकालमें दुर्भिक्ष था एसा संभव होते है। नगरमें जाने पर वहां बहुत से लोगोंके ऊंचे ऊंचे मकान देख मुनि गौचरी गये परन्तु पर्याप्त आहार न मीलनेसे मुनिने जाना कि यहां वर्तमान में दुर्भिक्ष वर्त रहा संभव होते है. मुनि विहारके दरम्यान पर्वत, पहाड भयंकर देखा, दिशा भयोत्पन्न करनेवाली देखी, आकाश में बादले बिजली अमोघे उदगमके धनुष्य बाण न देखने से अनुमान कीया कि यहां भविष्यमें दुष्काल पडनेके चिन्ह होता देते है। इसी माफीक अच्छे चिन्ह देखनेसे अनुमान करते है कि यहांपर भूत, भविष्य और वर्तमान कालमें सुभिक्षका अनुमान होते है यह सब अनुमान प्रमाण है।

(४) ओपमा प्रमाणके च्यार भेद है यथा—

(क) यथार्थ वस्तुकि यथार्थ ओपमा—जेसे पद्मनाभ तीर्थकर केसा होगा कि भगवान वीर प्रभु जेसा।

(ख) यथार्थ वस्तु और अयथार्थ ओपमा जेसे नारकी देवतोंका पल्योपम सागरोपमका आयुष्य यथार्थ है किन्तु उसीके लिये वह योजन प्रमाण कुवाके अन्दर बाल भरना इत्यादि औ

मा अनयथार्थ है कारण ऐसा कीसीने कीया नहीं है यह तो
केवलीयोंने अपने ज्ञानसे देखा है. जिसका प्रमाण बतलाया है।
(ग) अनयथार्थ वस्तु और यथार्थ ओपमा—जैसे
दोहा—पत्र पडां तो इम कहै। सुन तरवर वनराय
अबके बिछडियो कब मीले, दूर पडेंगे जाय ॥ १ ॥
तब तरुवर इम बोल्यो, सुन पत्र शुभ वात
इस घर यह ही रीत है, एक आवत एक जात ॥२॥
नहीं तरु पत्र बोलीया, नहीं भाषा नहीं विचार
वीर व्याख्यानी ओपमा. अनुयोग द्वार मझार ॥३॥
ने तरुवर और पत्रके कहनेका तात्पर्य यथार्थ है या
र्थ परन्तु वस्तुगते वस्तु यथार्थ नहीं है.
घ) अनयथार्थ वस्तु अनयथार्थ ओपमा अश्वके शृंग
है और गर्दभके शृंग अश्व जैसे है न तो अश्वके शृंग
शृंग है केवल ओपमा ही है इति प्रमाणद्वार।
) सामान्य विशेषद्वार—सामान्य से विशेष बलवा
सामान्य द्रव्य एक विशेष द्रव्य दो प्रकारके है (१
२) अजीवद्रव्य. सामान्य जीवद्रव्य एक, विशेष
प्रकारके (१) सिद्धोंके जीव (२) संसारी जीव.
द्धोंके जीव विशेष सिद्धोंके जीव दो प्रकारके (१)
(२) परम्पर सिद्ध इत्यादि. सामान्य संसारी जीव
शेष संयोगी अयोगी एवं क्षीण मोह, उपशान्त मोह.
य-प्रमत्त-अप्रमत्त—संयति—असंयति—असंयति
मनुष्य देवता इत्यादि। जो अजीवद्रव्य है सो
विशेष दो प्रकारके है रूपी अजीव द्रव्य, अरूपी
मान्य रूपी अजीव विशेष स्कन्ध देश प्रदेश

परमाणु पुद्गल, सामान्य अरूपी अजीवद्रव्य. विशेष धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, कालद्रव्य इत्यादि सामान्य तीर्थंकर विशेष च्यार निक्षेपे नाम तीर्थंकर. स्थापना तीर्थंकर, द्रव्य तीर्थंकर, भाव तीर्थंकर सामान्य नाम तीर्थंकर विशेष वीस प्रकार से तीर्थंकर नाम कर्म बन्धता है, अरिहन्तोंकि भक्ति करनेसे यावत् समकितका उद्योत करनेसे (देखो भाग १ लेमें वीस बोल) सामान्य अरिहन्तोंकि भक्ति. विशेष स्तुति गुणकीर्तन पूजा नाटक इत्यादि सामान्यसे विशेष विस्तारवाला है.

(११) गुण और गुणी-पदार्थमें खास वस्तु है उसे गुण कहा जाते है और जो गुणको धारण करनेवाले हैं उसे गुणी कहा जाता है. यथा—गुणी जीव और गुणज्ञानादि, गुणी अजीव गुणवर्णादि। गुणी अज्ञान संयुक्त जीव गुणमिथ्यात्व. गुणीपुष्प. गुणसुगन्ध, गुणीसुवर्ण, गुणपीलाम-कोमलता, गुणी और गुण भिन्न नहीं है अर्थात् अभेद है।

(१२) ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी—ज्ञेय जो जगतके घटपटादि पदार्थ है उसे ज्ञेय कहते है, उनोंका जानपणा वह ज्ञान और जाननेवाला वह ज्ञानी है. ज्ञानी पुरुषोंके लिये जगतके सर्व पदार्थ वैराग्यका ही कारण है कारण इष्ट अनिष्ट पदार्थ सब ज्ञेय-जाननेलायक है सम्यक्ज्ञान उनोंका नाम है कि इष्ट अनिष्ट पदार्थोंको सम्यक्प्रकारसे यथार्थ जानना. इसी माफीक ध्येय, ध्यान ध्यानी-जो जगतके सर्व पदार्थ है वह ध्येय है, जिस्का ध्यान करना वह ध्यान है और ध्यानके करनेवाला वह ध्यानी है।

(१३) उपन्नेया, विगम्नेया, धुवेया—उत्पन्न होना, विनाश होना, ध्रुवपणे रहना. यह जगतके सर्व जीवाजीव पदार्थमें एक समयके अन्दर उत्पात व्यय ध्रुव होते है जेसे सिद्ध भगवानने

जो पहले समय भाव देखा था वह उत्पात है. उसी समय जिस पर्यायका नाश हो दूसरी पर्यायपणे उत्पन्न हुआ वह व्यय है उसी समय है और सिद्धोंका ज्ञान है वह ध्रुव है. जैसे किसीको बाजुबन्ध तोडाके चुडी घडानी है तो चुडीका उत्पात बाजुका नाश और सुवर्णका ध्रुवपणा है। जैसे धर्मास्तिकायमें जो पहले समय पर्याय थी वह नाश हुए, उसी समय नये पर्याय उत्पन्न हुवा और चलनादि गुण प्रदेशमें है वह ध्रुवपणे रहे इसी माफीक सर्व द्रव्यके अन्दर समझ लेना।

(१४ आधेय और आधार—आधेय जगतके घटपटादि पदार्थ आधार पृथ्वी आधेय जीव और पुद्गल आधार आकाश, आधेय ज्ञानदर्शन आधार जीव इत्यादि सर्व पदार्थमें समझना।

१५. आविर्भाव-तिरोभाव—तिरोभाव जो पदार्थ दूर है. आविर्भाव आकर्षित कर नजीक लाना जैसे घृतको सत्ता घासके तृणोंमें होती है. वह तिरोभाव है और गायके स्तनोंमें दुध है वह आविर्भाव है। गायके स्तनोंमें घृत दूर है और दुधमें नजदीक है, दुधमें घृत दूर है और दहीमें नजदीक है और दुधमें नज- दूर है और मक्खनमें नजदीक है. इसी माफीक सयोगीको मोक्ष दूर है अयोगीको मोक्ष नजदीक है वीतरागको मोक्ष नजदीक है. छद्मस्थको दूर है. क्षपकश्रेणिको मोक्ष नजदीक है. उपशमश्रेणिको मोक्ष दूर है. इसी माफीक भवपार, अभवपार, समन, असमन, पति-अनंतपति, सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि यावत् भव्य-अभव्य।

१६, गौणता-मौख्यता—जो पदार्थके अन्दर दुसरे गुण वस्तुको गौणता करते है. जिस समय जिस वस्तुके व्या- सको आवश्यकता है. शेष विषयको छोड उसी आवश्यकता- वस्तुका व्याख्यान करना उसे मौख्यता करते है. जैसे

ज्ञानसे मोक्ष होता है तो ज्ञानकी मौख्यता है और दर्शन चारित्र तप वीर्य क्रियादिकी गौणता है. पुरुषार्थसे कार्यकी सिद्धि होती है. इसमें काल स्वभाव नियत पूर्वकर्मकी गौणता है और पुरुषार्थकी मौख्यता है. आचारांगादि सूत्रमें मुनिआचारकी मौख्यता बतलाइ है, शेष साधन कारणोंको गौणता रखा है. भगवति सूत्रादिमें ज्ञानकी मौख्यता बतलाइ गइ है, शेष आचारादि गौणतामें रखा है। जीस समय जीस पदार्थको मौख्यपणे बतलानेकी आवश्यक्ता हो उसे मौख्यपणे ही बतलाना जेसे कोयलका रंग मौख्यतामें श्यामवर्ण है. शेष च्यार वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श गौणतामें है. इसी माफीक बाह्य दीसती वस्तुका व्याख्यान करे यह मौख्य है और उनोंके अन्दर अन्य धर्म रहा हुवा है वह गौण है।

(१७) उत्सर्गापवाद—उत्सर्ग है सो उत्कृष्ट मार्ग है और अपवाद है सो उत्सर्गमार्गका रक्षक है. उत्सर्गमार्गसे पतित होता है. उन समय अपवादका अवलम्बन कर उत्सर्गमार्गको अपने स्थानमें स्थिरीभूत कर सक्ते है. इसी वास्ते महान् रथको चलानेमें उत्सर्गापवाद दोनों धोरी माने गये है। जेसे उत्सर्गमें तीन गुप्ति है उनोंके रक्षणमें पांच समिति अपवादमें है, सर्वथा अहिंसा मार्गमें भी नदी उतरना, नौकामें बेठना, नौकल्पी विहार करना यह उत्सर्गमें भी अपवाद है, स्थिवरकल्प अपवाद है. जिनकल्प उत्सर्ग है. आचारांग दशवैकालिक प्रश्नव्याकरणादि सूत्रोंमें मुनिमार्ग है सो उत्सर्ग है और छेद सूत्रोंमें मुनि मार्ग है वह अपवाद है "करेमिभंते सामायिक सव्वं सावज्जं जोगं पञ्चक्खामि" यह उत्सर्ग पाठ है 'जयंचरे जयंचिट्ठे" यह अपवाद पाठ है " समयं गोयमा म पमाए" यह उत्सर्ग है संस्तारा पौरसीके पाठ अपवाद

है. परिसह अध्ययनमें रोग आनेपर औषधि न करना उत्सर्ग है. भगवतीसूत्रमें तथा छेदसूत्रोंमें निर्वद औषधि करना अपवाद है. इत्यादि इसी माफीक षट्द्रव्यमें भी उत्सर्गापवाद समझना।

(१८) आत्मा तीन प्रकारकी है. बाह्यात्मा, अभितरात्मा, परमात्मा जिस्में जो आत्मा धन धान्य, सुवर्ण, रुपा, रत्नादि द्रव्यको अपना मान रखा है पुत्रकलत्र, मातापिता, बन्धव-मित्रको अपना मान रखा है इष्ट संयोगमें हर्ष अनिष्ट संयोगमें शोक पुद्गल जो परवस्तु है उसे अपनि मान रखी है जो कुच्छ ताथ समजते है तो उसी बाह्यसंयोगको ही समझते है वह बाह्यात्मा उसे ज्ञानीयों भवाभिनन्दी मिथ्यादृष्टि भी कहते हैं। दुसरी अभितरात्मा जीस जवोंने स्वसत्ता परसत्ताका ज्ञानकर परसत्ताका त्याग और स्वसत्तामें रमणता कर बाह्य संयोगको पर वस्तु समज त्यागबुद्धि रखे अर्थात् चोथा सम्यग्दृष्टी गुणस्थानसे लगाके तेरवे गुणस्थान तक के जीव अभितरात्माके जानना. परमात्म—जीनोंके सर्व कार्य सिद्ध हो चुके सर्व कर्मोंसे मुक्त हो लोकके अग्रभागमें अनंत अव्याबाध सुखोंमें विराजमान हैं उसे परमात्मा कहते हैं तथा आत्मा तीन प्रकारके हैं स्वात्मा परात्मा परमात्मा जिस्मे स्वात्माको दमन कर निज सत्ताको प्रगट करना चाहिये. परात्माका रक्षण करना. और परमात्माका भजन करना. यह ही जैनधर्मका सार है।

(१७) ध्यान च्यार-पदस्थध्यान अरिहन्तादि पांच पदोंके गुणोंका ध्यान करना. पिंडस्थध्यान-शारीररुपी पिंडके अन्दर स्थित रहा हुवा अनंत गुण संयुक्त चैतन्यका ध्यान करना अर्थात् अध्यात्मसत्ता जो चैतन्य के अन्दर रही हुइ है उन सत्ताके अन्दर रमणता करना। रुपस्थ ध्यान यद्यपि चैतन्य अरुपी है तद्यपि कर्म

संग रहनेसे अनेक प्रकारके नये नये रूप धारण करने पर भी चैतन्य तो अरूपी है परन्तु छद्मस्थोंके ध्यानके लिये कीसीने कीसी आकारादि आवश्यक्ता है जेसे अरिहंत अरूपी है तथपि उनोंकि मूर्ति स्थापन कर उस शान्त मुद्राका ध्यान करना । रूपातित ध्यान जो निरंजन निराकार निष्कलंक अमूर्त्ति अरूपी अखण्ड अगम्य अगमय अवेदी अखेदी अयोगि अलेशी इत्यादि सच्चिदानन्द शुद्धानन्द सदानन्द अनन्त ज्ञानमय अनंत दर्शनमय जो सिद्ध भगवान है उनोंके स्वरूपका ध्यान करना उसे-रूपातित ध्यान कहते है ।

(२०) अनुयोग च्यार-द्रव्यानुयोग-जिस्मे जीवाजीव व नय भंग कर्म लेश्या परिणाम अध्यवसाय कर्मबन्धके हेतु कारण सिद्धि सिद्धअवस्था इत्यादि स्वरूपको समजाये गये हो उसे द्रव्यानुयोग कहा जाता है जिस्मे क्षेत्र पर्वत पाहड नदी द्रह देवलोक नारकी चन्द्र सूर्य ग्रह इत्यादि गीणत विषय हो उसे गीनतानुयोग कहते है । जिस्मे साधु श्रावकके किया कल्प कायदा आचार व्यवहार विनय भाषा स्थानआदिक व्याख्यान हो उसे चरण करणानुयोग कहते है जिस्मे अच्छे राजा महाराजा शेठ सेनापतियोंके शुभ चारित्र हो जिस्मे धर्म देशना वैराग्यमय उपदेश हो संसारकी असारता बतलाइ हो उसे धर्मकथानुयोग कहते है इति ।

(२१) जागरणा तीन प्रकारकी है । बुद्ध जागरणा तीर्थंकरोंकी केवलीयोंकी अबुद्ध जागरन-छद्मस्थमुनियोंकी सुदक्ख जागरन श्रावकोंकी ।

(२२) व्याख्या—द्रव्यानन्दसे पद वस्तुवे पद गुणको सविस्तर व्याख्यान करना जिस्का भी भेद है ।

(१) द्रव्यमें द्रव्यका उपचार जैसे काष्टमें वंशलोचन.
(२) द्रव्यमें पर्यायका उपचार यह जीव ज्ञानवन्त है.
(३) द्रव्यमें पर्यायका उपचार यह जीव सरूपवान है.
(४) गुणमें द्रव्यका उपचार—अज्ञानी जीव है.
(५) गुणमें गुणका उपचार—ज्ञानी होनेपरभी क्षमावहुत है.
(६) गुणमें पर्यायका उपचार—यह तपस्वी बडे रूपवन्त है
(७) पर्यायमें द्रव्यका उपचार—यह प्राणी देवतोंका जीव है
(८) पर्यायमें गुणका उपचार—यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है.
(९) पर्यायमें पर्यायका उपचार—मनुष्य-श्यामवर्णका है.

(३) अष्टपक्ष—एक वस्तुमें अपेक्षा ग्रहनकर अनेक प्रकारसे व्याख्या हो सक्ती है. जैसे नित्य अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य अवक्तव्य, यह अष्टपक्ष एक जीवपर निश्चय और व्यवहारकि अपेक्षा उतारे जाते है यथा—

व्यवहारनयकि अपेक्षा जीव गतिमें तदान्हि भावमें वर्तता हुवा नित्य है और समय समय आयुष्य क्षीण होनेकि अपेक्षा अनित्य भी है निश्चयनयकि अपेक्षा ज्ञान दर्शन चारित्रापेक्षा नित्य है और अगुरु लघु पर्याय समय समय उत्पात व्यय होनेकि अपेक्षा अनित्य भी है।

व्यवहार नयमें जीव गतिमें जीव तदान्हिभावमें वर्तता हुवा एक है और दुसरे माता पिता पुत्र ह्रि बन्धवादिकि अपेक्षा आप अनेक भी है। निश्चयनयापेक्षा सर्व जीवोंका चैतन्यता गुण एक होनेसे आप एक है और आत्माके असंख्यात प्रदेश तथा प्रत्येक प्रदेशमें गुण पर्याय अनंता अनंत होनेसे अनेक भी है।

व्यवहार नयकि अपेक्षा जीव जीस गतिमें वर्त रहा है उस गतिमें स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावापेक्षा सत् है और परद्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावापेक्षा असत् है। निश्चयनयापेक्षा जीव अपने ज्ञानादि गुण अपेक्षा सत् है और पर गुण अपेक्षा असत् है।

व्यवहारनयापेक्षा मिथ्यात्व गुणस्थानसे चौदवां अयोगी केवली गुणस्थान तक कि व्याख्या केवली भगवान् करे वह वक्तव्य है और जो व्याख्या केवली कह नहीं सके वह अवक्तव्य है। निश्चयनयापेक्षा सिद्धोंके अनंतगुणोंसे जितने गुणोंकि व्याख्या केवली करे वह वक्तव्य हैं और जितने गुणोंकि व्याख्या केवलीभी न कर सके वह सब अवक्तव्य है। जीवकि आदि और सिद्धोंका अन्त नयके लिये अवक्तव्य है।

(२४) सप्तभंगी–स्यात् अस्ति; स्यात् नास्ति, स्यात् अस्ति नास्ति, स्यात् अवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य स्यात् नास्ति अवक्तव्य, स्यात् अस्तिनास्ति युगपात् अवक्तव्य यह सप्तभंगी है कीसी पदार्थ पर उतारी जाती है स्याद्वाद रहस्य अपेक्षामें र रहा हुवा है एक वस्तुमें अनेक अपेक्षा है। यहांपर सिद्ध भगवा पर यह सप्तभंगी उतारी जाती है यथा–सिद्धोंमें स्यात् अस्ति स्यात् याने अपेक्षासे सिद्धोंमें स्वगुणोंको अस्ति है- स्यात्ना स्ति अपेक्षासे सिद्धोंमें परगुणोंकि नास्ति है स्यात् अस्ति नास्ति याने सिद्धोंमें स्वगुणोंकि आस्ति है और परगुणोंकि नास्ति भी है स्यात् अवक्तव्य–अस्तिनास्ति एक समय है किन्तु समयक काल स्वरूप होनेसे व्यक्तव्यता हो नहीं सके इस वास्ते अवक्तव्य है स्यात् अस्ति अवक्तव्य जीन समय आस्ति है किन्तु वो अवक्तव्य है। स्यात् नास्ति अवक्तव्य. परगुणकी नास्ति है वह भी एक समय के लिये अवक्तव्य है स्यात् आस्ति नास्ति युगपत्

समय है अर्थात् आस्ति नास्ति एक समयमें है परन्तु है अवक्तव्य। कारण वचनके योगसे वक्तव्यता करनेमें असंख्यात समय लगते हैं वास्ते एक समय अस्तिनास्ति का व्याख्यान हो नही सक्ते है। इसी माफीक जीवादि सर्व पदार्थो पर सप्तभंगी लग सक्ती है। यह बात खास ध्यानमें रखना चाहिये कि जहां स्वगुणकी अस्ति होगें वहां परगुणकि नास्ति अवश्य है। इति

(२५) निगोदस्वरूपद्वार-निगोद दो प्रकार की है (१) सूक्ष्म निगोद (२) बादर निगोद. जिस्में बादर निगोद जेसे कन्दमूल कान्दा मूला आलु रतालु पींडालु आदो अडवी सूवर्ण कन्द वज्रकन्द सकरकन्द निलण फूलण लसणादि इनोंमे अनन्त जीवोंका पंड है और जो सूक्ष्म निगोद है सो दो प्रकारकि है (१) व्यवहाररासी (२) अव्यवहाररासी जिस्में अव्यवहाररासी है वह तों अभीतक बादर पर्णेका घर देखाही नहीं है उन जीवों की शास्त्रकारोंने कोसी प्रकारकी गणतीमें व्याख्या करीभी नहीं है जो अठाणु बोलादि अल्पाबहुत्व है उनमें जो जीवोंकि अल्प बहुत्व बतलाइ है वह सब व्यवहाररासी की अपेक्षा है उन व्यवहार रासीसे जीतने जीव मोक्ष जाते है व उतने ही जीव अव्यवहाररासीसे निकल व्यवहाररासी में आजाते है वास्ते व्यवहाररासीमें जीव कम नही होते है। व्यवहाररासी कि जो सूक्ष्म निगोद है उनोंका स्वरूप इस माफीक है।

सूक्ष्म निगोद के गोले संपूर्ण लोकाकाशमें भरा हुवा है एकभी आकाश प्रदेश एसा नही है कि जीसपर सूक्ष्म निगोदके गोले न हो. संपूर्ण लोकका एक घन बनानेमें सात राज का घन होना है उसीसे एकसूची अंगुलक्षेत्र के अन्दर असंख्यात श्रेणि है प्रत्येक श्रेणिमें असंख्याते परतर है प्रत्येक परतर में अ-

संख्यात २ गोले है। एकेक गोलेमें असंख्यात २ शरीर है। एकेक शरीर में अनंतेअनंते जीव है एकेक जीवों के असंख्यात २ आत्म प्रदेश है. एकेक आत्म प्रदेशपर अनंत अनंत कर्म वर्गणावों है। एकेक कर्म वर्गणा में अनन्ते अनंते परमाणु है एकेक परमाणु में अनंती अनंती पर्याय है एकेक परमाणु में अनंतगुण हानि वृद्धि होती है यथा-अनंतभाग हानि असख्यातभाग हानि संख्यातभाग हानि. संख्यात गुण हानि असंख्यातगुण हानि अनंतगुण हानि। वृद्धि-अनंतभाग वृद्धि असख्यातभाग वृद्धि संख्यातभाग वृद्धि संख्यातगुण वृद्धि असख्यातगुण वृद्धि अनंतगुण वृद्धि । इसी माफीक षट्द्रव्य में भी समय समय षट्गुण हानि वृद्धि हुवा करती है। एक शरीर में निगोद के जीव अनंते है वह एक साथमें साधारण शरीर बान्धते है साथ ही में आहार लेते है साथ ही में श्वासोश्वास लेते है साथ ही में उत्पन्न होते है साथही में चवते है उन जीवोंको जन्ममरणकी कीतनी वेदना होती है जेसे कोइ अंधा पगु बेहरा मुका जीव हो उनों के शरीर में महा भयंकर सोलहा प्रकार के राजरोग हुवा है वह दुसरे मनुष्य से देखा नही जावे एसा दुःखसे अनंतगुण दुःखों तो प्रथम रत्नप्रभा नरक में है उनोंसे अनंतगुणा दुःख दुसरी नरक में एवं तीजी चोथी पांचमी छटी नरक में अनंतगुण दुःख है छठी नरक करतो भी सातवी नरकमें अनंतगुणा दुःख है उन सातवी नरक के उत्कृष्ट ३३ सागरोपम का आयुष्य के जीतने समय (असंख्यात) हो उन एकेक समय सातवी नरकका उत्कृष्ट आयुष्य वाला भव करे उस असंख्यात भवोंका दुःख को एकत्र कर उनों का वर्ग करे उन दुःखसे सूक्षम निगोद में अनंतगुणा दुःख है कारण वह जीव एक महुर्त मे उत्कृष्ट भव करे तो ६५५३६ भव करते है संसार में जन्म मरणसे अधिक दुसरा कोइ दुःख नही है.

हे भव्यजीवों यह अपना जीव अनंतीवार इन सूक्ष्म बादर निगोदमें तथा नरकमें दुःखों का अनुभव कर आया है इस समय मनुष्यादि अच्छी सामग्री मीली है वास्ते यह परम पवित्र पुरुषोंका फरमाया हुवा स्याद्वादनय निक्षेप द्रव्यगुण पर्यायादि अध्यात्म ज्ञान का अभ्यास कर अपनि आत्मामें रमणता करो तांके फीर उन दुःखमय स्थानों को देखने का अवसर ही न मीले। सज्जनों! आधुनिक लोगों को आलस्य प्रमाद बहुत बढजानेसे बडे बडे ग्रन्थों को अलमारी में रख छोडते है इस वास्ते यह संक्षिप्त से सार लिख सूचना करते है कि इस संबन्ध को आप कंठस्थ कर फीर रमणता करे तांके आपकि आत्मा को बडी भारी शान्ति मिलेगी। इति।
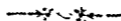
सेवंभंते सेवंभंते-तमेव सच्चम्।

—✻—

थोकडा नम्बर. २२.

(षट् द्रव्यके द्वार ३१)

नामद्वार आदिद्वार. संस्थानद्वार द्रव्यद्वार. क्षेत्रद्वार. कालद्वार. भावद्वार. सामान्यविशेषद्वार निश्चयद्वार, नयद्वार. निक्षेपद्वार. गुणद्वार. पर्यायद्वार साधारणद्वार. साधर्मिद्वार, परिणामिद्वार. जीवद्वार. मूर्तिद्वार, प्रदेशद्वार एकद्वार, क्षेत्र द्वार क्रियाद्वार. कर्ताद्वार. नित्यद्वार कारणद्वार, गतिद्वार. प्रवेशद्वार पृच्छाद्वार. स्पर्शनाद्वार. प्रदेशस्पर्शनाद्वार अल्पाबहुत्वद्वार।

(१) नामद्वार—धर्मास्तिकायद्रव्य, अधर्मास्तिकायद्रव्य, आकाशास्तिकायद्रव्य, जीवास्तिकायद्रव्य, पुद्गलास्तिकायद्रव्य और कालद्रव्य.

(२) आदिद्वार—द्रव्यकी अपेक्षा षट्द्रव्य अनादि है. क्षेत्रकी अपेक्षा जो लोकव्यापक षट्द्रव्य है. वह सादि है, एक आकाशानादि है कालकी अपेक्षा षट्द्रव्य अनादि है और भावापेक्षा षट्द्रव्यमें अगुरु लघु पर्यायका समय समय उत्पात व्ययापेक्षा सादि सान्त है। यद्यपि यहां क्षेत्रापेक्षा कहते है कि इस जम्बुद्विपके मध्यभागमें मेरुपर्वत है उनोंके आठ रूचक प्रदेश है उनोंके संस्थान निचे च्यार प्रदेश उनोंके उपर विषम याने दो दो प्रदेशपर एकेक प्रदेश रहा हुवा है, उन रूचक प्रदेशोंसे धर्मास्तिकायकि दो प्रदेशोंसे आदि है और फीर दो दो प्रदेश वृद्धि होती हुइ लोकान्त तक असंख्यात प्रदेशी चौतर्फ गइ है. एवं अधर्मास्तिकाय. एवं आकाशास्तिकाय परन्तु अलोकमें अनंतप्रदेशी भो है अधो उर्ध्व च्यार च्यार प्रदेशी है जीवका आदि अन्त नहीं है सर्व लोकव्यापक है. पुद्गलास्तिकाय सर्व लोकव्यापक है. कालद्रव्य प्रवर्तन रूप तो अढाइ द्विपमें ही है, कारण अढाइ द्विपके चन्द्र सूर्य चर है और जीवपुद्गलकी स्थिति पूर्णरूप संपुर्ण लोकमें है !
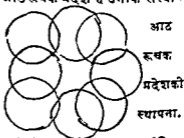
आठ रूचक प्रदेशोकी स्थापना.

(३) संस्थानद्वार—धर्मास्तिकायका संस्थान गाडाका ओधणकी माफीक है कारण दो प्रदेश आगे च्यार, च्यार आगे छे,

छे आगे आठ, एवं दो दो प्रदेश वृद्धि होनेसे लोका (
असंख्यात प्रदेशी है. एवं अधर्मास्तिकाय और आ
स्तिकायका संस्थान लोकमें ग्रीवाके आभरण जैसा
अलोकमें गाडाके ओंधनाकार है. जीव पुद्गलके
प्रकारके संस्थान है कालका कोइ आकार नहीं है।

(४) द्रव्यद्वार—गुणपर्यायके भाजनको द्रव्य कहते
जिस्मे समय समय उत्पाद व्यय होते रहे–कारण कार्य एक
समयमें हो जो एक समय कार्य मे उत्पाद व्यय है उनी सम
कारणका उत्पाद व्यय है मूलजो एक द्रव्य है उनोका निभ
दो खंड नही होता है कारण जीवद्रव्य तथा परमाणुद्रव्य इनोके
विभाग नही होते है। अगर द्रव्यके स्कन्ध देश प्रदेश कहा जाते
है यह सब उपचरित नयसे कहा जाते है। द्रव्यके मूल सामान्य
छे स्वभाव है।

(१) अस्तित्वं—नित्यानित्य परिणामिक स्वभाव।

(२) वस्तुत्वं—गुणपर्यायका आधारभूत स्वभाव।

(३) द्रव्यत्वं—षट्द्रव्य एकस्थानमें रहने परभी एकेक
द्रव्य अपना अपना स्वभाव मुक्त नही होते है अर्थात् एक दुसरे
स्वभावमें नही मीलते हुये अपनि अपनि क्रिया करे।

(४) प्रमेयत्वं–स्वात्मा परात्माका ज्ञान होना यह स्व-
भाव जीवद्रव्यमें है। शेषद्रव्यमें स्वपर्याय स्वभावको प्रमेयत्वं
स्वभाव कहते है।

(५ सत्त्वं उत्पाद व्यय ध्रुव एकही समय होनेपर भी
वस्तु अपने स्वभावका त्याग नही करती है।

(६) अगुरुलघुत्व समय समय षट्गुण हानिवृद्धि होने
पर भी अपन अपने गुणोमे रमणते है।

द्रव्यके उत्तर सामान्य स्वभाव ।

(१) अस्तिस्वभाव-द्रव्य-द्रव्यका गुणपर्याय. क्षेत्र जिस क्षेत्रमें द्रव्य रहा हुवा है-काल द्रव्यमें उत्पात व्यय ध्रुव-भाव एक समय कारणकार्य स्वभाव। जेसे घटमें घटका अस्तित्व और पटमें पटका अस्तित्वं ।

(२) नास्तिस्वभाव-एक द्रव्यकि अपेक्षा दुसरे द्रव्यमें वह द्रव्य क्षेत्र काल भाव नहिं है जेसे घटमें पटकि नास्ति पटमें घटकि नास्ति ।

(३) नित्यस्वभाव-द्रव्यमें स्वगुणो प्रणमनेका स्वभाव नित्य है.

(४) अनित्यस्वभाव- द्रव्यमे परगुण प्रगमनेका स्वभाव अनित्य है।

(५) एक स्वभाव—द्रव्यमें द्रव्यत्व गुण एक ह.

(६) अनेकस्वभाव—द्रव्यमें गुण पर्याय स्वभाव अनेक है

(७) भेदस्वभाव—आत्म परगुणापेक्षा भेद स्वभाववाला है जेसे चतन्य कर्मसंग परवस्तुकों अभेद मान रखो है तथपि चेतन्य जडत्वमें भेद स्वभावाले ह मोक्षगमन समय निजगुणोंसे जड भेद स्वभाववाले ह.

(७) अभेदस्वभाव—आत्माके ज्ञानादि गुण अभेद स्वभाववाले ह

(९) भव्यस्वभाव--आत्माके अन्दर समय समय गुणपर्याय कारण कार्यपणे प्रणमते रहेना इनकों भव्य स्वभाव कहेते है।

(१०) अभव्यस्वभाव-आत्माका मुल गुण कोमी हालतमे नही बदलना है याने हरेक द्रव्य अपना मुळ गुणको नहीं पल्टाते ह

उसे अभव्य स्वभाव कहते है। अर्थात् भव्य कि अनेक
स्थायी होति है और अभव्य कि वियस्था नही पलटती है।

(११) वक्तव्य स्वभाव—एक द्रव्यमें अनंत वक्तव्यता
उसमें जीतनि वक्तव्यता कर सके उसे वक्तव्य स्वभाव कहते है

(१२) अवक्तव्य स्वभाव—शेष रहे हुवे गुणोंकि वक्तव्यता
न हो उसे अवक्तव्य स्वभाव कहते है।

(१३) परम स्वभाव—जो एक द्रव्यमें गुण है वह कीसी दुसरे
द्रव्यमें न मीले उसे परम स्वभाव कहते है। जैसे धर्मद्रव्यमें चलनगुण

द्रव्यके विशेष स्वभाव अनंते है। षट्द्रव्यमें धर्मद्रव्य,
अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य यह एकेक द्रव्य है और जीवद्रव्य, पुद्-
गलद्रव्य अनंते अनंते द्रव्य है कालद्रव्य वर्तमानापेक्षा एक समय
है वह अनंते जीवपुद्गलोंकी स्थिति पुरण कर रहा है वास्ते
उपचरितनयसे कालद्रव्यको भी अनंते कहते है और भूत भवि-
ष्यकालके समय अनंत है परन्तु उने यहांपर द्रव्य नही माना है।

(५) क्षेत्रद्वार—जीस क्षेत्रमें द्रव्य रहे के द्रव्य कि क्रिया
करे उसे क्षेत्र कहते है धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य, जीवद्रव्य और पुद्-
गलद्रव्य यह च्यार द्रव्य लोक व्यापक है। आकाशद्रव्य लोका-
लोक व्यापक है कालद्रव्य प्रवर्तन रूप आढाइ द्विप व्यापक है
और उत्पाद व्यय रूप लोकालोक व्यापक है।

(६) कालद्वार—जीस समय में द्रव्य क्रिया करते है उसे
...ल कहते है धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य-द्रव्यापेक्षा आदि
...त रहित है और गति गमनापेक्षा सादि सान्त है। पुद्गल-
...य द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहीत है द्विप्रदेशी तीन प्रदेशी या-
...अनत प्रदेशी अपेक्षा सादि सान्त है। कालद्रव्य-द्रव्यापेक्षा
...दि अन्त रहीत है और वर्तमान समयापेक्षा सादि सा...

(७) भावद्वार—धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, जीव-द्रव्य, कालद्रव्य. यह पांचद्रव्य अरूपी है वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है और पुद्गलद्रव्य रूपी-वर्ण गंध रस स्पर्श संयुक्त है तथा जीव शरीर संयुक्त होनेसे यह भी वर्णादि संयुक्त है परन्तु चैतन्य निजगुणापेक्षा अमूर्त्ति है।

(८) सामान्य विशेषद्वार—सामान्यसे विशेष बलवान है जेसे सामान्य द्रव्य एक-विशेष जीवद्रव्य, अजीवद्रव्य. सामान्य धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है विशेष धर्मद्रव्यका चलन गुण है सामान्य धर्मद्रव्यका चलन गुण है विशेष चलन गुण कि अनंत अगुरु लघु पर्याय है. इसी माफीक सर्व द्रव्य में समझना।

(९) निश्चय व्यवहारद्वार—निश्चय से षट्द्रव्य अ अपने गुणों में प्रवृत्ति करते है और व्यवहार में धर्मद्रव्य जी जीव द्रव्यको गमनागमन समय चलन सहायता करे अधर्म स्थिर सहायता, आकाशद्रव्य स्थान सहायता करते है, व्यवहारसे रागद्वेष में प्रवृति करते है, पुद्गल द्रव्य गलन मी सडन पडनादि में प्रवृते, काल-जीवाजीव कि स्थितिकों पु करे। तात्पर्य यह है कि व्यवहार में सहायक हो तों अपने गुण उसे सहायता करे अगर सहायक न हो तो भी द्रव्य अपने अ गुणमें प्रवृति करते ही रहते है जेसे अलोक में आकाशद्रव्य किन्तु वहां अवगाहान गुण लेने के लिये जीवाजीव सहा नही होने पर भी अवगाहन गुण में षट्गुण हानिवृद्धि स हुवा करती है इसी माफीक सब द्रव्यमें समझना।

(१०) नयद्वार—धर्मास्तिकाय-एसा तीन काल में न होने से नैगमनय धर्मास्तिकाय माने. धर्मास्तिकाय के असंख्य प्रदेश में चलनगुण सत्ताकों संग्रहनय धर्मास्ति माने. धर्मास्ति काय के स्कन्ध देश प्रदेश रूपी विभागकों व्यवहारनय धर्मास्ति

काय माने; जीवाजीवको चलन सहायता देते हुवे को ऋजु
नय धर्मास्तिकाय माने एवं अधर्मास्तिकाय, परन्तु ऋजुसूत्र
स्थिर और आकाशास्तिकाय में ऋजुसूत्रनय अवगाहान. पु
गलास्तिकाय में ऋजुसूत्र–गलन मीलन–और कालमें ऋजुसूत्रन
वर्तमान गुणको काल माने। जीवद्रव्य, नैगमनय नाम जीवको
जीव माने. संग्रहनय असंख्यात प्रदेशको जीव माने-व्यवहार-
नय त्रस स्थावर जीवोंको जीव माने. ऋजुसूत्रनय सुख दुःख
भोगवते हुवे जीवोंको जीव माने. शब्दनय वाला क्षायक सम्य-
क्त्व को जीव माने संभिरूढनय वाला केवलज्ञानीको जीव
माने. एवंभूतनयवाला सिद्धोंको जीव माने।

(११) निक्षेपद्वार-धर्मास्तिकायका नाम है सो नाम निक्षेप
है, धर्मास्तिकाय कि स्थापना (प्रदेशों) तथा धर्मास्तिकाय
ऐसा अक्षर लिखना उसे स्थापना निक्षेप कहते है जहांपर धर्मा-
स्तिकाय हमारे उपयोगमें अर्थात् सहायता न दे वह द्रव्य धर्मा-
स्तिकाय और हमारे उपभोग में आवे उसे भाव धर्मास्तिकाय
कहते हैं। एवं अधर्मास्तिकाय के भी च्यार निक्षेप परन्तु भाव-
निक्षेप स्थिरगुणमें वर्ते एवं आकाशास्तिकाय परन्तु भावनिक्षेप-
अवगाहान गुणमें वर्ते। जीवास्तिकाय उपयोग शून्यको द्रव्यनिक्षेप
और उपयोग संयुक्त को भावनिक्षेप एवं पुद्गलास्तिकाय परन्तु
चलन मीलन को भाव निक्षेप कहते हैं एवं काल द्रव्य परन्तु भाव
निक्षेपे जीवाजीव कि स्थितिको पुरण करते हुवे को भावनिक्षेप
कहते है।

(१२) गुणद्वार—षट्द्रव्यों में प्रत्येक च्यार च्यार गुन है।
धर्मास्तिकाय—अरूपी अचैतन्य अक्रिय चलन।
अधर्मास्तिकाय ,, ,, ,, स्थिर।
आकाशास्तिकाय ,, ,, ,, अवगाहान।

जीवास्तिकाय .. चैतन्य अक्रिय उपयोग।
" अनंत-ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य
पुद्‌गलास्ति— रूपी अचैतन्य-सक्रिय गलनपूरण.
काल द्रव्य—अरूपी अचतन्य अक्रिय वर्तन

(१३) पर्यायद्वार षट्‌द्रव्यों कि प्रत्येक च्यार च्यार पर्याय है।

धर्मद्रव्य	स्कन्ध	देश	प्रदेश	अगुरु लघु
अधर्मद्रव्य	,,	,,	,,	,,
आकाशद्रव्य	,,	,,	,,	,,
जीवद्रव्य	अव्याबाद	अनावग्गहान	अमूर्त	अगुरुलघु
पुद्‌गलद्रव्य	वर्ण	गन्ध	रस स्पर्श	,,
कालद्रव्य	भूत	भविष्य	वर्तमान	,,

(१४) साधारणद्वार—जो धर्म एक द्रव्यमें है वह धर्म दुसराद्रव्यमें मीले उसे साधारण धर्म कहते है जैसे धर्म द्रव्यमें अगुरु लघु धर्म है वह अधर्म द्रव्यमें भी है एवं षट् द्रव्य में अगुरु लघु धर्म साधारण है और असाधारण गुण जो एक द्रव्य में गुण है वह दुसरे द्रव्य में न मीले। जैसे धर्मद्रव्य में चलन गुण है वह शेष पांचों द्रव्य में नही उसे असाधारण गुण कहते है। एवं अधर्म द्रव्य में स्थिर गुण, आकाश में अवगाहन गुण, जीवमें चैतन्य गुण पुद्‌गल में मीलन गुण काल मे वर्तन गुण यह सब असाधारण गुण है यह गुण दुसरे कीसी द्रव्य मे नही मीलते है। पांच द्रव्य अजीव परित्याग करने योग है एक जीव द्रव्य ग्रहन करने योग्य है। पांच द्रव्य अरूपी है अक पुद्‌गल द्रव्य रूपी है।

(१५) स्वधर्मीद्वार—षट्‌द्रव्यों में समय समय उत्पाद व्यय पणा है वह स्वधर्मी है कारण अगुरु लघु पर्यायमें समय समय षट्‌गुण हानि वृद्धि होती है वह छहों द्रव्योंमें होती है।

(१६) परिणामिद्वार—निश्चय नयसे षट्द्रव्य अपने अपने गुणों में सदैव परिणमते है वास्ते परिणामि स्वभाव वाले ह और व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल अन्याअन्य स्वभावपणे परिणमते है जैसे जीव, नरक तीर्यच मनुष्य देवतापणे और पुद्गल द्वि प्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी पणे परिणमते है।

(१७) जीवद्वार—षट् द्रव्य में पांच द्रव्य अजीव है और एक जीव द्रव्य है सो जीव है यह असंख्यात आत्म प्रदेश ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य गुण संयुक्त निश्चय नयसे कर्मोका अकर्ता अभक्ता सिद्ध सामान्य है।

(१८) मूर्त्तिद्वार— षट् द्रव्य में पांच द्रव्य अमूर्त्ति याने अरूपी है एक पुद्गल द्रव्य मूर्त्तिमान है परन्तु जीव जो कर्म संगसे नये नये शरीर धारण करते है उनापेक्षा जीव भी उपचरित नयसे मूर्त्तिमान है।

(१९) प्रदेश द्वार—षट् द्रव्य में पांच द्रव्य सप्रदेशी है. एक काल द्रव्य अप्रदेशी है कारण-धर्म द्रव्य अधर्म द्रव्य असंख्यात प्रदेशी है. एक जीव के असंख्यात्त प्रदेश है और अनंत जीवों के अनंत प्रदेश है. आकाश द्रव्य अनंत प्रदेशी है। पुद्गल द्रव्य निश्चय नयसे तो परमाणु है परन्तु अनंते परमाणु एकत्र होनेसे अनंत प्रदेशी है काल द्रव्य वर्तमान एक समय होनेसे अप्रदेशी है. भूत भविष्य काल अनंत है।

(२०) एकद्वार—षट् द्रव्योमें धर्म द्रव्य अधर्मद्रव्य आकाश द्रव्य यह प्रत्येक एकेक द्रव्य है जीव. पुद्गल-और कालद्रव्य अनंते अनंते द्रव्य है।

(२१) क्षेत्रद्वार-एक आकाश द्रव्य क्षेत्र है और शेष पांच

द्रव्य क्षेत्र में रहनेवाले क्षेत्री है अर्थात् एक आकाश प्रदेशपर धर्मास्ति अधर्मास्ति जीव पुद्गल और काल द्रव्य अपनि अपनि क्रिया करते हुवे भी एक दुसरे के अन्दर नही मीलते है।

(२२)—कियाद्वार-निश्चय नयसे षट् द्रव्य अपनि अपनि क्रिया करते है परन्तु व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल क्रिया करते है शेष च्यार द्रव्य अक्रिय है।

(२३) नित्यद्वार—द्रव्यास्तिक नयसे षट् द्रव्य नित्य शास्वते है और पर्यायास्तिक नयसे (पर्यायापेक्षा) षट् द्रव्य अनित्य है व्यवहार नयसे जीव द्रव्य और पुद्गल द्रव्य अनित्य है शेष च्यार द्रव्य नित्य है।

(२४) कारणद्वार--पांच द्रव्य है सो जीव द्रव्य के कारण है परन्तु जीव द्रव्य पांचो द्रव्यों के कारण नहीं है। जेसे जीव द्रव्य कर्ता और धर्मास्तिकाय द्रव्य कारण मीलनेसे जीव के चलन कार्य कि प्रामी हुइ इस माफीक सव द्रव्य समझना.

(२५) कर्ताद्वार-निश्चय नयसे षट् द्रव्य अपने अपने स्वभाव कार्य के कर्ता है और व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल कर्ता है शेष च्यार द्रव्य अकर्ता है।

(२६) सर्व गतिद्वार--आकाश द्रव्य कि गति सर्व लोकालोक में है शेष पांच द्रव्य लोक व्यापक होनेसे लोक मे गति है।

(२७) अप्रवेश—एक आकाश प्रदेशपर धर्म द्रव्य चलन क्रिया करे. अधर्म द्रव्य स्थिर क्रिया करे आकाश द्रव्य अवगाहान, जीव उपयोग गुण पुद्गल गलन मीलन काल वर्तमान क्रिया करे परन्तु एक दुसरे कि गतिको रुक सके नहि एक दुसरे मे मील सके नहीं जेसे एक दुकान में पांच वैपारी वेठे हुवे अपनि

अपनि कार रवाइ करे परन्तु एक दुसरेको न तो यादा करे न एक दुसरे से मीले। इसी माफिक षट् द्रव्य समझ लेना।

(२८) पृच्छाद्दार—क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेशको धर्मास्तिकाय कहते है ? यहांपर एवंभूत नयसे उत्तर दिया जाता है कि एक प्रदेशको धर्मास्तिकाय नहीं कहा जाये। एवं दो तीन च्यार पांच यावत् दश प्रदेश संख्याते प्रदेश असंख्याते प्रदेश सर्व धर्मास्तिकायसे एक प्रदेश कम होनेसे भी धर्मास्तिकाय नही कही जावे. तर्क-क्या कारण है ? उ-समाधान खंडे दंडको संपुरण दंड नही कहा जाते है एव खड छत्र. चक्र. चम्र. चम्म इत्यादि जहां तक संपुरण वस्तु, न हो वहां तक एवंभूतनय उन वस्तुको वस्तु नहीं माने इस वास्ते संपुरण लोक व्यापक असंख्यात प्रदेशी धर्मास्तिकाय को धर्मास्तिकाय कहते हैं एव अधर्मास्तिकाय एवं आकाशास्तिकाय परन्तु प्रदेश अनंत कह ना एवं जीव पुद्गल और काल समझना।

लोकका मध्य प्रदेश रत्नप्रभा नाम पहली नरक १८०००० योजनकी है उनोंके निचे २०००० योजनकी घणोदधि. असंख्यात योजनका घणवायु. असंख्यात योजनका तनवायु उनोंके निचे जो असंख्यात योजनका आकाश है उन आकाशके असंख्यातमें भागमें लोकका मध्य प्रदेश है इसी माफीक अधो लोकका मध्य प्रदेश चोथी पङ्कप्रभा नरकके आकाश कुच्छ अधिक आदा चले- जानेपर अधो लोकका मध्य प्रदेश आता है। उर्ध्व लोकका मध्य प्रदेश पांचवा देवलोकके तीजा रिष्टनामका परतरमें है। तीर्च्छा लोकका मध्य प्रदेश मेरुपर्वतके आठ रूचक प्रदेशोंमे हैं। इसी माफीक धर्मास्तिकायका मध्य प्रदेश अधर्मास्ति कायका मध्य प्रदेश आकाशास्ति कायका मध्य प्रदेश समझना, जीवका मध्य प्रदेश आत्मा के आठ रूचक प्रदेशोंमे है, कालका मध्य प्रदेश वर्तमान समय है।

(२९) स्पर्शना द्वार-धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकायको स्पर्श नही करते है-कारण धर्मास्तिकाय एक ही है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायको संपुरण स्पर्श करी है एवं लोकाकाशास्तिकाय को एवं जीवास्तिकायको एवं पुद्गलास्तिकायको. कालको कहां पर स्पर्श कीया है कहांपर न भी कीया है; कारण काल आढाइ द्विपमें ही है। एवं अधर्मास्तिकाय. अधर्मास्तिकायका स्पर्श नही करे शेष धर्मास्तियत् एवं लोकाकाशास्ति-कारण संपुरण आकाश लोकालोक व्यापक है। अलोकाकाश शेष पांच द्रव्योंको स्पर्श नही करते है। एवं जीवास्तिकाय, जीवास्ति कायका स्पर्श नही कीया है कारण जीवास्तिकायका प्रश्न होनेसे सब जीव समावेस होगये. शेष धर्मास्तिवत् एवं पुद्गलास्ति काय पुद्गलास्ति कायका स्पर्श नही किया शेष धर्मास्तिवत् एवं काल, कालको स्पर्श नही करे शेष पांच द्रव्योंको आढाइ द्विपमें स्पर्श करे शेष क्षेत्रमें स्पर्श नही करे।

(३०) प्रदेश स्पर्शनाद्वार-धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकायके कीतने प्रदेश स्पर्श करे? जघन्य तीन प्रदेश-कारण अलोककि व्यायत आनेसे लोकके चरम प्रदेशपर तीन प्रदेशोंका स्पर्श करे. उत्कृष्ट छे प्रदेशोंका स्पर्श करे कारण च्यार दिशोंमें च्यार, अधो दिशामें एक, उर्ध्व दिशामें एक। धर्मास्ति काय अधर्मास्तिकायके जघन्य च्यार प्रदेश स्पर्श करे उ० सात प्रदेश स्पर्श करे भावना पूर्ववत् यहां विशेष इतना है कि जहां धर्म प्रदेश है वहां अधर्म प्रदेश भी है वास्ते ४-७ प्रदेश कहा है। धर्मास्तिका एक प्रदेश, आकाशास्तिका ज० सात प्रदेश, और उत्कृष्ट भी सात प्रदेश स्पर्श करे कारण आकाशके लिये अलोक कि व्याघात नही है। धर्म० एक प्रदेश. जीव पुद्गल के अनंत प्रदेश स्पर्श करते है कारण एकेक आकाशपर जीव पुद्गलके अनंत प्रदेश है। एक धर्म० प्रदेश कालके प्रदेशको स्यात्

स्पर्श करे स्यात् न भी करे कारण आढाइ द्विपके अन्
धर्मास्ति है वह तो कालके प्रदेशको स्पर्श करे वह अनंत
स्पर्श करे यहां उपचरित नयसे कालके अनंत प्रदेश मा
और जो आढाइद्विपके बाहार धर्मास्ति है वह कालके प्र
स्पर्श नही करते है। इसी माफीक अधर्मास्तिकाय भी समझ
स्ककाया पेक्षा ज० तीन प्रदेश उ० छे प्रदेशपर कायापेक्षा ध
स्तिकाय वत्-आकाशास्तिकायका एक प्रदेश-धर्मद्रव्यका ज
न्य १-२-३ प्रदेश स्पर्श करे उ० सात प्रदेश स्पर्श करे-कार
आकाशास्ति अलोकमें भी है वास्ते लोकके चरमान्तमें एक प्रदे
भी स्पर्श कर सकते है। शेष धर्मास्ति कायवत् जीवका एक प्रदे
श धर्मास्तिकायका ज० च्यार उ० सात प्रदेशोंका स्पर्श करते है
शेष धर्मास्तिवत। पुद्गलास्तिकायका एक प्रदेश-धर्मास्तिका-
यके ज० च्यार उ० सात प्रदेश स्पर्श करते है शेष धर्मास्तिका-
यवत्। कालका एक समय धर्मास्तिकायको स्यात् स्पर्श करे
स्यात् न भी करे जहांपर कहते है यहां ज० च्यार उ० सात प्रदेश
स्पर्श करे. शेष धर्मास्तिकायवत्। पुद्गलास्तिकायके दो प्रदेश-
धर्मास्तिकायके ज० दुगुणोसे दो अधिक यावत् छेप्रदेश उत्कृष्ट पांच
गुणोसे दो अधिक याने बारहा प्रदेश स्पर्श करे एवं तीन च्यार
पांच छे सात आठ नौ दश संख्याते असंख्याते अनंते. सब जगह
जघन्य दुगुणोसे दो अधिक उ० पांचगुणोसे दो अधिक.

२१ अल्पाबहुत्वद्वार-द्रव्यापेक्षा सर्व स्तोक धर्मद्रव्य
अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य तीनो आपसमें तुल्य है कारण तीनोका
एकेक द्रव्य है उनोंसे जीवद्रव्य अनंत गुणे है उनोंसे पुद्गलद्रव्य
अनंत गुणे है कारण एकेक जीवके अनंते अनंते पुद्गलद्रव्य लगे
हुवे है। उनोंसे काल द्रव्य अनंत गुणे है इति। प्रदेशापेक्षा सर्व-
स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य के प्रदेश है कारण दोनोंके प्रदेश असं-
ख्याते २ है (२) उनोंसे जीव प्रदेश अनंतगुणे है (३) उनोंसे

पुद्गल प्रदेश अनंत गुणे हे (४) उनोंसे काल प्रदेश अनंतगुणे है (५) उनोंसे आकाश प्रदेश अनंत गुणे है इति। द्रव्यप्रदेशों को सामिल अल्पाबहुत्व। सर्व स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाश द्रव्य इनोंके आपसमें तुल्य द्रव्य है (२) उनोंसे धर्मप्रदेश, अधर्म प्रदेश. आपसमें तुले असंख्यात गुने है (३) उनोंसे जीवद्रव्य अनंत गुणे है (४) उनोंसे जीव प्रदेश असंख्यात गुणे है (५) उनोंसे पुद्गलद्रव्य अनंतगुणे. (६) उनोंसे पुद्गल प्रदेश असंख्यातगुणे (७) उनोंसे काल द्रव्यप्रदेश अनंतगुणे (८) उनोसे. आकाश प्रदेश अनंतगुणे। इति।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेवसचम्.

—:(◎):—

थोकडानम्बर. २३

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद ११ वां.)

(भाषाधिकार)

(१) भाषा की आदि जीवसे है अर्थात् भाषा जीवोंके होती है। अजीव के नही अगर कीसी प्रयोगसे अजीव पदार्थों से अवाज आति हो उसे भाषा नही कही जाती है यह तो जीतना पावर भरा हो उतनाही अवाज हो जाते है यह भी जीवोंकीही सत्ता समजना चाहिये।

(२) भाषाकी उत्पति-तीन शरीरोंसे है. औदारीक शरीरसे, वैक्रियशरीरसे, आहारीक शरीरसे, और तेजस कारमण यह दो शरीर सूक्ष्म है वास्ते भाषा इनोंसे बोली नही जाती है।

(३) भाषाका संस्थान वयका है कारण भाषाका पुद्गल है वह वयके संस्थानवाला है.

(४ भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोकान्त तक जाते है।

(५ भाषा दो प्रकारकी है पर्यासभाषा, अपर्यासभाषा, जैसे सत्यभाषा, असत्यभाषा पर्यासि है और मिश्रभाषा व्यवहार भाषा अपर्यासि है.

(६) भाषा समुच्चयजीव और त्रसकाय के १९ दंडकों के जीव भाषावाले है और पांच स्थावर तथा सिद्ध भगवान अभाषक है सर्वस्तोक भाषक जीव. उनोंसे अभाषक अनंतगुणे है।

(७) भाषा च्यार प्रकार की है सत्यभाषा असत्यभाषा, मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा, समुच्चयजीव और नरकादि १६ दंडकमें भाषा च्यारों पावे तीन वैकलेन्द्रियमें भाषा एक व्यवहार पावे. पांच स्थावरमें भाषा नहीं है। एक बोल।

(८ भाषा पणे जो जीव पुद्गल ग्रहन करते है वह क्या स्थित पुद्गल याने स्थिर रहा हुवा अथवा आत्माके अंदर स्थिर पुद्गल ग्रहन करते है या-अस्थिर-चलाचल अथवा आत्मासे दुर रहे पुद्गल ग्रहन करते है ? जीव जो भाषापणे पुद्गल ग्रहन करते है वह स्थिर आत्माके नजदीक रहे पुद्गलों को ग्रहन करते है। जो पुद्गल भाषापणे ग्रहन करते है वह द्रव्य क्षेत्र काल भावसे।

क. द्रव्यसे एक प्रदेशी दो प्रदेशी तीन प्रदेशी यावत् दश प्रदेशी संख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी पुद्गल बहुत सूक्ष्म होनेसे भाषा वर्गणा के लेने योग्य नहीं है अनंत प्रदेशी द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है। एक बोल

(ख। क्षेत्रसे अनंत प्रदेशी द्रव्यभी कीतनेकतो अति सूक्ष्म

होनेसे भाषापणे ग्रहन है जेसे एक आकाश प्रदेश अवगाहे एवं दो तीन यावत् संख्यात प्रदेश अवगाहे नही लेते है किन्तु असंख्यात प्रदेश अवगाहा अनंत प्रदेशी द्रव्य भाषापणे लीये जाते है। एक बोल।

(ग कालसे. एक समयकि स्थितिवाले एवं दो तीन यावत् दश समयकि स्थिति संख्यात समयकि स्थिति असंख्यात समयकि स्थिति के पुद्गल भाषापणे ग्रहन करते है। कारण स्थिति है सो सूक्ष्म पुद्गलों कि भी एक समय यावत् असंख्यात समयकि होती है और स्थुल पुद्गलों की भी एक समय से असंख्यात समयकि स्थिति होती है। इस वास्ते एक समय से असंख्यात समयकि स्थिति के द्रव्य ग्रहन करते है. एवं १२ बोल।

घ भावसे. वर्ण गन्ध रस स्पर्श के पुद्गल जीव भाषापणे ग्रहन करते है वह वर्ण में चाहे. एक वर्ण का हो. चाहे दो तीन च्यार पांच वर्णका हो, एक वर्ण होनेसे चाहे वह श्याम वर्ण हो, चाहे हरा-लाल-पीला-सुपेद वर्णका हो; अगर श्याम वर्णका होनेपर चाहे वह एक गुण श्याम वर्ण हो, दो तीन च्यार यावत् दश गुण श्याम वर्ण सख्यातगुण श्याम वर्ण ११ असंख्यात गुण श्याम वर्ण १२ अनंतगुण श्यामवर्ण १३ हो जेसे एक गुणसे अनंतगुण एवं तेरहा बोलोंसे श्याम वर्ण कहा है इसी माफीक पांचों वर्ण के ६५ बोल एवं गन्ध में सुभिगन्ध, दुभिगन्ध के तेरहा तेरहा बोल २६ रसके तिक्त कटुक कषाय आंबिल मधूर के तेरह तेरह बोलोंसे ६५ स्पर्श मे एक-दो-तीन स्पर्श के द्रव्य भाषापणे नहीं लेते है किन्तु च्यार स्पर्शवाले द्रव्य भाषापणे लिये जाते है यथा-शीतस्पर्श उष्णस्पर्श, स्निग्ध स्पर्श, रूक्ष स्पर्श जिसमें एक गुणशीत दो तीन च्यार पाच छे सात आठ नौ दश संख्याते असंख्याते और अनंते गुण शीत स्पर्श के द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है इसी माफीक उष्णके १३ स्निग्धके १३ रूक्षके १३ एवं

सर्व संख्या. द्रव्यका एक बोल. अनंत प्रदेशी स्कन्ध. क्षेत्रका एक बोल असंख्यात प्रदेशी अगाढा. कालके बारहा बोल एक समयसे असंख्यात समय तक एवं १४ भावके वर्णके ६५ गन्धके २६ रसके ६५ स्पर्श के ५२ कुल २२२ बोल हुवे.

उक्त २२२ बोलोंके द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है सो (१) स्पर्श कीये हुवे. (२) आत्म अवगाहन कीये हुवे. (३) वह भी परम्पर अवगाहान कीये नहीं किन्तु अणन्तर अवगाहान कीये हुवे (४) अणुबा-छोटे द्रव्य भी लेवे (५) बादर स्थुल द्रव्य भी लेवे (६) उर्ध्व दिशाका (७) अधोदिशाका (८) तीर्यग्दिशाका (९) आदिका (१०) अन्तका (११) मध्यका (१२) स्वविषयका (भाषाके योग्य) (१३) अनुपूर्वी क्रमसर) (१४) भाषापणे द्रव्य ग्रहन करनेवाले त्रसनालीमें होनेसे नियमा छे दिशाका द्रव्य ग्रहन करे (१५) भाषाका द्रव्य सान्तर ग्रहन करे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात समय का अन्तर महुर्त. (१६) निरान्तर लेवे तो ज० दो समय उ० असंख्यात समयका अन्तरमहुर्त (१७) भाषाका पुद्गल प्रथम समय ग्रहन करे. अन्त समय त्याग करे. मध्यम ग्रहन करे और छुडता रहै एवं २२२ के अन्दर १७ बोल मीलानेसे २३९ बोल होते है समुच्चयजीव और १९ दंडक एवं बीस गुना करनेसे ४७८ बोल हुवे।

(९) समुच्चयजीव सत्यभाषापणे पुद्गल ग्रहन करे तो २३९ बोल पूर्ववत कहना इसीमाफीक पांचेन्द्रियके सोलहादंडक एवं सतरेको २३९ गुना करनेसे ४०६३ बोल हुवा इसी माफीक असत्यभाषाकाभी ४०६३ इसीमाफीक मिश्रभाषाकाभी ४०६३ व्यवहार भाषा मे समुच्चय जीव और १९ दंडक है वास्ते वैकले-न्द्रिय मे व्यवहार भाषा है बीसको २३९ गुना करनेसे ४७८ बोल हुवे समुच्चयके ४७८० बोल मीलानेसे एक वचनापेक्षा २१७२९

और यह वचनापेक्षा भी २१७४९ बोल मीलानेसे ४३४९८ भाषाके भांगे हुवे.

(१०) भाषाके पुद्‌गल मुंहसे निकलते है वह अगर भेदाते हुवे निकलेतों रहस्ते में अनंतगुणे वृद्धि होते होते लोकान्त तक चले जाते है तथा अभेदाते पुद्‌गल निकले तों संख्याते योजन जाके विध्वंस हो जाते है.

(११) भाषाके पुद्‌गल जो भेदाते है वह पांच प्रकारसे भेदाते है.

(क) खंडाभेद—पत्थर लोहा काष्टके खंडवत्.
(ख) परतरभेद—भोडल. अभरखवत्.
(ग) चूर्णभेद—गाहु चीणा मुगमठरवत्.
(च) अनुतडियाभेद—पाणीके निचेकी मट्टी शुष्कवत्.
(प) उक्करियाभेद—मुग चवलोकि फली तापमें देनेसे फाटे.

इन पांचों प्रकारके भेदाते पुद्‌गलोंकि अल्पाबहुत्व (१) सर्वस्तोक उक्करिये भेद भेदाते पुद्‌गल (२) अणुतडिये भेद भेदाते पु० अनंतगुणे (३) चूर्णिय भेद भेदाते पु० अनंतगुणे (४) परतर भेद भेदाते पु० अनंतगुणे (५) खंडाभेद भेदाते पु० अनंत गुणे। एवं समुच्चय जीव और १९ दंडक में जीस दंडक में जीतनी भाषा हो अर्थात् १६ दंडकमें च्यारों भाषा और तीन वैकलेन्द्रियमें एक व्यवहार भाषा सबमें पांचों प्रकारसे पुद्‌गल भेदाते है।

(१२) भाषाके पुद्‌गलोंकि स्थिति जघन्य एक समय. उत्कृष्ट अन्तर महुर्त एवं समुच्चय जीव और १९ दंडकमें.

(१३) भाषाको अन्तर ज० अन्तर महुर्त उ० अनंत काल कारण वनास्पतिमें चला जाये वह जीव अनंत काल वहां ही

परिनमन करे वास्ते अनंत काल तक भाषा पणे द्रव्य लेही न सके एवं समु० १९ दंडक।

(१४) भाषाके द्रव्य कायाके योगसे ग्रहन करते है (१५) भाषाके पुद्गल वचनके योगसे छोडते है एवं समु० १९ दंडक।

(१६) कारण द्वार मोहनिय कर्म और अन्तराय कर्मके क्षयोपशम और वचनके योगसे सत्य और व्यवहार भाषा बोली जाती है। ज्ञानावर्णिय कर्म और मोहनियकर्म के उदयसे तथा वचनके योगसे असत्यभाषा और मिश्रभाषा बोली जाती है एवं १६ दंडक परन्तु केवली जो सत्य और व्यवहार भाषा बोलते है उनों के च्यार घातिकर्मका क्षय हुवा है वैकलेन्द्रिय एक व्यवहार भाषा संज्ञारूप बोलते है।

(१७ जीव सत्यभाषा पणे द्रव्य ग्रहन करते है वह सत्य भाषा बोलते है। असत्य भाषापणे द्रव्य ग्रहन करते वह असत्य भाषा बोलते है मिश्रपणे ग्रहन करनेवाले मिश्रभाषा बोले और व्यवहार पणे द्रव्य ग्रहन करनेवाले व्यवहार भाषा बोले एवं १६ दंडक तथा तीन वैकलेन्द्रिय व्यवहार भाषापणे द्रव्य ग्रहन करे सो व्यवहार भाषा बोले। एक वचन कि माफीक बहुवचन भी समजना भांगा १४२

(१८) वचनद्वार भाषा बोलनेवाले व्याख्यान देनेवाले वार्तालाप करनेवाले महाशयजी को निम्नलिखत वचनोंका जानपना अवश्य करना चाहिये।

(१) एकवचन-रामः देवः-नृपः
(२) द्विवचन- रामौ देवौ नृपौ
(३) बहुवचन-रामाः देवाः नृपाः
(४ स्त्रि वचन-नदी लक्ष्मी अम्बा रंभा रामा
(५) पुरुषवचन-राजा-देवना ईश्वर भगवान्

(६) नपुंसकवचन-ज्ञान कमल तृण

(७) अध्यवसायवचन-दुसरोंके मनका भाव जानना*

(८) वर्णवचन-दुसरों के गुण कीर्त्तन करना

(९) अवर्णवचन-दुसरोंका अवर्णवाद बोलना

(१०) वर्णावर्णवचन-पहले गुण पीछे अवगुण

(११) अवर्णवर्ण-पहले अवगुण पीछे गुण करना

(१२) भूतकालवचन-तुमने यह कार्य कीया था

(१३) भविष्यकालवचन-आखीर तो करनाही पडेंगे

(१४) वर्तमान कालवचन-मैं यह कार्य कर रहा हुं.

(१५) प्रत्यक्ष—स्पष्टता वचन बोलना.

(१६) परोक्ष—अस्पष्टता वचन बोलना. इनके सिवाय प्रश्न व्याकारण सूत्र में भी कहा है कि काललिंग विभक्ति तद्धत धातु प्रत्यय वचन आदिका जानकार होना परम आवश्यका है।

(१७) सत्यअसत्य मिश्र और व्यवहार यह च्यार भाषा उपयोग संयुक्त बोलता भी आराधिक हो सक्ते है। कारण कीसी स्थानपर मृगादि जीव रक्षाके लिये जानता भी असत्य बोल सक्ते है परन्तु इरादा अच्छा होनेसे वह विराधि नही होते है श्री आचारांगसूत्रमें " जाणमाण न जाणु वयेज्ज "

(२०) नाम च्यार भाषाके ४२ नाम है। सत्यभाषाके दश भेद हैं (१) जीस देशमें जो भाषा बोली जाति है उसीको देश

* एक वणिक् कड का भार तेज हो जानेपर छोट गामडे मे कड खरीदने को गया वहां तेम भूखके मारे पीपासा बहुत लगी थी गाममें प्रवेश करते एक औरत के घर पर जाके कहा की मुझे पीपासा बहुत लगी है कई पीलाइये. इसपर उस औरत को ज्ञान हुवा की शहरमें कडका भाव तेज हुवा है उस वख्त ही बेटा भरने पतिको सूचित कर सब कड खरीद करवाली इति।

अज्ञानके वस मूलजानेसे क्रोधादि वस सत्य ही असत्य भाषाकि माफीक है और पर-परतापनावाली भाषा तथा जीवोंके प्राण चला जाय एसी भाषा बोलना यह दशों असत्य भाषा है।

मिश्र भाषाके दश भेद है-इन नगरमें इतने मनुष्यों उत्पन्न हुये हैं; उन नगरमें इतने मनुष्योंका मृत्यु हुवा है, इस नगरमें आज इतने मनुष्योंका जन्म और मृत्यु हुये यह सब पदार्थ जीव है यह सब पदार्थ अजीव है यह सब पदार्थोंमें आदे जीव आदे अजीव है. यह वनास्पति सब अनंतकाय है यह सब परितकाय है कालमिश्र. उठो पोरसी दीन आगये है। लो इतने वर्ष हो गये है भावार्थ जब तक जिस बातका निश्चय न हो जाय वहां तक अगर कार्य हुवा भी हो तो भी यह मिश्रभाषा है जिसमें कुच्छ सत्य हो कुच्छ असत्य हो उसे मिश्रभाषा कहते है।

व्यवहार भाषाका बार भेद है (१) आमंत्रणि भाषा-हे वीर, हे देव. २) आज्ञा देना यह कार्य एसा करो (३) याचना करना यह वस्तु हमे दो ४ प्रश्नादिका पुच्छना ५ वस्तु तत्त्वकि प्रकपना करना (६ प्रत्याख्यानादि करना (७ आगलेकी इच्छानुसार बोलना ' यहासुखम् ' (८) उपयोग शुन्य बोलना. (९) इरादा पूर्वक व्यवहार करना (१०) शंका सयुक्त बोलना (११) अस्पष्ट बोलना (१२) स्पष्टतासे बोलना। जिस भाषामें असत्य भी नहीं और पूर्ण सत्य भी नहीं उसे व्यवहार भाषा कही जाति है जेसे जीव मरगया इस्म पूर्ण सत्य भी नहीं है कारणकि जीव कभी मरता नहीं है और पूर्ण असत्य भी नहीं है कारण व्यवहारमे सब लोगोंने मरना जन्मना स्वीकार कीया है. इत्यादि –

(२१) अल्पाबहुत्वद्वार (१) सबसे स्तोक सत्य भाषा बो-

लने वाले (२) मिश्र भाषा बोलनेवाले असंख्यात गुणे (३) असत्य भाषा बोलनेवाले असंख्यात गुणे (४) व्यवहार भाषा बोलनेवाले असंख्यात गुणे (५) अभाषक अनंत गुणे कारण अभाषकमें एकेन्द्रिय तथा सिद्धभगवान् है इति।

सेवंभंते सेवंभंते—तमेव सच्चम्
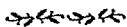
थोकडा नम्बर २४.

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २८ वा उ० १

(आहाराधिकार.)

(१) आहार तीन प्रकारके है सचिताहार-जीव संयुक्त पदार्थोंका आहार करना अचिताहार-जीवरहित पुद्गलोंका आहार करना. मिश्राहार जीवाजीव द्रव्योंका आहार करना. नारकी देवतोंमें अचित पुद्गलोंका आहार है और पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यचपांचेन्द्रिय और मनुष्य इन दस दंडकोंमें तीन प्रकारका आहार है सचिताहार अचिताहार मिश्राहार।

(२) नरकादि चौवीस दंडकोंमें आहारकि इच्छा होती है.

(३) नरकमें जीवोंको आहारकी इच्छा कीतने कालसे उत्पन्न होती है ? नरकादि सब जीवों जो अज्ञानपणे आहारके पुद्गल खेंचते है वह तो सब संसारी जीव समय समय आहार के पुद्गलोंको ग्रहन करते है। किन्तु परभव गमन समय विग्रह गति या जीव, केवली समुद्घात और चौदवे गुणस्थानके जीव अनाहारी भी रहते है। जो जीवों को ज्ञानपणे के साथ आहार इच्छा होती

है उनोंका काल-नरकमें असंख्यात समय के अन्तर महुर्तसे. आहारकी इच्छा उत्पन्न होती है असुरकुमार देवोंके जघन्य एक दिनसे उ० एकहजार वर्ष साधिक से, नागादि नौ काय के देवोंको तथा व्यंतर देवों कों ज० एक दिन उ० प्रत्येक दिनोंसे ज्योतिषी देवोंकों जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक दिनोंसे-वैमानीक देवोंमें सौधर्म देवलोक के देवोंको ज० प्रत्येक दिन उ० २००० वर्ष इशान देवलोक के देवों ज० प्रत्येक दिन उ० साधिक २००० वर्ष, सनत्कुमार देवलोक के देवोंको ज० २००० वर्ष, उ० ७००० वर्ष महेन्द्र देवोंके ज० साधिक २००० वर्ष, उ० साधिक ७००० वर्ष. ब्रह्मदेवों कों ज० ७००० वर्ष उ० १००० वर्ष लांतक देवों के ज० १०००० उ० १४००० वर्ष महाशुक्र देवोंको ज० १४००० उ० १७००० वर्ष सहस्रादेवोंकों ज० १७००० उ० १८००० वर्ष अणतदेवोंके ज० १८००० उ० १९००० वर्ष पणत् ज० १९००० उ० २०००० वर्ष. आरण्य ज० २०००० वर्ष उ० २१००० वर्ष अच्युत देवोंको ज० २१००० उ० २२००० वर्ष. ग्रीवेक प्रथम ग्रीक ज० २२००० उ० २५००० वर्ष. मध्यम ग्रीक ज० २५००० उ० २८००० उपरको ग्रीक कों ज० २८००० उ० ३१००० वर्ष च्यार अनुत्तर वैमानवासी देवों कों ज० ३१००० उ० ३३००० वर्ष सर्वार्थसिद्ध वैमानवासी देवोंकों ज० उ० ३३००० वर्षोंसे आहार इच्छा उत्पन्न होती है। पांच स्थावर कों निरान्तराहार इच्छा होती है. तीन वकलेन्द्रिय कों अन्तर महुर्तसे. तीर्यच पांचेन्द्रि ज० अन्तर महुर्त उ० दो दिनोंसे ओर मनुष्यकों आहार इच्छा ज० अन्तरमहुर्त उ० तीन दिनोंसे आहार इच्छा उत्पन्न होती है।

(४) नारकी के नैरिये जो आहारपणे पुद्गल ग्रहन करते है वह द्रव्यसे अनंते अनंतप्रदेशी, क्षेत्रसे असंख्यात प्रदेश अवगाहान कीये हुवे, कालसे एक समयकि स्थिति यावत् असंख्यात

समयकि स्थिति के पुद्गल. भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श जेसे भाषाधिकारमें कहा है इसी माफोक. परन्तु इतना विशेष है कि भाषापणे च्यार स्पर्शवाले पुद्गल लेते थे यहां आहारपणे आठो स्पर्शवाले पुद्गल ग्रहन करते है. इस वास्ते पांच वर्ण दोगन्ध पांच रस आठ स्पर्श एवं वीस बोलसे प्रत्येक बोल पर तेरह तेरह बोलोंकि भावना करणी जेसे एक गुण काला पुद्गल दोगुण तीनगुण च्यारगुण पांचगुण छेगुण सात गुण आठगुण नौगुण दशगुण संख्यातगुण असंख्यातगुण और अनंतगुणकाले इसी माफीक वीसों बोलोंको तेरहा गुणे करनेसे २६० बोल हुवे. स्पर्शादि १४ देखो भाषाधिकारमें बोल मीलानेसे १-१-१२-२६०-१४ सर्व २८८ बोलोंका आहार नारकी ग्रहन करते है. अधिकतर नारकी वर्णमें श्याम वर्ण हरावर्ण गन्धमें दुर्भिगन्ध रसमें तिक्त कटुक रस. स्पर्शमें कर्कश गुरु शीत रूक्ष स्पर्श के पुद्गलो का आहार लेते है वह ग्रहन कीये हुवे. पुद्गलोंको भी सडाके खराब करके पूर्वका वर्णादि गुणोंको विगीत कर नये खराब वर्णादि उत्पन्न कर फीर ग्रहन कीये हुए पुद्गलो का आहार करे.

इसी माफीक देवतों के तेरहा दंडकों में भी २८८ बोलोंका आहार लेते है परन्तु वह शुभ द्रव्य वर्णमें पीला सुपेद गन्धमें सुभिगन्ध रसमे आंबिल मधुर रस स्पर्शमें मृदुल लघु उष्ण स्निग्ध पुद्गलों का आहार करे वहभी उन पुद्गलोंको पूर्वके खराब गुणो को अच्छा बनाके मनोज्ञ पुद्गलोंका आहार करे इसी माफीक पृथ्व्यादि दश दंडकों में वीसों बोलोंके पुद्गलों को ग्रहन कर चाहे उसे अच्छे के खराब बनावे चाहे खराब के अच्छे बनावे २८८ बोल पूर्ववत् आहार ग्रहन करे परन्तु पांच स्थावरमें दिशापेक्षास्यात् ३-४-५ दिशाका भी आहार लेते है कारण

जहां अलोक कि व्याघात है वहां ३-४-५ दिशाका ही पुद्गल लेते है शेष छे दिशा सर्व ७२०० बोल हुवे।

(५) नारकी जो आहारपणे पुद्गल ग्रहन करते है वह क्या सर्व आहार करे. सर्वप्रणमें सर्वउश्वासपणे सर्वनिश्वासपणे प्रणमे तथा पर्याप्ता कि अपेक्षा वारवार आहार करे प्राणमें उश्वासे निश्वासे और अपर्याप्ता कि अपेक्षा कदाच् आहारे कदाच् प्रणमे. कदाच् उश्वासे कदाच् निश्वासे ? उत्तरमें बारहा बोल ही करे है एवं २४ दंडकों में बारहा बोल हानेसे २८८ बोल हुवे।

(६) नारकी के नैरियों के आहार के योग्य पुद्गल है उनोंसे असंख्यात में भाग के द्रव्यों को ग्रहन करते है ग्रहन कीये हुवे द्रव्योंसे अनंतमें भागके द्रव्य अस्वादन में आते है शेष पुद्गल विगर अस्वादन कियेही विध्वंस हो जाते है इसी माफीक २४ दंडकमें परन्तु पांच स्थावरमें एक स्पर्शेन्द्रिय होनेसे वह विगर स्पर्श कीये अनंत भाग पुद्गल विध्वंस हो जाते है।

(६) नारकी देवताओ और पांचस्थावर एवं १९ दंडकोंके आहार पणे पुद्गल ग्रहन करते है वह सबके सब आहार करते जीव जो है कारण उनोंके रोम आहार है और वे इन्द्रिय जो आहार लेते है वह दो प्रकारसे लेते है एक रोम आहार जो समय समय लेते है वह तो सब के सब पुद्गलो का आहार करते है और दुसरा जो कवलाहार है उनीमें ग्रहन कीये हुये पुद्गलो के असंख्यातमें भागका आहार करते है और अनेक हजारों भागके पुद्गल विगर स्वाद विगर स्पर्श किये ही विध्वंस हो जाते है जिस्कीतरतमत्ता (१) सर्व स्तोक विगर अस्वादन कीये पुद्गल (२) उनोंसे अस्पर्श पुद्गल अनंत गुणे है एवं तेइन्द्रि परन्तु एक विगर गन्धलिये ज्यादा कहना (१) सर्व स्तोक विगर गन्धके पुद्गल (२) विगर अस्वादन किये पुद्गल अनंत गुणे (३)

विगर स्पर्श वि.ये पुद्गल अनंतगुणे इसी माफीक चोरिन्द्रिय-पांचेन्द्रिय और मनुष्यभी समझना।

(८) नारकी जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन करते है वह नारकीके कौस कार्यपणे प्रणमते हैं ? नारकीके आहार किये हुये पुद्गल श्रोत्रेन्द्रिय. चक्षुइन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय अनिष्ट अकान्त अप्रिय अमनोज्ञ विशेष अमनोज्ञ अशुभ अनिच्छापणे भेदपणे ऊंचापणे नहीं किन्तु निचापणे, सुखपणे नही, किन्तु दुःखपणे. इन सत्तरा बोलोंपणे वारवार प्रणमते है. पांच स्थावर तीनवैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्य इन दश दंडकोंमे औदारीक शरीर होनेसे अपनि अपनि इन्द्रियोंके सुख ओर दुःख दोनोपणे प्रणमते है। देवतोंके तेरह दंडकमें नरकसे उलटे याने सत्तरा बोलोंभी अच्छे सुखकारी प्रणमते है अर्थात् नारकीमें आहारके पुद्गल एकान्त दुःखपणे देवतोंमें एकान्त सुखपणे और औदारीक शरीरवाले दोयजीवोंके सुख दुःख दोनोंपणे प्रणमते है।

(९) नारकीके नैरिय जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन करते है वह क्या एकेन्द्रियके शरीर है यावत् क्या पांचेन्द्रियके शरीर है ? पूर्व पर्यायापेक्षातो जो जीव अपना शरीर छोडा है उनोंकाही शरीर है चाहे एकेन्द्रियके हो यावत् चाहे पांचेन्द्रियका हो और वर्तमान वह पुद्गल नारकी ग्रहन किये हुवे है वास्ते पांचेन्द्रियके पुद्गल कहा जाते है एवं १६ दंडक एवं पांच स्थावर परन्तु वर्तमान एकेन्द्रिय के पुद्गल कहा जाते है एवं बेन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय अपनि अपनि इन्द्रिय कहना कारण पहले आहार लेनेवाले जीव उन पुद्गलोंको अपना करलेते है वास्ते उनोंके ही पुद्गल कहलाते है।

(१०) नारकी देवता और पांच स्थावर—रोमाहारी है किन्तु प्रक्षेप आहारी नही है. तीन वैकलेन्द्रिय, तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्य रोमाहारी तथा प्रक्षेपाहारी दोनों प्रकारके होते है।

(११) नारकी पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्य ओजाहारी है और देवता ओज आहारी और मन इच्छताहारी भी है कारण देवता मन इच्छा करे वैसे पुद्गलोंका आहार कर सके है शेष जीवकों जेसा पुद्गल मीले वैसोंका ही आहार करना पडता है इति

॥ सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर. २५

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद ७ वा श्वासोश्वास)

नारकीके नेरिया श्वासोश्वास लोहारकि धमणकि माफीक लेते है तीर्यंच और मनुष्य वे मात्रा याने जल्दीसे या धीरे धीरे दोनों प्रकारसे श्वासोश्वास लेते है। देवतोंमें असुर कुमारके देव जघन्यसे सात स्तोक कालसे उत्कृष्ट साधिक एक पक्ष (पन्द्रा-दिन) से श्वासोश्वास लेते है। नागादि नौ निकायके देव तथा व्यंतर देव ज० सात स्तोक कालसे उ० प्रत्येक महुर्तसे। ज्योतिषीदेव ज० प्रत्येक महुर्त उ० प्रत्येक महुर्त. सौधर्म देवलोकके देव ज० प्रत्येक महुर्त उ० दो पक्षसे ईशानदेव ज० प्रत्येक महुर्त उ० साधिक दो पक्षसे सनत्कुमारके देव ज० दो पक्ष उ० सात पक्ष. महेन्द्र ज० दो पक्ष साधिक उ० साधिक सात पक्षसे ब्रह्म देव ज० सातपक्ष उ० दशपक्षसे, लान्तकदेव, ज० दशपक्ष, उ० चौ-

दापक्ष महाशुक देव ज० चौदापक्ष उ० सत्तरापक्ष सहस्रादेव ज० सत्तरापक्ष उ० अठारापक्षसे अणतदेव ज० अठारापक्ष. उ० उन्निसपक्षसे, पणतदेव ज० उन्निसपक्ष उ० वीस पक्षसे अरण्यदेव ज० वीसपक्ष उ० एकवीस पक्षसे अच्युतदेव ज० एकवीस पक्ष उ० बावीसपक्षसे ग्रीवैकके पहले ग्रीकके देव ज० बावीसपक्ष उ० पचवीस पक्ष दुसरी ग्रीकके देव ज० पचवीस पक्ष उ. अठावीस पक्षसे तीसरी ग्रीकके देव ज० अठावीस पक्ष उ० एकतीस पक्ष च्यारानुत्तर वैमानके देव ज० एकतीस पक्ष उ० तेत्तीसपक्ष सर्वार्थसिद्ध वैमानके देव जघन्य उत्कृष्ट तेत्तीसपक्षसे श्वासोश्वास लेते है। जैसे जैसे पुन्य बढते जाते हैं वैसे वैसे योगोंकी स्थिरता भी बढती जाती है देवतावोंमें जहा हजारों वर्षोंकि स्थिति है वह सात स्तोक कालसे, पल्योपमकि स्थिति है वह प्रत्येक दिनोंसे और सागरोपमकी स्थिति है वहां जीतने सागरोपम उतनेही पक्षसे श्वासोश्वास लेते हैं। नोट-असंख्यात समयकि एक आविलका संख्याते आविलका. का एक श्वासोश्वास. सात श्वासोश्वासका एक स्तोक काल होते हैं इति।

सेवंभंते सेवंभंते-तमेवसच्चम्.

—✻—

थोकडा नम्बर. २६

(सूत्रश्री पन्नवणाजी पद ८ वा संज्ञाधिकार)

संज्ञा—जीवोंकि इच्छा. वह संज्ञा दश प्रकारकी हैं आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा मैथुनसंज्ञा, परिग्रहसंज्ञा क्रोधसंज्ञा, मानसंज्ञा, मायासंज्ञा. लोभसंज्ञा, लोकसंज्ञा. ओघसंज्ञा।

आहारसंज्ञा उत्पन्न होनेके च्यार कारण है. उदररीता होनेसे क्षुधावेदनिय कर्मोदयसे आहारको देखनेसे और आहारकि चिंतवना करनेसे आहार संज्ञोत्पन्न होती है।

भयसंज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है अधैर्य रखनेसे. भयमोहनिय कर्मोदयसे, भय उत्पन्न करनेवाला पदार्थ देखने से और भय कि चिंतवना करने से। हा हा अब क्या करूंगा !

मैथुन संज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है. शरीर को पौद्र याने हाड मांस रौद्र बढानेसे. वेद मोहनिय कर्मोदयसे, मैथुन उत्पन्न करनेवाले पदार्थ स्त्रि आदि को देखने से मैथुन कि चिंतवना करने से मैथुनसंज्ञा उत्पन्न होती है।

परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होने का च्यार कारण है. ममत्वभाव बढाने से. लोभ मोहनिय कर्मोदय से, धनादि के देखने से परिग्रह कि चिंतवना करनेसे ''

क्रोध संज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है. क्षेत्र, मकान, बाग-बगीचे. घर, हाट, हवेली शरीरादि से. धनधान्यादि औषधि से क्रोध उत्पन्न होते है एवं मान माया, लोभ,

लोकसंज्ञा अन्य लोकों को देख के आप भी वह क्रिया करते है. ओघसंज्ञा शुन्य चित्तसे विचारणा करे स्वामीजी, गुरुजी. धरती माता इत्यादि उपयोग शुन्यतासे।

नरकादि जीवोंको देहको मे दश दश संज्ञा पावे. जीसी दंडक में सामग्री अधिक मीलने से प्रवृत्ति ज्यादा है जीसी जीवों को इतनी सामग्री न मीलने से अव्यक्त में है और सामग्री मीलने से प्रवृत्ति रूप में भी प्रवृत्ति संज्ञा का अस्तित्व छट्ठे गुणस्थान तक है।

अल्पाबहुत्व— नरक में (१) स्तोक मैथुनसंज्ञा (२) आहार संज्ञा संख्यातगुणे (३) परिग्रहसंज्ञा संख्यातगुणे (४ भयसंज्ञा संख्यातगुणे-तीर्यच में (१) सर्वस्तोक परिग्रहसंज्ञा. (२) मैथुन संज्ञा संख्यातगुणे. (३) भयसंज्ञा संख्यातगुणे (४) आहारसंज्ञा संख्यातगुणे। मनुष्य में (१) सर्वस्तोक भयसंज्ञा. (२) आहार-संज्ञा संख्यातगुने (३) परिग्रहसंज्ञा संख्यातगुणे (४) मैथुनसंज्ञा संख्यातगुणे। देवतों में (१ सर्वस्तोक आहारसंज्ञा (२) भय-संज्ञा संख्यातगुणे ३ मैथुनसंज्ञा संख्यातगुणे (४) परिग्रहसंज्ञा संख्यातगुने.

नरक में सर्वस्तोक लोभसंज्ञा मायासंज्ञा संख्यातागुणे मान-संज्ञा संख्या० क्रोधसंज्ञा संख्यागु तीर्यच मनुष्य में सर्वस्तोक मानसंज्ञा, क्रोधसंज्ञा. विशेषाधिक मायासंज्ञा विशेषाधिक. लोभ-संज्ञा विशेषाधिक देवतों में सर्वस्तोक क्रोधसंज्ञा मानसंज्ञा सं-ख्यातगुणे मायासंज्ञा संख्यातगुणे लोभसंज्ञा संख्यातगुणे इति।

॥ सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम् ॥

—◦◦◦—

थोकडा नम्बर २७

—

(सूत्र श्री पन्नवणाजीपद ९ वा योनिपद)

जावों के उत्पन्न होने के स्थानों को योनि कही जाती है. वह योनि तीन प्रकार की है। शीतयोनि, उष्णयोनि, शीतोष्ण-योनि। पहली, दुसरी, तीसरी, नरक में शीतयोनि नैरिये है. चोथी नरक में शीतयोनि नैरिये ज्यादा है और उष्ण योनि नैरिये

कम है पांचवी नरक में शीतयोनि नेरिये कम है उष्णयोनि ज्यादा है छठी सातवी नरक में उष्णयोनि नैरिया है। सर्व देवता तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्यों में शीतोष्णयोनि है। च्यार स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय में तीनों योनि पावे. और तेउकाय केवल उष्णयोनि है। सिद्ध भगवान् अयोनि है। (१) सर्वस्तोक शीतोष्ण योनिवाले जीव. (२) उनो से उष्णयोनिवाले जीव असंख्यातगुणे (३) अयोनिवाले जीव अनंतगुणे ४) शीतयोनिवाले जीव अनंतगुणे।

योनि तीन प्रकार कि है. सचित्तयोनि, अचित्तयोनि, मिश्रयोनि, नारकी देवता अचित्तयोनि में उत्पन्न होते है पांच स्थावर तीन वकलेन्द्रि असंज्ञी तीर्यंच, असज्ञी मनुष्य में योनि तीनों पावे. संज्ञी मनुष्य तीर्यंच में एक मिश्रयोनि है. (१) सिद्धभगवान अयोनि है (१) सर्वस्तोक, मिश्रयोनिवाले जीव, २) अचितयोनि वाले जीव असंख्यातगुणे, (३) अयोनीवाले जीव अनंतगुणे (४) सचित योनिवाले अनंतगुणे.

योनि तीन प्रकार की ह संवृतयोनि, असंवृतयोनि, मिश्रयोनि. नारकी देवता और पांच स्थावर के संवृतयोनि है तीन वैकलेन्द्रिय, असंज्ञा तीर्यंच मनुष्य के असवृतयोनि है. संज्ञी तीर्यंच सज्ञ। मनुष्यो के मिश्रयोनि सिद्ध भगवान् अयोनि है। (१) सर्वस्तोक मिश्रयोनिवाले जीव है (२) असंवृतयोनिवाले असंख्यात गुणे (३) अयोनिवाले अनंतगुणे (४) संवृतयोनिनवाले अनंतगुणे है।

योनि तीन प्रकार की है कुम्भायोनि, सक्खावर्तनयोनि, वंसीपत्तायोनि. कुम्भायोनि तीर्यकरादिके माताकि होती है। संक्खावर्तन योनि चक्रवर्त्ति के खि रत्नकी होती है जिसमें जीव पुद्गल उत्पन्न होते हे विध्वंसभी होते हे परन्तु योनिद्वारा जन्मते

नहीं है। गर्भोपत्तयोनि शेष सर्व संसारी जीवोंकि माताके होती है जीस योनि में जीव उत्पन्न होते है वह जन्मते भी है वि-ध्वंस भी होते है। इति

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्।

थोकडा नम्बर २८.

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १ उद्देशा १

सर्व जीव दो प्रकार के है उसे आरंभी कहते है (१) आत्मा का आरंभ करे. परका आरंभ करे. दोनों का आरंभ करे. (२) कीसी का भी आरंभ नही करे वह अनारंभीक है. इसका यह कारण है कि जो सिद्धों के जीव है वह तो अनारंभी है और जो संसारी जीव है वह दो प्रकार के है १) संयति (२ असंयति. जिस्मे संयति के दो भेद है. १ प्रमादि संयति दुसरे अप्र-मादि संयति.जो अप्रमादि संयति है वह तो अनारंभी है और जो प्रमादि संयति है उनोंके दो भेद है एक शुभयोगि दुसरा अशुभ योगि जिस्मे शुभ योगि है वहतो अनारंभी है और जो प्रमादि संयति अशुभ योगि है वह आत्मा आरंभी है परारंभी है उभया-रंभी है एवं असंयति भी समझना। एवं नरकादि २३ दंडकतो आत्मारंभी परारंभी उभयारंभी है परन्तु अनारंभी नही है और मनुष्य समुच्चय जीवकि माफीक संयति अप्रमादि और शुभ योग-वाले तो अनारंभी है १। शेष आरंभी है.

लेश्यासंयुक्त जीवोंके लिये यह दो बाल है जो संयति अप्र-मादि और शुभ योगवाले है वह तो अनारंभी है शेष आरंभी है

एव मनुष्य शेष २३ दंडक के लेश्या संयुक्त जीव आरमारंभी परारंभी उभयारंभी है. कृष्ण, निल, कापोत, लेश्यावाले समुचय जीव ओर बावीस बावीस दंडक के जीव सबके सब आरंभी है कारण यह तीनों अशुभ लेश्या है इनोंके परिणाम आरंभसे बच नहीं सकते है। तेजो लेश्या समुचय जीव और अठारा दंडकोंमे है जिस्मे समुचय जीव और मनुष्यके दंडकमें जो संयति अप्रमादि और सुभयोगवाले तों अनारभी है शेष सब आरभी है एव पद्म लेश्या तथा शुक्ल लेश्या भी समजना परन्तु यह समुचय जीव वैमानिक देव ओर संज्ञी मनुष्य तीर्यचमे ही है जिस्मे संयति अप्रमादिपणा मनुष्यमें ही होते है वह अनारंभी है शेष जीव तों आत्मारभी परारंभी उभय आरंभी होते है वह अनारभी नही है।

आत्मारंभी स्वय आप आरंभ करे। परारंभी दुसरोंसे आरभ करावे उभयारभी आप स्वयं करे तथा दुसरोंसे भी आरंभ करावे इति.

सेवंभंते सेवंभंते–तमेवसचम्

—※◎◎◎※—

थोकडा नम्बर २६.

(अल्पाबहुत्व.)

संज्ञी,असज्ञी, तस, स्थावर, पर्याप्ता, अपर्याप्ता, सूक्ष्म और बादर. इन आठ बोलोंके लद्धिया अलद्धिया पर्व १६।

(१) सर्वस्तोक संज्ञी के लद्धिया. (२) तस जीवोंके लद्धिया असंख्यात गुणे (३) असंज्ञीके अलद्धिये अनंतगुणे (४) स्थावर के अलद्धिये विशेष. (५) बादर के लद्धिये अनंत गु० (६) सुक्ष्मके अलद्धिमें विशेष: (७) अप-

पांता के अलद्धिये असंख्यात गुणे (८) पर्याता के अलद्धिये विशेष. (९) पर्याताके लद्धिया संख्यात गुणे (१०) अपर्याप्ताके अलद्धिये विशेष. (११) सूक्ष्मके लद्धिये विशेष. (१२) बादरके अलद्धिये वि० (१३) स्थावरके लद्धिये विशे० (१४) त्रसके अलद्धिये वि० (१५) असंज्ञीके लद्धिये वि० (१६) संज्ञीके अलद्धिये विशेषाधिक। लद्धिया जैसे संज्ञीके लद्धिये. कहनेसे संज्ञी जीव और संज्ञीके अलद्धिये कहनेसे असंज्ञी जीव और सिद्धोंके जीव गीने जाते हैं इसी माफीक जीसके लद्धिये कहनेसे वह जीव है और जीसको अलद्धिया कहनेसे उन जीवोंके सिवाय शेष जीव अलद्धिये में गीने जाते हैं इति।

चौदाभेद जीवोंकी अल्पाबहुत्व. (१) सर्व स्तोक संज्ञी पांचेन्द्रियका अपर्याता. (२) संज्ञी पांचेन्द्रियके पर्याता संख्यातगुणे. (३) चौरिन्द्रिय पर्याता संख्या. गु० (४) असंज्ञी पांचेन्द्रिय पर्याता विशेषः (५) बेइन्द्रियके पर्याता विशे० (६) तेइन्द्रियके पर्याता विशेषः (७) असंज्ञी पांचेन्द्रिय के अपर्याता असंख्यात गुणे (८) चौरिन्द्रियके अपर्याता विशे० (९) तेइन्द्रियके अपर्याता विशे० (१०) बेइन्द्रियके अपर्याता विशे. (११) बादर एकेन्द्रियके पर्याता अनंत गुणे (१२) बादर एकेन्द्रियके अपर्याता असंख्यात गुणे (१३) सूक्ष्म एकेन्द्रियके अपर्याता असंख्यात गुणे (१४) सूक्ष्म एकेन्द्रियके पर्याता संख्यातगुणे इति।

आठ बोलोंकि अल्पाबहुत्व- (१) सर्वस्तोक अभव्यजीव (२) प्रतिपाति सम्यग्द्रष्टि अनंतगुणे (३) सिद्धभगवान् अनंतगुणे (४) संसारीजीव अनंतगुणे (५) सर्व पुद्गल अनंतगुणे (६) सर्व काल अनंतगुणे (७) आकाशप्रदेश अनंतगुणे (८) केवलज्ञान केवलदर्शनके पर्यव अनंत गुणे।

स्तोक परत्तससारी जीव, शुक्लपक्षी जीव अनंतगुणे, कृष्ण-

पक्षीजीव अनंतगुणे, अपरत्त संसारी जीव विशेषः। पुनः। स्तोक अपर्याप्ता जीव सुप्ताजीव संख्यातगुणे जागृतजीव संख्यातगुणे पर्याप्ताजीव विशेषः॥ पुनः॥ स्तोक समोह या मरणवाले जीव. इन्द्रिय बहुता संख्यात गुणे नोइन्द्रिय बहुते विशेषः असमोहये जीव विशेषः। पुनः। स्तोक बादरजीव, अणाहारी जीव संख्यात गुणे, सूक्ष्मजीव संख्यातगुणे आहारीक जीव विशेषः॥ पुनः॥ स्तोक बादरके लद्धिये, सूक्ष्मके अलद्धिये विशेषः सूक्ष्मके लद्धिये असख्यातगुणे बादरके अलद्धिये विशेषः इति।

—✱◎◎◎✱—

थोकडा नम्बर ३०.

स्तोक अभव्यके लद्धिये (२) शुक्लपक्षके लद्धिये अनंत गुणे (३) भव्यके अलद्धिये अनंतगुणे (४) भव्यके लद्धिये अनंत गुणे (५) कृष्णपक्षीके लद्धिये विशेषः (६) कृष्णपक्षीके अलद्धिये अनंतगुणे (७) शुक्लपक्षीके अलद्धिये विशेषः (८) अभव्य के अलद्धिये विशेषः॥ पुनः॥ स्तोक मनुष्यके लद्धिये (२) नारकीके लद्धिये असंख्यातगुणे (३) देवतांके लद्धिये असं॰ गु॰ (४) तीर्यंचके अलद्धिये विशेषः (५) तीर्यंचके लद्धिये अनंतगुणे (६) देव अलद्धिये वि॰ (७) नरक अलद्धिये वि॰ मनुष्य अलद्धिये विशेषः॥

स्तोक मिश्रदृष्टि [२] पुरुषवेद असंख्यात गुणे [३] स्त्रिवेद संख्यात गुणे (४) अवधिदर्शन विशेष (५) चक्षुदर्शन सं॰ गु॰ (६) केवलदर्शन अनंतगुणे (७) सम्यग्दृष्टि विशेषः (८) नपुंसकवेद अनंतगुणे (९) मिथ्यादृष्टि वि॰ (१०) अचक्षुदर्शन विशेषः॥ पुनः॥ स्तोक असंज्ञीजीव (२) नोसंज्ञीजीव अनंतगुणे (३ नोसंज्ञीनोअसंज्ञीजीव विशेषः ४ नोसंज्ञीजीव विशेषः॥

स्तोक मनः बलमान [२] वचन बलमान असंख्यातगुणे [३] श्रोत्रेन्द्रिय बलमान असंख्यात गुणे [४] चक्षुइन्द्रिय बलमान विशेषः [५] घ्राणेन्द्रिय बलमान विशेषः वि० [६] रसेन्द्रिय बलमान वि० (७) स्पर्शेन्द्रिय बलमान अनंतगुणे [८] काय बल मान विशेषः [९] श्वासोश्वास बलमान वि० [१०] आयुष्य बलमान विशेषः ॥ पुनः ॥ स्तोक मनः पर्याप्तिके जीव [२] भाषापर्याप्तिके जीव असंख्यात गुणे [३] श्वासोश्वास पर्याप्ति के जीव अनंतगुणे [४] इन्द्रिय पर्याप्ति० वि० [५] शरीर पर्याप्तिके जीव वि० [६] आहार पर्याप्तिके जीव विशेषः ॥पुनः॥ स्तोक मनुष्य [२] नारकी असंख्यात गुणे [३] देवता असंख्यातगुणे [४] पुरुषवेद विशेषः [५] स्त्रिवेद संख्यातगुणे [६] नपुंसकवेद अनंत गुणे [७] तीर्यंच विशेषाधिक ॥ इति

थोकडा नम्बर ३१.

स्तोक मनुष्यणी [२] मनुष्य असंख्यात गुणे [३] नेरिये असंख्यातगुणे [४] तीर्यचणी असंख्यातगुणी [५] देवता संख्यात गुणे [६] देवी संख्यातगुणी [७] पांचेन्द्रिय संख्यात गुणे [८] चौरिन्द्रिय वि० [९] तेइन्द्रिय वि० [१०] बेइन्द्रिय वि० (११) त्रसकाय वि० [१२] तेउकाय असंख्यात गुणे [१३] पृथ्वी काय वि० [१४] अपकाय वि० [१५] वायुकाय वि० [१६] सिद्ध भगवान अनंतगुणे [१७] अनेन्द्रिय विशेषः [१८] वनास्पति अनंतगुणे [१९] एकेन्द्रिय वि० [२०] तीर्यंच विशेषः [२१] सेन्द्रिय वि० [२२] सकाया वि० [२३] समुच्चय जीव विशेषः

स्तोक मनुष्य [२] नारकी असंख्यात गुणे [३] देवता असंख्यात गुणे [४] पुरुषवेद विशेषः [५] स्त्रिवेसंख्यातगुणी

[६] पांचेन्द्रिय वि० [७] चोरिन्द्रिय वि० [८] तेइन्द्रिय वि० [९] बेइन्द्रिय वि० [१०] त्रसकाय वि० [११] तेउकाय असंख्यात गुणे [१२] पृथ्वीकाय वि० [१३] अपकाय वि० [१४] वायुकाय विशेषः [१५] वनास्पतिकाय अनन्तगुणे [१६] एकेन्द्रिय विशेषः [१७] नपुंसक जीव विशेषः [१८] तीर्यंचजीव विशेष।

सर्व स्तोक पांचेन्द्रियके लद्धिये [२] चोरिन्द्रियके लद्धिये विशेषः [३] तेइन्द्रियके लद्धिये वि० [४] बेइन्द्रियके लद्धिये वि० [५] तेउकायके लद्धिये असं० गु० [६] पृथ्वीकायके लद्धिये वि० [७] अपकायके लद्धिये वि० [८] वायुकायके लद्धिये वि० [९] अभव्यके लद्धिये अनंतगुणे [१०] परत्त संसारी जीवोंके लद्धिये अनंतगुणे [११] शुक्लपक्षी विशेषः [१२-१३] सिद्धोंके लद्धिये और संसारके अलद्धिये आपसमें तुला और अनंतगुणे [१४] वनास्पतिकायके अलद्धिये विशेषः [१५] भव्य जीवोंके अलद्धिये विशेषः [१६] परत्तजीवोके अलद्धिये वि० [१७] कृष्णपक्षीके अलद्धिये वि० [१८] वनास्पतिके लद्धिये अनंतगुणे [१९] कृष्णपक्षीके लद्धिये वि० [२०] अपरत्तजीवोंके लद्धिये वि० [२१] भव्यजीवोंके लद्धिये वि० [२२-२३] संसारी जीवोंके लद्धिये और सिद्धके अलद्धिये आपसमें तुला वि० [२४] शुक्लपक्षीके अलद्धिये वि० [२५] परत्तजीवोंके अलद्धिये वि० [२६] अभव्यजीवोंके अलद्धिये वि० [२७] वायुकायके अलद्धिया वि० [२८] अपकायके अलद्धिये वि० [२९] पृथ्वीकायके अलद्धिये वि० [३०] तेउकायके अलद्धिये वि० [३१] बेइन्द्रियके अलद्धिये वि० [३२] तेइन्द्रियके अलद्धिये वि० [३३] चोरिन्द्रियके अलद्धिये वि० [३४] पांचेन्द्रियके अलद्धिये विशेषाधिकार इति।

इति शीघ्रबोध भाग तीजो समाप्तम्

श्री सवंप्रभसूरीश्वराय नमः

शीघ्रबोध भाग ४ था.

थोकडा नम्बर ३२.

सूत्र श्री उत्तराध्ययनजी अध्ययन २४.

(अष्ट प्रवचन)

ईर्यासमिति. भाषासमिति, एषणासमिति, आदान भंडमनोषगणसमिति. उच्चार पासवण जल खेल मैल परिठावणिया समिति, मनोगुप्ति. वचनगुप्ति, कायगुप्ति इन पांच समिति तीन गुप्तिके अन्दर पांच समिति अपवाद है और तीन गुप्ति उत्सर्ग है जेसे मुनिको उत्सर्ग मार्गमें गमनागमन करना मना है: परन्तु अपवाद मार्गमें आहार, निहार, विहार और जिनमन्दिर दर्शन करनेको जाना हो तो इर्यासमितिपूर्वक जावे. उत्सर्ग मार्गमें मुनिको मौन रखना: परन्तु अपवाद मार्गमें याचना पुच्छना, आज्ञा लेना और प्रश्नादि पुच्छाका उत्तर देना इन कारणों से बोलाना पडे तो भाषा समिति संयुक्त बोले उत्सर्ग मार्गमें मुनिको आहार करना ही नहीं अपवादमें संयम यात्रा-शरीरके निर्वाहके लिये आहार करना पडे तो एषणासमिति निर्दोष आहार लाके करे, उत्सर्ग मार्गमें मुनिको निरूपाधि रहना, अपवादमें लज्जा तथा परिसह न सहन हो तो मर्यादा माफिक औषधि राखे, उत्सर्गमें

मल मात्र करे नही, आहार पाणीके अभाव परठे नही; अपवाद मार्गमें निर्वद्य भूमिपर विधिपूर्वक परठे।

(१) इर्यासमितिका च्यार भेद है—आलम्बन, काल, मार्ग, यत्ना. जिस्में आलम्बन-ज्ञान, दर्शन, चारित्र. काल-अहोरात्री. मार्ग-कुमार्ग त्याग और सुमार्ग प्रवृत्ति. यत्नाका च्यार भेद है-द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव. द्रव्यसे इर्यासमिति-छे कायाके जीवोंकि यत्ना करते हुये गमन करे.क्षेत्रसे-च्यार हाथ परिमाण भूमि देखके गमनागमन करे. कालसे दिनको देखके रात्रीमें पुंजके चाले. भावसे-गमनागमन करते हुये वाचना, पुच्छना, परावर्तना, अनुप्रेक्षा, धर्मकथा न कहे. शब्द, रूप, गन्ध, रस, स्पर्शपर उपयोग न रखते हुये इर्यासमिति पर ही उपयोग रखे।

(२) भाषासमितिके च्यार भेद—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव. द्रव्यसे—कर्कशकारी, कठोरकारी, छेदकारी, भेदकारी, मर्मकारी सावद्य पापकारी, मृषावाद और निश्चयकारी भाषा न बोले क्षेत्रसे-गमनागमन करते समय रहस्तेमें न बोले. कालसे-एक पहर रात्री जानेके बाद सूर्योदय हो वहांतक उच्चस्वरसे नहीं बोले. भावसे-राग द्वेष संयुक्त भाषा नहीं बोले।

(३) एषणासमितिके च्यार भेद--द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव. द्रव्यसे मुनि निर्दोष आहार, पाणी, वस्त्र, पात्र, मकानादिको ग्रहन करे; कारण निर्दोष अशनादि भोगवनेसे चित्तवृत्ति निर्मल रहती है, इसवास्ते फासुक आहार देनेवाले और लेनेवाले दुर्लभ बतलाये है और विगर कारण दोषित आहारादि देनेवाले वा लेनेवाले दोनोंको बाधकारी ही बतलाये है श्री स्थानांग सूत्र स्थाने ३ में तथा भगवतीसूत्र शतक ५ उ० ४ में दोषित आहार देनेसे स्वल्प आयुष्य तथा अशुभ दीर्घायुष्य बन्धते है और भगवतीसूत्र शतक १ उ० ९ में आधाकर्मी आहार करनेवालोंको

साताङ्ग कर्मोका-बन्ध अनंत संसारी और छे कायाकी अनुकम्पा रहित बतलाये है और निर्दोषाहार करनेवालेको शीघ्र संसारसे पार होना बतलाया है। निर्दोषाहार ग्रहन करनेवाले मुनियोंको निम्नलिखत दोषोंपर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

(१) आधाकर्मी दोष—जिनोंके पर्याय नाम च्यार है (१) आधाकर्मी-साधुके निमत्त छे काया जीवोंकि हिंस्या कर अशनादि तैयार करे (२) अधोकर्मी-एसा दोषिताहार करनेवाले आखीर अधोगतिमें जाते है (३) आत्मकर्मी-आत्माके गुण जो ज्ञान दर्शन चारित्र है उन्होंके उपर आच्छादन करनेवाले है। (४) आत्मघ्नकर्मी आत्मप्रदेशोंके साथ तीव्र कर्मोका बन्ध घन माफिक करनेवाले है। आधाकर्मी आहार लेनेसे आठ जीव प्रायश्चितके भागी होते है यथा— आधाकर्मी आहार करनेवाला, करानेवाला लेनेवाला, देनेवाला दीरानेवाला, अनुमोदन करनेवाला, खानेवाला, और आलोचना नही करनेवाला. इसवास्ते मुनिको सदैव निर्दोषाहार ही करना चाहिये।

एक मुनि निर्दोष पासुक जल लेके जंगलमें ध्यान करनेको गया था उस जल भाजनको एक वृक्षके नीचे रख आप कुच्छ दुर चले गये थे. पीच्छोंसे सैन्य रहित पीपासा पिडित एक राजा उन वृक्ष नीचे आया. मुनिका शीतल पाणी देख राजाने जलपान कर लिया. पीच्छोंसे राजादि सेना आइ. उन मुनिके पात्रमें राजा अपना जल डालके सब लोक चले गये। कुच्छ देरी से मुनि उन वृक्ष नीचे आया; अपना जल समझके जलपान कीया. दोनों पाणीका असर एसा हुवा कि राजाको संसार असार लगने लगा, और योग धारण करनेकी इच्छा हुइ. इधर मुनिको योगसे रुची हटके संसारकि तर्फ चित्त आकर्षन होने लगा. देखिये सदोष, निर्दोष आहार पाणीका केसा असर है. आखीर समझदार भावोंने

मुनिजीको बुलाय दीया और अकलमन्द प्रधानोंने राजाको बुलाय दीया. दोनोंके पाणीका अश निकल जाने से राजा राजमें और मुनि अपने योगमें रमणता करने लगे.

[२] उद्देसीक दोष—एक साधुके लिये किसीने आहार बनाया है यह साधु गवेषना करने पर उसे मालुम हुवा कि यह आहार मेरे ही लिये बना है उसे आधाकर्मी समजके ग्रहन नही किया अगर वह आहार कोइ दुसरा साधु ग्रहन न करे तो उनोंके लिये उद्देसीक दोष है.

[३] पुतिकर्म दोष—निर्वद्याहारके अन्दर एक सीत मात्र भी आधाकर्मीकि मील गइ हो तथा सहस्र घरोंके अन्तर भी आधाकर्मीका लेप मात्र भी मीला हुवा शुद्धाहारभी ग्रहन करनेसे पुतिकर्म दोष लगते है. श्री सूत्रकृतांग अध्ययन पहले उद्देसे तीजे पुतिकर्माहार भोगवनेवालोंको द्रव्ये साधु और भावे गृहस्थ एवं दो पक्ष सेवन करनेवाला कहा है।

[४] मिश्रदोष—कुच्छ गृहस्थोंका कुच्छ साधुवोंका निमित्त से बनाया आहार लेनेसे मिश्रदोष लगता है।

[५] ठवणा दोष—साधुके निमत्त स्थापके रखे.

[६] पाहुडिय—महेमान—कीसी महेमानोंको जीमाणा है. साधुके लिये उनोंकि तीथी फीरा देवे उन महेमानोंके साथ मुनि कों भी मिष्टान्नादि से तृप्त करे। एसा आहार लेना दोषित है।

[७] पावर—जहां अंधेरा पडता हो वहां साधुके निमित्त प्रकाश [बारी] करवाके आहार देना.

[८] क्रिय—क्रियविक्रय. मुनिके निमित्त मूल्य लायके देवे.

[९] पामिच्चे दोष—उधारा लाके देवे.

[१०] परियटे दोष—वस्तु बदलाके देवे

११ अभिहड दोष—अन्यस्थानसे सन्मुख लाके देवे.

१२ भिन्नदोष—छान्दो कोमाडादि खुलवाके देवे.

१३ मालोहड दोष—उपरसे जो मुश्किलसे उतारी जावे एसे स्थानसे उतारके दी जावे।

१४ अच्छीजे दोष—निर्बल जनोंसे सबल जबरदस्ति बलात्कारे छीनावे उसे लेना.

१५ अणिसिट्ठ दोष—दो जनोंके विभागमें हो एकको देने का भाव हो एकके भाव न हो वह वस्तु लेवे तो भी दोषित है.

१६ अज्झोयर दोष—साधुके निमित्त कमाहार बनाते समय ज्यादा करदे वह आहार लेना।

इन १६ दोषोंको उद्गमन दोष कहते है यह दोष जो गृहस्थ भद्रीक साधु आचारसे अज्ञात और भक्तिके नामसे दोष लगाते है.

१७ धाइदोष—धात्रीपणा याने गृहस्थ लोगोंके बालबच्चों को रमाना, खेलाना इनोंसे आहार लेना। ,,

१८ दुइदोष—दूतिपणा इधर उधर के समाचार कह के आहार लेना.

१९ निमित्तदोष—भूत भविष्यका निमित्त कहके आ० ,,

२० आजीवदोष - अपनि जातिका गौरव बतलाके ,,

२१ वणिमग्गदोष—रांकके माफिक याचना कर आ०,,

२२ तिगच्छदोष—औषधि वगरह बतलाके आ० ,,

२३ कोहदोष—क्रोध कर भय बतलाके आहार लेना.

२४ माणदोष—मान अहंकार कर आहार लेना.

२५ मायादोष—मायावृत्ति कर आहार लेना.

२६ लोभदोष—लालच लोलुपता से आहार लेना.

२७ पुव्वेपच्छसंथुव दोष—आहार ग्रहन करनेके पहले या पीछे दातारके गुण कीर्तन करके आहार लेना।

[२८] विद्यादोष—गृहस्थोंको विद्या बतलाके अर्थात् रोहणि आदि देवीयोंको साधन करनेकी विद्या „

[२९] मित्तदोष—यंत्र मंत्र शीखाना अर्थात् हरोणगमेषी आदि देवतोंका साधन करवाना „

[३०] चूर्णदोष—एक पदार्थके साथ दुसरा पदार्थ मीला के एक तीसरी वस्तु प्राप्त करना सीखाके „

[३१] जोगदोष—लेप वसीकरणादि बताके आ॰ „

[३२] मूलकर्मदोष—गर्भपातादि औषधीयों उपायों बतलाके आहार पाणी ग्रहन करना दोष है.

[क] यह सोलह दोष मुनियोंके कारण से लगते है वास्ते मोक्षाभिलाषीयोंको अपने चारित्र विशुद्धिके लिये इन दोषोंको टालना चाहिये इन १६ दोषोंको उत्पात दोष कहते है ।

[३३] संकिय दोष—आहार ग्रहन समय मुनिको तथा गृहस्थोंको शंका हो कि यह आहार शुद्ध है या अशुद्ध है, एसे आहारको ग्रहन करना यह दोष है ।

[३४] मंखिलए दोष—दातारके हाथकि रेखा तथा पात्र कचे पाणी में मसल डालेपर भी आहार ग्रहन करना ।

[३५] निखित्तिये दोष—सचित्त वस्तुपर अचित्ताहार रखा हुवा आहार ग्रहन करे.

[३६] पहियेदोष—अचित्तवस्तु सचित्तसे ढांकी हुइ हो „

[३७] मिस्सीयेदोष—सचित्त अचित्त वस्तु सामिल हो „

[३८] अपरिणिये दोष—शस्त्र पुरा नहीं लागा हो अर्थात् जो धान्यादि सचित्तवस्तु है उसीको आस्यादि शस्त्र पुरा न लगा हो „

[३९] सहारियेदोष—एक बरतनसे दुसरे बरतनमें लेके देवे

यह कटोरी कुडछी लीस पडी रहने से जीवोंकि विराधना होती है और धोने से पाणीके जीवोंकी विराधना हो ,,

[४०] दायगोदोष—दातार अंगोपांगसे हिन हो, अंधा हो जिनसे गमनागमनमें जीव विराधना होती हो ..

[४१] लीप्तदोष—तत्कालका लिपा हुवा आंगण हो ,,

[४२] छडियेदोष घृतादिके छांटे टीपके पडते देवे ,,

[ग] यह दश दोष मुनि गृहस्थी दोनोंके प्रयोग से लगते है वास्ते दोनोंको ख्याल रखना चाहिये। एवं ४२ दोष श्री आचारांग सूयगडायांग तथा निशियसूत्रोंमें और विशेष खुलासा पिंडनिर्युक्तिमें है। प्रसंगोपात अन्य सूत्रों से मुनि भिक्षाके दोष लिखे जाते है।

श्री आवश्यकसूत्रमें १ . गृहस्थोंके घरका कमाड दरवाजा खुलाके तथा कुच्छ खुला हो उनोंके अन्दर जा के भिक्षा लेना मुनियोंके लिये दोषित है , २ , कीतनेक देशोंमें पहले उतरी हुइ रोटी तथा धार खींच घावत अग्रभागका गौ कुत्तादिकों डालते है यह लेना मुनिको दोषित है [३] देव देवीके बलीका आहार लेना दोषित है [४] पिगर देखी हुइ वस्तु लेना दोष है [५] पहले निरस आहार आया हो पीच्छे से कीसी गृहस्थोंने सरसाहारकि आमंत्रण करी हो यह लोलुपतासे ग्रहन करते समय विचार करे कि अगर आहार यह आवेगा तो निरस आहार परठ देंगे तो दोषित है कारण आहार परठनेका बडा भारी प्रायश्चित है.

श्री उत्तराध्ययनजीसूत्र—

[१] असाता वृत्तिकि भिक्षा न करके अपने सज्जन संबंधीयोंके यहांकि भिक्षा करना दोष है [२] अकारण यानि विनों कारण आहार करना भी दोष है वह कारण छे प्रकारके है शरीरमें रोगादि होने से उपसर्ग होने से ब्रह्मचर्य न पलता हो तो०

जीव रक्षा निमित्त० तपश्चर्या निमित्त० और अनसन करने नि-
मित्त इन छे कारण से आहारका त्याग कर देना चाहिये । और
छे कारण से आहार करना कहा है क्षुधा वेदना सहन नहीं हो
सके. आचार्यादिकि व्यावच करना हो, इर्या सोधनेके लिये, संयम
यात्रा निर्वाहानेको, प्राणभूत जीव सत्वकि रक्षा निमित्त, धर्मकथा
कहनेके लिये इन छे कारणों से मुनि आहार कर सके है ।

श्री दशवैकालिक सूत्रमें—

[१] निचा दरवाजा हो वहां गौचरी जानेमें दोष है का-
रण सिरके लग जाये पात्रा विगेरे फुट जानेका संभव है ।

[२] जहांपर अन्धकार पडता हो वहां जानेमें दोष है.

[३] गृहस्थोंके घर द्वारपर बकरे बकरीयों [४] बच्चे बच्ची
[५] श्वान कुत्ते [६] गायोंके वाछरू बेठे हो उन्होंको उलंघके
जाना दोष है । कारण वह भीडके-भय पावे इत्यादि [७] औरभी
बीज पाणी हो उन्होंको उल्लंघके जानेसे दोष है कारण वहां शरीर
या संयमकि घात होनेका प्रसंग आ जाते है ।

[८] गृहस्थोंके वहां मुनि आनेके पहले देनेकि वस्तुयों
आघी-पाछी कर दी हो संघटेकि वस्तुयों इधर उधर रख दी हो
वह लेनेमें दोष है ।

[९] दानके निमित्त बनाया हुवा भोजन [१०] पुन्यके
निमित्त [११] वनिमग्ग-रांकादिके [१२] श्रमण शाक्यादिके
निमित्त इन च्यारोंके लिये बनाया हुवा भोजन मुनि ग्रहन करे
तो दोष अगर गृहस्थ इन निमित्तवालोंको भोजन करावे बचा
हुवा आहार अपने घरमें खाने पीने हो ता उन्होंके अन्दर से देना
मुनिको कल्पता है कारण वह आहार गृहस्थोंका हो चुका है ।

[१३] राजाके वहांका बलिष्ठाहार तथा राजवाजिंदोंके स-

भयका आहार (शुभाशुभ निमित्त) या राजाके वधीत आहारमें पंडालोगोंके भाग होते हैं वास्ते अन्तरायका कारण होनेसे दोष है।

[१४] शय्यातर—मकानके दातारका आहार लेनेसे दोष.

[१५] नित्यपंड—नित्य एक ही घरका आहार लेना दोष.

[१६] पृथ्व्यादिके संघटे से आहार लेना दोष है।

[१७] इच्छा पुरण करनेवाली दानशालाका आहार लेना,,

[१८] कम खानेमें आवे ज्यादा परठना पडे एसा आहार,,

[१९] आहार ग्रहन करनेके पहले हस्तादि धोके तथा आहार ग्रहन करनेके बाद सचित्त पाणी आदिसे हाथ धोवे एसा आहार लेना दोष है।

[२०] प्रतिनिषेध कुल स्वल्पकालके लिये सुवासुतक जन्म मरण वाले कुलमें तथा जावजीव-चंडालादि कुलमें गौचरी जाना मना है अगर जावे तो दोष है।

[२१] जास कुलमें ओरतोंका चाल चलन अच्छा न हो एसे अप्रतितकारी कुलमें मुनि गौचरी जावे तो दोष है।

[२२] गृहस्थ अपने घरमें आनेके लिये मना करदी हो कि मेरे घर न आना एसे कुलमें गौचरी जाना दोष है।

[२३] मदिरापान लेना तथा करना महा दोष है।

श्री आचारांगसूत्रसे—

१ पाहुणोंके लिये बनाया आहार जहांतक पाहुणा भोजन नहीं किया हो वहांतक वह आहार लेना दोष है।

२ त्रस जीवका मांस बिलकुल निषेध है।

३ जिस गृहस्थोंके पदार्थसे आधा भाग तथा अमुक भाग पुन्यार्थ निकालते हो उनोंसे अशनादि देवे वह भी दोष है।

(४) जहां बहुत मनुष्योंके लिये भोजन किया हो तथा न्याति सबन्धी जीमणवार हो वहां आहार ले तो दोष है।

(५) जहांपर बहुतसे भिक्षुक भोजनार्थी एकत्र हुवे हो उन घरोंमें आ के आहार ले तो दोष [अविश्वास हो]

(६) भूमिगृह तैखानादिसे निकालके आहार देवे तो दोष।

[७] उष्णादि आहारको फूक दे आहार दे तो भी दोष है।

[८] वींजणादि से शीतल कर आहार दे तो भी दोष है।

श्री भगवतीसूत्रमें—

[१ लाये हुवे आहारको मनोज्ञ बनानेके लिये दूसरी दफे मीसे दुध आ जानेपर भी सकरके लिये जाना इसे संयोग दोष कहते है।

[२] निरस आहार मीलनेपर नफरत लांक करना इसीसे चारित्रके कोलसा हो जाते है [द्वेषका कारण]

[३] सरस मनोज्ञ आहार मीलनेपर गृद्धि बन जावे तो चारित्रसे धुंवा निकल जावे [रागका कारण]

[४] प्रमाणसे अधिकाहार करनेसे दोष कारण आलस्य प्रमाद अजीर्णादि रोगोत्पत्तिका कारण है।

[५] पहले पहोरमें लाया हुवा आहारादि चरम पेहरमें भोगवनेसे कालातिकृत दोष लगते है।

[६] दो कोश उपरान्त ले आके आहार करने से मार्गातिकृत दोष लगता है।

[७] सूर्योदय होनेके पहले और सूर्य अस्त होनेके पीछे अशनादि ग्रहन करना तथा भोगवना दोष है।

[८] अटवी विगेरेमें दानशालाका आहार लेना दोष।

[९] दुष्कालमें गरीबोंके लिये किया आहार लेना दोष।

(१०) ग्लानोंके लिये किया आहार लेना दोष ।

(११) बादलोंमें अनाथोंके लिये बनाया आहार लेना दोष.

(१२) गृहस्थ नेंताके तोर कहे कि हे स्वामिन आज हमारे घरे गोचरीको पधारो इस माफीक जावे तो दोष ।

श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रमें—

(१) मुनिके लिये रूपान्तर रचना करके देवे जेसे नुकतीदानोंका लड्डु बना देवे इत्यादि तो दोष है ।

(२) पर्याय बदलके-जेसे दहीका मट्ठा राइता बनाके देवे

(३) गृहस्थोंके वहां अपने हाथों से आहार लेवे तो दोष.

(४) मुनिके लिये अन्दर ओरडादि से आहार लाके देवे तो दोष ।

(५) मधुर मधुर वचन बोलके आहारादिकि याचना करे.

श्री निशिथसूत्रमें—

(१) गृहस्थोंके वहां जाके पुच्छे कि इस वर्तनमें क्या है? इस्में क्या है एसी याचना करने से दोष है ।

(२) अटवीमें अनाथ मजुरोंके लिये गया हुवा से याचना कर दीनता से आहार ले तो दोष है ।

(३) अन्यतीर्थी जो भिक्षावृत्ति से लाया हुवा आहार है उनों से याचना कर आहार ले तो दोष है ।

(४) पासत्थे शीथिलाचारीयों से आहार ले तो दोष ।

(५) जीस कुलमें गोचरी जावे वह लोग जैन मुनियोंकि दुगंच्छा करे एसे कुलमें जाके आहार ले तो दोष ।

(६) शय्यातरको साथ ले जावे उनोंकि दलाली से अशनादिकि याचना करना दोष है ।

श्री दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रमें—

(१) बालकके लिये बनाया हुवा आहार मुनि लेवे तो दोष है कारण बालक रोने लग जाये हट पकड लेवे।

(२) गर्भवन्तीके लिये बनाया आहार लेवे तो दोष।

श्री बृहत्कल्पसूत्रमें—

(१) अशन, पान, खादिम, स्वादिम यह च्यार प्रकारके आहार रात्रीमें वासी रखके भोगवे तो दोष।

सर्व ४२-५-२-२३-८-१२-५-६-२-१ सर्व १०६ जिस्में पांच दोष मांडलेके और १०१ दोष गोचरी लानेका है. द्रव्यसे इन दोषोंको टाले।

(२) क्षेत्रसे दो कोश उपरान्त ले जाके नही भोगवे

(३) कालसे पहिलापहर का लाया चरमपहर में न भोगवे।

(४) भावसे मांडलेके पांच दोष. संयोग, अंगाल, धूम, परिमाण, कारण इनी दोषों को वर्जे के आहार करे उनममय सरसराट चरचराट न करे स्वादके लिये एक गलाफका दुसरी गलाफमें न लेवे टेरा टोपके न डाले केवल संयम यात्रा निर्वाहने के लिये. गाडा के आंगण तथा गुमडेपर लगती कि मार्फीक शरीर का निर्वाह करने के लिये ही आहार करे ॥ आहार पाणी के दोष दो प्रकार के होते है। (१) आम दोष जोकि आम दोषवाला आहार पात्रमें आजाये तो भी परठने योग्य होते है। (२) गम्य दोष जोकि सामान्य दोषोंत आहार अनोपयोगसे आ जावे तो उनोंकि आलोचना लेके भोगवीया जाते है। आम दोष-वाला आहार बारहा प्रकारके है शेष गम्य दोषवाला आहार समझना।

आधाकर्मी उद्देसीक पूतिकर्म, मिश्र, सूर्योदय पहलेका, सूर्यास्त पीछेका, कालातिक्रमका, मार्गातिक्रमका, ओछामें अ-

धिक किया हुवा, शंकावाला, मूल्य लाया हुवा, सचित्त पाणादी युक्त जो शीतल आहारमें गीर गइ है यह इति । एषणा समिति ।

(४) आदान भत्त भंडोपगरणीय समिति के च्यार भेद है द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव.

द्रव्यसे संयम यात्रा निर्वाहनेको वस्त्रपात्रादि भंडोमत्तोपगरण रखा जाते है उनोंकि संख्या ।

(१) रजोहरण-जीवरक्षानिमित्त तथा जैन मुनियोंका चन्ह इनको शास्त्रकारोंने धर्मध्वज कहा है यह आठ अंगुलकि दसीयों चौवीस अंगुल कि दंडी कुल ३२ अंगुलका रजोहरण होनाचाहिये।

(२) मुखवस्त्रिका-मख्खी मच्छरादि त्रस जीवों कि बोलते समय विराधना न हो या पुस्त्रादिक पर थुक से अशातना न हो. बोलते समय मुंह आगे रखनेको एकवितस च्यार अंगुल समचौरस होना चाहिये ।

(३) चोलपट्टा-कटीबन्ध पांच हाथका होता है ।

(४) चदर-मुनियोंको तीन साध्वीयोंको च्यार ।

(५) कम्बली-जीवरक्षानिमित्त, गमनागमन समय शरीर आच्छादन करनेको चतुर्मासमें छेघडी शीतकालमें च्यार घडी, उष्णकालमें दो घडी पाछला दिनसे उस काल दिन उगने के बाद कम्बली रखना चाहिये ।

(६ दंडा-मुनियोंको अपने कान प्रमाणे दंडा संयम या शरीर रक्षणनिमित्त रखना चाहिये ।

(६ पात्र-काष्टके तुंबेके मट्टीके आहार पानी लानेके लिये. एक वितसके चाहे हो तीन वितस च्यारांगुलके परघीवाले ।

८ झोली-पात्रे बन्ध जानेके बाद गांठसे च्यारों तर्फ च्यारांगुल ज्यादा रहना चाहिये, आहार लेनेको ।

(९ गुच्छा-उनके गुच्छा पात्रोंके उपर नीचे देके जीवरक्षाके लिये पात्रा बन्धनेको रख जाते है ।

(१०) रजस्तान—पात्रे बन्धते समय विचमें कपडे दिये जाते है जीवरक्षा तथा पात्रोंकी रक्षा निमित्त।

(११) पडिले-अढाइ हाथके लंबे, आधा हायसे ज्यादा चोडे एसे कपडेके ३-५-७ पडिले गोचरी जाते समय झोलीपर डाले जाते है. जीवरक्षा निमित्ते।

(१२) पायकेसरी—पात्रे पुंजनेके लिये छोटी पुंजणी. जीवरक्षा निमित्त।

(१३) मंडलो-आहार करते समय उनका वस्त्र-पात्रोंके नीचे बीछाया जाते है. जिनसे आहार कोसी धरतीपर न गीरे. जीवरक्षाके निमित्त रखते है।

(१४) संस्तारक—उनका २॥ हाथ लम्बा रात्रीमें संस्तारा -शयन समय विछाया जाता है।

कंचुवो और उंघीयो यह साध्वीयोंको शीलरक्षा निमित्त रखा जाते है, इन सिवाय उपग्रहा ही उपगरण जो कि—

ज्ञाननिमित्त—पुस्तक पाने कागज कलम सहि आदि।

दर्शननिमित्त—स्थापनाचार्य स्मरणका आदि।

चारित्रनिमित्त—दंडासन तृपणी लुणा गरणा आदि।

(१) द्रव्यसे इन उपगरणोंको यत्नासे ग्रहन करे, यत्नासे रखे, यत्नासे काममें ले-वापरे-भोगवे।

(२) क्षेत्रसे सब उपकरण यथायोग योग्यस्थानकपर रखे न कि इधर उधर रखे सो भी यत्नापूर्वक।

(३) कालोकाल प्रतिलेखन करे. प्रतिलेखन २५ प्रकारकी है जिसमें बारह प्रकारकी प्रशस्त प्रतिलेखन है।

१ प्रतिलेखन समय वस्त्रको धरतीसे उंचा रखे।

२ प्रतिलेखन समय वस्त्रको मजबुत पकडे।

३ उतावला-आतुरतासे प्रतिलेखन न करे।

४ वस्त्रके आदि अन्त तक प्रतिलेखन करे।

इन च्यार प्रकारकी प्रतिलेखनको दृष्टिप्रतिलेखन कहते है।

५ वस्त्रपर जीव चढ गया हो तो उसे थोडासा खंखेरे।

६ खंखेरनेसे न निकले तो रजोहरणसे पुंजे।

७ वस्त्र या शरीरको हीलावे नहीं।

८ वस्त्रके शल पड जानेपर मसले नही भट न देवे।

९ स्वल्प भी वस्त्र विगर प्रतिलेखन कीया न रखे।

१० ऊंचा नीचा तीरछा भिन विगेरेके अटकावे नहीं।

११ प्रतिलेखन करते जीवादि दृष्टिगोचर हो तो यत्नापूर्वक परठे।

१२ वस्त्रादिको झटका पटका न करे।

इनको प्रशस्त प्रतिलेखन कहते है अन्य अप्रशस्त कहते है, जलदी जलदी करे. वस्त्रको मसले उंचा नीचा अटकावे, भींत जमीनका साहारा लेवे, वस्त्रको झटकावे, वस्त्र इधर उधर तथा प्रतिलेखन किया हुवा-विगर किया हुवा सामिल रखे, वेदिका ठीक न करे याने एक गोडेपर दोनों हाथ रख प्रतिलेखन करे, दोनों हाथ गोडोंसे निचे रखे. दोनों हाथ गोडोंसे उंचे रखे, दोनों हाथ गोडोंके भीतर रखे. एक हाथ गोडोंके अन्दर एक बहार यह पांच वेदिक दोष है दोनों हाथ गोडोंसे कुच्छ उंचा रखना शुद्ध है वस्त्रको अति मजबुत पकडे, वस्त्रको बहुत लम्बा करे. वस्त्र जमीनसे रगडे एक ही वख्तमें संपूर्ण वस्त्रको प्रतिलेखन करे शरीर वस्त्रको वारवार हलावे. पांच प्रकारके प्रमाद करता-हुवा प्रतिलेखन करे. इन वाराह प्रकारकी प्रतिलेखनको अप्रशस्त कहते है. एवं २४ प्रतिलेखन करतां शंका पडनेसे

भीजती करे, उपयोगशुन्य हो एवं २५ प्रकारकी प्रतिलेखन हुइ इसको न्युन भी न करे, अधिक भी न करे, विपरीत न करे, जिसके विकल्प आठ है।

नं.	ज्यादा.	कम.	विपरीत.	नं.	ज्यादा.	कम.	विपरीत.
१	नकरे	नकरे	नकरे	५	करे	नकरे	नकरे
२	नकरे	नकरे	करे	६	करे	नकरे	करे
३	नकरे	करे	नकरे	७	करे	करे	नकरे
४	नकरे	करे	करे	८	करे	करे	करे

इन आठ भांगासे प्रथम भांगा विशुद्ध है, सात भांगा अशुद्ध है प्रतिलेखन करते समय परस्पर बातें न करे, च्यार प्रकारकी विकथा न करे प्रत्याख्यान न करे न करावे, आलापना देना, आगमवाचना देना. यह पांच कार्य न करे अगर करे तो छे कायाके विराधक होते है।

(४) भाषाके भेद उपयोगादि सम्यग्भाव रहित भाषाके, संयमके साधन-कारण समझे।

(५) परिष्ठापनिका समितिके च्यार भेद है. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव जिसमें द्रव्यसे मल, मूत्र श्लेष्मादि वहीं परठे. कारण अगर आहार निहार करनेसे मुनि दुर्लभबोधि होता है।

(१) कोइ आय नहीं हो नहीं वहां जाकर परठे।
(२) जाना आवीना नजदीक हो यान न हो वहां परठे।
(३ विषम भूमि हो वहांपर न परठे
(४) पोली भूमि हो वहां न परठे कारण जिस जीवादि.
(५) सचित्तभूमिका हो वहां न परठे। [होना चाहे।

(६) विशाल लम्बी चौडी हो वहां जाके परठे।
(७) स्वल्प कालकि अचित भूमि हो वहां न परठे।
(८) नगर ग्रामके नजदीकमें न परठावे।
(९) मूषादिके बील हो वहांपर न परठे।
(१०) जहां निलण फूलण त्रस प्राणी हो वहां न परठे।

इन दशों स्थानोंका विकल्प १०२४ होते है जिस्मे १०२३ विकल्प तो अशुद्ध है मात्र १ भांगा विशुद्ध है जहांतक बने वहां तक विशुद्धिकि खप करना चाहिये।

(२) क्षेत्रसे मुनियोंको मल मात्र जंगल नगरसे दुर जाना चाहिये जहां गृहस्थ लोग जाते हो वहां नही जाना चाहिये. नगरके बाहार ठेरे होतो नगरमे तथा नगरके अन्दर ठेरे होतो गृहस्थोंके घरमें जाके नहीं परठे।

(३) कालसे कालोकाल भूमिकाको प्रतिलेखन करे।

(४) भावसे पुंजी प्रतिलेखी भूमिकापर टटी पैशाब करते समय पहिले आवस्सही तीन दफे कहे 'अणुजाणह जस्सग्गो' आहालेके परठनेके बाद 'वोसिरामि' तीन दफे कहे पीछा आति वख्त 'निस्सिही' शब्द कहे स्थानपर आके इर्यावहि याने आलोचना करे इति समिति.

(१) मनोगुप्तिका चार भेद. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे मनको सावद्य - सारंभ समारंभ आरंभमें न प्रवर्तावे. क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमें. कालसे जाव ज्जीवतक. भावसे मन आर्त रौद्र विषय कषायमें न प्रवर्तावे.

(२) वचनगुप्तिका चार भेद. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे चार प्रकारकी विकथा न करे. क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमें. कालसे जाव जीवतक. भावसे राग द्वेष विषयमें वचन न प्रवर्तावे सावद्य न बोले.

(३) कायगुप्तिका च्यार भेद. द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव द्रव्यसे खाजखुने नहीं. मैल उतारे नहीं. शुक थूके नहीं. आदि शरीरकी शुश्रुषा न करे. क्षेत्रमें सर्वत्र लोकमें. कालसे जावजीव तक. भावसे कायाको सावद्ययोगमें न प्रवर्तावे. इति तीन गुप्ति

सेवं भंते सेवं भंते—तमेवसच्चम्.

—※◎※—

थोकडा नम्बर ३३

(३६ बोलोंका संग्रह)

१) असंयम, यह संग्रह नयका मत है।

२) बन्ध दो प्रकारका है (१) रागबन्धन (२) द्वेषबन्धन।

(३) दंड ३ मनदंड, वचनदंड, कायदंड. ३ गुप्ति—मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति. ३ शल्य—मायाशल्य, नियाणाशल्य, मिथ्याशल्य. ३ गार्व—ऋद्धिगार्व, रसगार्व सातागार्व ३ विराधना—ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना, और चारित्र विराधना.

(४) च्यार कषाय—क्रोध, मान, माया, लोभ. ४ विकथा—स्त्रीकथा राजकथा, देशकथा, भक्तकथा. ४ संज्ञा—आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा परिग्रहसंज्ञा. ४ ध्यान—आर्तध्यान, रौद्रध्यान धर्मध्यान शुक्लध्यान.

(५) पांच क्रिया—काइया, अधिगरणिया, पाउसिया, परितापणिया पाणाइवाइया. पांच कामगुन—शब्द रूप, गन्ध रस स्पर्श. ५ समिति—इर्यासमिति, भाषासमिति एषणासमिति आदान भंडमत निक्षेपनासमिति उच्चार पासवण खेल जल्ल सिंघाण परिठावणिया समिति। ५ महाव्रत सर्वथा

पाणाईवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मृषाओ वायाओ वेरमण, सव्वाओ अदीन्नादानाओ वेरमणं, सव्वाओ मेहुआणो वेरमणं, सव्वाओ परिग्गाहो वेरमणं।

(६) छे काय—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय। छ लेश्या—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजसलेश्या पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या।

(७) सात भय—आलोक भय, परलोक भय, आदान भय, अकश्मात भय, मरण भय अपयश भय, आजीवका भय।

(८) आठ मद—जातीमद, कुलमद, बलमद, रूपमद, तप मद, सूत्रमद, लाभमद, ऐश्वर्यमद।

(९) नौ ब्रह्मचर्यगुप्ति—स्त्री पशु नपुंसक सहीत उपाश्रयमें न रहे। यथा बिल्ली और मूषकका दृष्टांत १ स्त्रियोंकी कथा वारता न करे। यथा नीबूकी खटाईका दृष्टांत २ स्त्री जिस आसनपर बैठी हो उस आसनपर दो घडीसे पहिले न बठे। अगर बैठे तो तपी हुई जमीन पर टसे हुये घृतका दृष्टांत। ३ स्त्रीके अंगोपांग इन्द्रिय वगैरह न देखे। जैसे कच्ची आंख और सूर्यका दृष्टांत। ४ विषयभोगादि शब्दोंको भीत नाटा कनात आदिके अन्तरसेभी न सुने। यथा गर्जारव समय मयूरका दृष्टांत। ५ पूर्व (गृहस्थाश्रम) के कामभोगकी याद न करे। इसपर पंथिक और डाकूके छासका दृष्टांत। ६ प्रतिदिन सरस आहार न करे। अगर करे तो सन्निपातका रोगमें दूध मिश्रीका दृष्टांत। ७ प्रमाणसे अधिक आहार न करे। जैसे सेरकी हंडीमें सवासेर पकाना (रा धना) का दृष्टांत ८ शरीरकी शुश्रुषा विभूषा न करे। अगर करे तो काजलकी कोठरीमें सफेद कपडेका दृष्टांत ९

१० दश यति धर्म खंते क्षमा करना मुत्ते। निर्लो भता अज्जवे सरलता मद्दवे मदरहित। लाघवे हल्का

समोसरण० यथास्थित० ग्रन्थ अध्ययन० यमतिथि अध्ययन० गहा अध्ययन०

(१७) सतरह प्रकारे संयम—पृथ्विकायसंयम. अप्पकाय० तेउकाय० वायुकाय० वनस्पतिकाय० बेइन्द्री० तेइन्द्री० चौरिंद्री० पंचेन्द्री० अजीव० प्रेक्षा० (जयणापूर्वक वर्ते बहुमूल्य वस्तु न वापरे) उपेक्षा० (आरंभ तथा उत्सूत्रादि न प्ररूपे) पुंजणप्रतिलेखन० परठावणीय० मन० वचन० काय०

(१८) ब्रह्मचर्य १८ प्रकार—औदारिक शरीर संबंधी मैथुन (न सेवे) न करे न दूसरेसे करावे और न करतेको अच्छा समजे मनसे, वचनसे, कायासे यह नौ भेद औदारिक से हुवे ऐसे ही नौ वैक्रियसे भी समज लेना एवम् १८

(१९) ज्ञातासूत्रका अध्ययन १९ मेघकुमार, धनासार्थवाह, मोरडीकाईडा, कूर्म-काच्छप, शैलकराजऋषीश्वर, तूंबडीके लेप का, रोहिणीजीका, मल्लीनाथजीका, जिनऋषीजिनपालका, चन्द्र-माकीकलाका दवद्रवावृक्षका जयशत्रु राजा और सुबुद्धि प्रधान का नन्दनमणीयारका, तेतलीप्रधान पोटलासोनारीका, नदीफल वृक्षका, महामनी द्रौपदीका, कालोद्वीपके अश्वोंका, सुसमा बाल-काका पुंडरीकजीका.

(२०) असमाधीस्थान—वीस बोलोंको सेवन करनेसे सं-यम असमाधी होते है। धमधम करते चले, बिना पूंजे चले, कहीं पुंजे और कहीं चले, मर्यादासे उपरान्त पाट पाटलादिक भोगवे, आचार्योपाध्यायका अवर्णवाद बोले, स्थिवरकी घात चिंतवे, प्रभूतकी घात चिंतवे, प्रतिक्षण क्रोध करे, परोक्षे अव-गुणवाद बोले, शंकाकारी भाषाको निश्चयकारी बोले, नया क्रोध करे, उपशमे हुवे क्रोधको फीर उत्पन्न करे, अकालमें सज्झाय करे, सचित रजयुक्तपांवसे आसनपर बैठे पेहररात्री पीछे दिन निक-

है और दूसरे श्रुत स्कंधके सात अध्ययन—पुण्डरीकाध्ययन॰ क्रियास्थान॰ आहारपरिज्ञा॰ अनाचारश्रुत॰ प्रत्याख्यान॰ आर्द्रकुमारका॰ उदक पेढालपुत्रका॰ एवं २३

२४) चौवीस तीर्थंकर—ऋषभदेवजी, अजीत संभव अभिनंदन, सुमती पद्मप्रभु, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभु, सुविधि, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य विमल अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि पार्श्व वर्धमान; एवं २४ तथा देवता-दश भुवनपति, आठ वाणव्यंतर पांच ज्योतिषि, एक वैमानिक, एवं २४ देव।

२५ पांच महाव्रतकी पचवीस भावना (संयमकी पुष्टी) यथा पहिले महाव्रतकी पांच भावना—ईर्याभावना मनभावना, भाषाभावना भंडोपकरण यत्नापूर्वक लेने रखनेकि भावना, आहारपाणीकी शुद्ध गवेषणा करना भावना ॥ दूसरे महाव्रतकी पांच भावना—द्रव्य क्षेत्र, काल, भाव देखकर विचार पूर्वक बोले, क्रोधके वश न बोले, क्षमा करे, लोभवश न बोले, सन्तोष रखे, भयवश न बोले, धैर्य रखे, हास्यवश न बोले, मौन रखे, तीसरे महाव्रतकी पांच भावना—विचार कर अविग्रह मकानादिकी आज्ञा ले, आहारपाणी आचार्यादिककी आज्ञा लेकर भोगवें, आज्ञा लेनां शय्यासंथारादिककी आज्ञा ले, साधर्मीका भंडोपकरण भोगवे तो रजा लेकर भोगवे, ग्लानी आदिक की वैयावच्च करे, चौथे महाव्रतकी पांच भावना—वारंवार स्त्रीके शृंगारादिककी कथा वार्ता न करे, स्त्रीके मनोहर इन्द्रियों को न देखे, पूर्वमें किये हुवे काम क्रीडाओंको याद न करे, प्रमाण उपरान्त आहारपाणी न भोगवे, स्त्रीपुरुष नपुंसकवाले मकानमें न रहे, पांचवे महाव्रतकी पांच भावना—विषयकारी शब्द न

सुने, विषयकारीरुप न देखे, विषयकारी गन्ध न ले, विषयकारी रस न भोगवे, विषयकारी स्पर्श न करे.

(२६) दशाश्रुतस्कंधका दश अध्ययन, व्यवहारसूत्रका दशअध्ययन, बृहत्कल्पका छे अध्ययन, कुल मिलाकर २६ अध्ययन हुवे.

(२७) मुनिके गुण सत्तावीस—पांच महाव्रत पाले, पांच इन्द्रिय दमे, चार कषाय जीते, मनसमाधी, वचनसमाधी, कायसमाधी, नाणसंपन्ना दर्शनसंपन्ना, चारित्रसंपन्ना, भावसच्चे, करणसच्चे, योगसच्चे, क्षमावंत, वैराग्यवंत, वेदनासहे, मरणका भय नही, जीनेकि आशा नहीं.

(२८) आचारांग कल्पका २८ अध्ययन—आचारांग प्रथम श्रुतस्कंधका नौ अध्ययन—शस्त्रप्रज्ञा, लोकविजय, शीतोष्ण, समकितसार, लोकसार, धुत्ता, विमुखा, उपधान, महाप्रज्ञा ॥ दूसरे श्रुतस्कंधका १६ अध्ययन—पंडेषणा, सज्झाएषणा, इर्यापणा, भाषाएषणा वस्त्रेषणा, पात्रेषणा, उग्गपडिमा, उच्चारशतकीया, ठाणशतकीया, निसिह्शतकीया, शब्दशतकीया, रुपशतकीया, अन्योन्यशतकीया, परक्रीयाशतकीया, भावना अध्ययन, विमुक्ति अध्ययन ॥ निशियसूत्रके तीन अध्ययन—उग्घाया (गुरु प्रायश्चित्) अनुग्घाया (लघु प्रायश्चित्) आरोपण (प्रायश्चित देनेकी विधि

पापसूत्र—भूमिकंप, उप्पाय, (आकाशमें उत्पातादिक) सुपन (स्वप्ना) अंगे (अग स्फुरण) स्वर (चन्द्रसूर्यादिक) अंतरिक्खे (आकाशादिम चिन्ह) व्यंजन (तिलमसादि) लख्खण (हस्तादिकी रेखा वगेरे) ये आठ सूत्रसे, आठ वृत्तिसे और आठ सूत्रवृत्ति दोनोसे एवम् चोवीस, विकाणुयोग, विज्ञाणुयोग, मंत्राणुयोग, योगाणुयोग, अणतिस्थीय पवत्ताणुयोग २९ ॥

उपरोक्त तीस बोलोंमें से कोई भी बोलका सेवन करनेवाला ७० कोडाकोडी सागरोपम स्थितिका महा मोहनियकर्म बांधे.

(३१) सिद्धोंके गुण ३१ ज्ञानावर्णिय कर्मके पांच प्रकृति क्षय करे यथा—मतिज्ञानावर्णिय, श्रुतज्ञा० अवधिज्ञा० मनःपर्यव ज्ञा० केवलज्ञानावर्णिय० दर्शनावर्णियकर्मकी नौ प्रकृति क्षय करे यथा—चक्षुदर्शणावर्णिय, अचक्षुद० अवधिद० केवलद० निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, थीणद्धी, वेदनिकर्मकी दो प्रकृति क्षय करे—शाता वेदनिय, अशाता वेदनिय, मोहनियकर्मकी दो प्रकृति—दर्शनमोहनी, चारित्रमोहनी आयुष्यकर्मकी चार प्रकृति—नारकी तिर्यच मनुष्य, देवताका आयुष्य० नामकर्मकी दो प्रकृति—शुभनाम अशुभनाम, गोत्र-कर्मकी २ प्रकृति—उच्चगोत्र, निचगोत्र और अंतरायकर्मकी पांच प्रकृति—दानांतराय लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, विर्यांतराय एवं ३१ प्रकृति क्षय होनेसे ३१ गुण प्रगट हुवे है.

(३२) योगसंग्रह—मोक्षके लिये आलोचना देनी, आलोचन देनेवाले सिवाय दूसरेको न कहना, आपत्तीकालमें भी दृढता धारण करनी, किसीकी सहायता विना उपधानादि तप करना, गृहण आसेवना शिक्षा धारणकरनी, शरीरकी सालसंभाल न करनी, गुप्त तपस्या करनी निर्लोभ रहना, परिषह सहन करना, सरल भाव रखना, सत्यभाव रखना, सम्यक्दर्शन शुद्ध० चित्त स्थिरता० निष्कपटता० अभिमान रहित० धैर्यता० संवेग० माया-शल्य रहित० शुद्धक्रिया० संवरभाव० आत्मनिर्दोष० विषय रहित० मूलगुण धारणा० उत्तरगुण धारणा० द्रव्यभावसे पापको वोसिरे २ कहना० अप्रमाद कालोकाल क्रियाकरनी० ध्यानस-माधि धरना. मरणांत कष्ट सहन करना प्रतिज्ञा दृढता० प्राय श्चित लेना० समाधासे संथारा करना०

(३३) गुरुकी तैतीस आशातना—गुरुके आगे शिष्य चले तो आशातना. गुरुकी बराबर चलेतो० गुरुके पीछे स्पर्श करता चलेतो० एवम् तीन, बैठते समय और तीन खडे रहते समय तीन एवं नौ प्रकारसे गुरुकी आशातना होती है गुरुशिष्य एकसाथ स्थंडिल जावे और एक पात्रमें पानी होतो गुरुसे शिष्य पहिले शुचि करे तो. स्थंडिलसे आकर गुरुसे पहिले इरियावही पडिकमेतो० विदेशसे आयेहुवे श्रावकके साथ गुरुसे पहिले शिष्य वार्तालाप करेतो० गुरु कहे कौन सूते है और कौन जागते है. तो जागताहुवा शिष्य न बोलेतो० शिष्य गौचरी लाकर गुरुसे आलोचना न ले और छोटेके पास आलोचना करेतो० पहिले छोटेको आहार बताकर फिर गुरुको आहार बतावेतो० पहले छोटे साधुको आमंत्रण करके फिर गुरुको आमंत्रण करेतो० गुरुसे विना पुछे दुसरोंको मनमान्य आहार देतो० गुरुशिष्य एक पात्रमें आहार करे और उसमेंसे शिष्य अच्छा २ आहार करेतो० गुरुके बोलानेपर पीछा उत्तर न देतो० गुरुके बुलानेपर शिष्य आसनपर बैठाहुवा उत्तर देतो० गुरुके बुलानेपर शिष्य कहे क्या कहते हो ऐसा बोलेतो० गुरु कहे यह काम मतकरो शिष्य जबाब दे कि तू कौन कहनेवालातो० गुरु कहे इन ग्लानीकी वैयावच करो तो बहोत लाभ होगा इसपर जबाब दे क्या आपको लाभ नहीं चाहिये ऐसा बोलेतो० गुरुको तुंकारा तुंकारा दे लापरवाईसे बोले) तो० गुरुका ज्ञातादोष कहेतो० गुरु धर्मकथा करे और शिष्य अप्रसन्न होवेतो० गुरु धर्मदेशना देताहो उसवक्त शिष्य कहे यह शब्द ऐसा नहीं ऐसा है तो० गुरु धर्मकथा कहे उस परिषदामें छेदभेद करेतो० जो कथा गुरु परिषदामें कहीहो उसी कथाको उसीपरिषदामें शिष्य अच्छीतरहसे वर्णन करेतो० गुरु धर्मकथा कहतेहो और शिष्य कहे गोचरीकी वखत होगई

कहांतक व्याख्यान होगे तो० गुरुके आसनपर शिष्य बैठे तो० गुरुके पाद या बिछौनेको टोकर लगाकर क्षमा न मांगेतो० गुरुसे ऊंचे आसनपर बैठे तो० यह तैतीस आशातना अगर शिष्य करेंगे तो वह गुरु आज्ञाका विराधि हो संसारमें परिभ्रमन करेंगे।

(३४) तीर्थंकरोंके चौतीस अतिसय--तीर्थंकरके केश, नख न बधे सुशोभित रहे० शरीर निरोग० लोहीमांस गोक्षीरजैसा० श्वासोश्वास पद्म कमलजैसा सुगन्धी, आहार निहार चर्मचक्षु-वाला न देखे० आकाशमें धर्मचक्र चले० आकाशमें तीन छत्र धारण रहे० दो चामर वींजायमान रहे० आकाशमें पादपीठ सहित सिंहासन चले० आकाशमें इन्द्रध्वज चले० अशोकवृक्ष रहे० भामंडल होवे० भूमीतल सम होवे० कांटा अधोमुख होवे० छहो ऋतु अनुकुल होवे० अनुकूल वायु चले० पांच वर्णके पुष्प प्रगट होवे० अशुभ पुद्गलका नाश होवे० सुगंधवर्षासे भूमी स्वच्छ होवे० शुभ पुद्गल प्रगटे० योजनगामिना ध्वनी होवे० अर्ध मागधी-भाषामें देशना दे० सर्व सभा अपनी २ भाषामें समझे० जन्मवैर, जातीवैर शांतहो० अन्य मतावलंबी भी आकर धर्म सुने और विनय करे० प्रतिवादी निरूत्तर होवे० पचीस योजनसुधी कोई किस्मका रोग उपद्रव न होवे० मरकी न होवे० स्वचक्रका भय न होवे० परचक्रका भय न होवे० अतिवृष्टि न होवे० अना-वृष्टि नहो० दुकाल न पडे० पहिले हुवा उपद्रव भी शांत होवे० इन अतिशयोंमें ४ अतिशय जन्मसे होते है. ११ अतिशय केव-लज्ञान होनेसे होते है और १९ अतिशय देवकृत होते है.

(३५) वचनातिशय पैंतीस--संस्कारवचन, उदात्त गंभीर० अनुनादी० दाक्षिण्यता० उपनीतराग० महा अर्थगर्भित० पूर्वापर अविरुद्ध० शिष्ट० संदेह रहित० योग्य उत्तरगर्भित० हृदयग्राही०

देशकालानुकूल॰ तत्त्वानुरूप॰ प्रस्तुत व्याख्या॰ परस्पर सबि-
द्ध॰ अभिजात॰ अति स्निग्ध॰ मधुर॰ अन्य मर्मरहित॰ अर्थ
धर्मयुक्त॰ उदार॰ परनिंदा स्वश्लाघा रहित॰ उपगतश्लाघा॰
अनपनीत॰ कुतूहल रहित॰ अद्भुत स्वरूप॰ विलंब रहित॰
विभ्रमादि दोष रहित विचित्रवचन॰ आहित विशेष॰ साकार
विशेष॰ सत्त्व विशेष॰ खेद रहित॰ अव्युच्छेद॰

(३६ उत्तराध्ययनसूत्रके ३६ अध्ययन—विनय॰ परिसह॰ चउरंगिय॰ असंखय॰ अकाम सकाम मरण॰ खुड्डागनियंठि॰ एलय॰ काविल॰ नमिपवज्जा॰ दुमपत्तय॰ बहुस्सुय॰ हरिएस-बल॰ चित्तसंभूइ॰ उसुयार॰ भिक्खु॰ बंभचेरसमाहि॰ पाव-समण॰ संजइज्ज॰ मियापुत्ती॰ महानियंठी॰ समुद्दपालिय॰ रहनेमी॰ केसीगोयम॰ पवयणमाया॰ जयघोस विजयघोस॰ सामाचारी॰ खलुंकि॰ मुक्खमग्गइ॰ समत्त परिक्कमिय॰ तवमग्ग॰ चरणविहि॰ पमायट्ठाण॰ कम्मपयडी॰ लेस॰ अणगारमग्ग॰ जीव अजीव विभत्ती॰ इति।

सेवंभंते सेवंभंते—तमेवसच्चम्

—✻✻✻—

थोकड़ा नम्बर ३८.

श्री भगवतीसूत्र श॰ २५ उ॰ ६

(नियण्ठोंके ३६ द्वार)

पन्नवणा—परूपणा १ वेद—वेद २ राग—सरागी ३ कल्प—कल्प ४ चारित्र—सामायिकादि ५ पडिसेवन—दोष लगावे कहाँ ६

ज्ञान-मत्यादि ५, तित्थे-तीर्थमें होवे २, लिंग-स्वलिंगादि शरार-औदारिकादि, खित्ते-किसक्षेत्रमें, काले-किसकालमें, गतीं-किस गतीमें संयम-संयमस्थान निकासे-चारित्रपर्याय योग-सयोगी अयोगी उपयोग-साकार बहुता २ कषाय-सकषाय २ लेशा-कृष्णादि ६ परिणाम-हियमानादि ३ बंध-कर्मका वेदय-कर्मवेदे. उदीरणा-कर्मकी, उवसंपझाण-कहांजावे सन्ना-सन्नाबहुता, आहार-आहारी २ भव-कितना भव करे आगरेस कितने वरुत आवे काल-स्थिती अंतरा समुद्घात-वेदना ७ क्षेत्र-कितने क्षेत्रमें होवे फुसणा-किताक्षेत्रस्पर्शे भाव-उदयादि ५ परिणाम-कितनालाधे अल्पाबहुत्व इति ३६ द्वार।

(१) पन्नवणा-नियंठा (साधु) छे प्रकारके हैं

(१) पुलाक-दो प्रकारके है। (१) लब्धी पुलाक जैसे चक्रवर्ती आदि कोई जैनमुनी या शासनकी आशातना करे तो उसकी सेना वगेरहको चकचूर करनेके लिये लब्धीका प्रयोग करे (२) चारित्र पुलाक—जिसके पांच भेद ज्ञानपुलाक, दर्शन पुलाक, चारित्रपुलाक, लिंगपुलाक, (विना कारण लिंग पलटाये) अहसुहम्मपुलाक, (मनसेभी अकल्पनीय वस्तु भोगनेकी इच्छा करे। जेसे चावलोंकि सालीका पुला जिस्में सार वस्तु कम और मटी कचरा ज्यादा।

(२) बकुश-के पांच भेद है। आभोग (जानता हुवा दोष लगाये) अणाभोग, (विनाजाने दोष लगे) संवुडा, (प्रगट दोष लगाये) असंवुडा (छाने दोष लगाये) अहासुहम्म, (हस्त मुख धोये या आंखे आंजे) जेसे शालका गाइटा जिस्मे खला करनेसे कुच्छ मट्टी कम हुइ है।

(३) पडिसेवना—५ भेद-ज्ञान, दर्शन, चारित्र में अतिचार लगावे। लिंगपलटावे, आहासुहम, तप करके देवताकी

पदवी बांन्धे। जैसे शालीके गाइटाको उपन-वायुसे बारी
झीणे कचरेको उडा दीया परन्तु बडे बडे डांखले रह गये।

(४) कषायकुशील-५ भेद-ज्ञान, दर्शन, चारित्रमें कषा…
करे. कषायकरके लिंग पलटाये. अहासुहम. (तप करी कषा…
करे) कचरा रहित शाली।

(५) निग्रंथ-५ भेद-प्रथम समय निग्रंथ, (इग्यारमें गुन-
स्थानकसे, इग्यारवें गु० बारहवें गु० वाले प्रथम समयवर्ते)
अप्रथम समय (दो समयमें ज्यादा हो) चर्मसमय, जिसको १
समयका छद्मस्थपना शेष रहा हो) अचर्मसमय, (जिसको दो
समयसे ज्यादा बाकी हो) अहासुहम. (सामान्य प्रकारे वर्ते)
शालीको दल छातु निकालके चावल निकाले हुवे।

(६) स्नातक-५ भेद-अच्छवी, (योगनिरोध) असबले,
(अतिचारादि सबला दोष रहित) अकर्म्मे (घातीकर्म रहित)
संशुद्ध ज्ञानदर्शन धारी केवली अपरिस्सावी, (अबंधक)
ज्ञान दर्शनधारी अरिहंत जिन केवलीजैसे निर्मल असंडित सुग-
न्धी चावलोंकी माफीक।

ऐसे छे प्रकारके साधु कहे हैं. इनकी परस्पर शुद्धता
शालीका दृष्टांत देकर समझाते हैं। जैसे मट्टी सहित उखाडी
हुई शालाकापूला जिसमें सार कम और असार ज्यादा. वैसेही
पुलाकसाधुमें चारित्रकी अपेक्षा सारकम और अतिचारकी अ-
पेक्षा असार ज्यादा है दूसरा शालका गाईटा (खला) पहलेसे इसमें
सार ज्यादा है. क्योंकि पूलेमें जो रेतीथी वह निकल गई वैसेही
पुलाकसे बकुशमें सार ज्यादा है. तीसरा उडाई हुई शाली, जो
बारीक कचराथा वह हवासे उड गया. वैसेही बकुशसे पडिसे-

वनमें मार आता है. चौथा मरे कचरा निकाली हुई शाली के समान कषाय कुशील है. पांचवा शालीसे निकालाहुवा चावल इसके समान निर्ग्रंथ है. छठा साफ किया हुवा अखंड चावल जिसमें किसी किस्मका कचरा नहीं ऐसे स्नातक साधु है. द्वारम्.

(२) वेद –पुरुष, स्त्री, नपुंसक, अवेदी० जिस्मे पुलाक, पुरुष वेदी और-पुरुष नपुंसकवेदी होते है, बकुश, पु० स्त्री० न० वेदी होते है ऐसेही पडिसेवनमें तीनो वेद कषायकुशील सवेदी और अवेदी सवेदी होतो तीनोवेद अवेदी होतो उपशान्त अवेदी या क्षीण अवेदी निर्ग्रंथ उपशान्त अवेदी और क्षीण अवेदी होते है और स्नातक क्षीणअवेदी होते है. द्वारम्.

(३) रागी-सरागी वीतराग-पुलाक, बकुश, पडिसेवना कषाय कुशील एवं ४ नियंठा सरागी होते है निर्ग्रंथ उपशान्त वीतरागी और क्षीण वीतरागी होते है. स्नातक क्षीण वीतरागी होते है द्वारम.

(४) कल्प ५-स्थितकल्प, अस्थितकल्प, स्थिवरकल्प, जिनकल्प, कल्पातीत.-कल्प दश प्रकारके है, १ अचेल, २ उद्देशी ३ रायपिंड ४ सेज्यातर ५ मासकल्प, ६ चौमासीकल्प, ७ व्रत, ८ पडिक्कमण, ९ किर्तिकर्म १० पुरुषाजेष्ट, यह दशकल्प पहिले और छेल्ले तीर्थंकरोंके साधुवोंके स्थितकल्प होता है. शेष २२ तीर्थंकरोंके शासनमें अस्थितकल्प है उपर जो १० कल्प कहाये है उसमें ६ अस्थितकल्प है १-२-३-५-६-८ और चार स्थितकल्प है ४-७-९-१० (३) स्थिवरकल्प मर्यादादि शास्त्रोक्त रखे. (४) जिनकल्प जघन्य २ उत्कृष्ट १२ उपगरण रखे (५) कल्पातित केवलज्ञानी, मनः पर्यवज्ञानी अवधिज्ञानी,

चौदे पूर्वधर यहा पूर्वधर. श्रुतकेवली. और जातिस्मरणादि-
ज्ञानी पुलाक-स्थितीकल्पी. अस्थितीकल्पी स्थिवरकल्पी होते
है. बकुश पडिसेवना पूर्ववत् तीन और जिनकल्प भी होवे.
कषायकुशील पूर्ववत् चार और कल्पातीतमें भी होवे. निर्ग्रंथ.
स्नातक-स्थित: अस्थित: और कल्पातीतमें होवे. द्वारम्.

(५) चारित्र ५ सामायिक. छेदोपस्थापनिय. परिहारवि-
शुद्धि. सुक्ष्मसंपराय यथाख्यात —पुलाक. बकुश. पडिसेवनामें
समायिक छेदो० चारित्र होता है. कषायकुशीलमें सामा० छेदो०
परि० सूक्ष्म० चारित्र होते है. और निर्ग्रंथ. स्नातकमें यथाख्यात
चारित्र होता है. द्वारम्

(६) पडिसेवना २ मूलगुणप० उत्तरगुणप० पुलाक. पडिसे-
वनी मूलगुणमें पंचमहाव्रत और उत्तरगुणमें पिन्डविशु-
द्धादि दोनों लगावे बुकश मूलगुणअपडिसेवी उत्तरगुणपडिसेवी
बाकी तीन नियंठा अपडिसेवी द्वारम्

(७) ज्ञान ५ मत्यादि पुलाक. बकुश पडिसेवनामें दो-
ज्ञान मति श्रुति ज्ञान और तीन हो तो मति. श्रुति. अवधि. क-
षायकुशील. और निर्ग्रंथमें ज्ञान दो तीन चार पावे. दो हो तो
मति श्रुति तीनहो तो मति श्रुति अवधि या मनःपर्यव० चार हो
तो मति. श्रुति अवधि और मनःपर्यव स्नातकमें एक केवलज्ञान
ज्ञान पढनेआश्री पुलाक जघन्य नौ ९ पूर्वन्युन उत्कृष्ट नौ (९)
सम्पूर्ण. बकुश पडिसेवन जघन्य अष्टप्रवचनमाता उ० दश-
कषायकुशील ज० अष्टप्रवचनमाता उ० १४ पूर्व. निर्ग्रंथ भी
और ज० उ० १४ पूर्व एक स्नातकसूत्र विनिरिक्त. द्वारम्.

(८) तीर्थ-पुलाक बकुश. पडिसेवन तीर्थमें होवे शेष

तीन नियंठा तीर्थमें और अतीर्थमें भी होते है. तीर्थकर हो और प्रत्येक बुद्धि हो. द्वारम्.

(९) लिंग–छेहो नियंठा (साधु) द्रव्य लिंग आश्री स्वलिंग, अन्यलिंग, गृहलिंग तीनोंमें होवे. और भावलिंग आश्री स्वलिंगमें होते है. द्वारम्.

(१०) शरीर—५ औदारिक वैक्रिय, आहारक, तेजस, कार्मण, पुलाक. निग्रंथ, स्नातकमें औ० ते० का० तीन शरीर. बकुश, पडिसेवणमें औ० ते० का० वै० और कषायकुशीलमें पांचों शरीरवाले मिलते है. द्वारम्।

(११) क्षेत्र २ कर्मभूमी, अकर्मभूमी–छे हो नियंठा जन्मआश्री १५ कर्मभूमीमें होवे और संहरणआश्री पुलाकको छोडके शेष ५ नियंठा कर्मभूमी, अकर्मभूमी, दोनोंमें होते है. प्रसंगोपात पुलाक लब्धि आहारिक शरीर, सध्वीका, अप्रमादी, उपशम श्रेणीवालेका, क्षपकश्रेणी०, केवलज्ञान उत्पन्न हुवे पीछे, इन सातोंका संहरण नहीं होता द्वारम्.

१२) काल—पुलाक, उत्सर्पिणीकालमें जन्मआश्री तीजे, चौथे आरामें जन्मे और प्रवर्तनाश्री ३-४-५ आरामें प्रवर्ते. अवसर्पिणीकालमें दूजे, तीजे चौथे आरामें जन्मे और तीजे, चौथे आरामें प्रवर्ते नो उत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी चौथे पल्ली भाग (दुषमासुषमा काल महाविदेह क्षेत्रमें) होवे और प्रवर्ते एसेही निग्रंथ स्नातकमें समझलेना पुलाकका संहरण नहीं. और निग्रंथ स्नातक संहरणआश्री दुसरे कालमें भी होते है और बकुश, पडिसेवण, कषायकुशील, अवसर्पिणीकालके ३-४-५ आरेमें जन्मे और प्रवर्ते.उत्सर्पिणीकालमें २-३-४ आरेमें जन्मे और ३ ४ आरेमें प्रवर्ते. नो उत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी. चौथा पल्ली भागमें होवे और संहरणआश्री दुसरे पल्ली भागोंमें होवे द्वारम्

नाम.	गति. जघन्य.	गति. उत्कृष्ट.	स्थिति. जघन्य.	स्थिति. उत्कृष्ट.
पुलाक	सुधर्म देवलोक	सहस्रार दे०	प्रत्येक पल्योपम	१८ सागर
बकुश	..	अच्युत दे०		२२ सागर
पडिसेवण	..	..	..	..
कषायकुशील	..	अनुत्तर वि०	..	३३ सागर
निर्ग्रंथ	अनुत्तर वि०	सर्वार्थसिद्ध	२१ सागर	..
स्नातक		मोक्ष	२२ सागर	..

देवताओंमें पद्वि ५ है. इन्द्र. लोकपाल. त्रायत्रिंशक. सामा-
र. अहमइन्द्र. पुलाक. बकुश. पडिसेवनमें पहिलेकी ४ पद्विमेंसे
पद्विवाला होवे. कषायकुशीलको ५ मेंकी १ पद्वि होवे. निर्ग्रंथको
मइन्द्रकी १ पद्वि होवे एवं स्नातक तथा मोक्षमें जावे और
च विराधक हो तो चार जातिका देवता होवे. उत्कृष्ट
धक चौवीस दंडकमें भ्रमण करे द्वारं.

(१९) संयम—संयमस्थान असंख्याते है. पुलाक, बकुश,
वण. कषायकुशील. इन चारोंके संयमस्थान असंख्याते है
ग्रंथ स्नातकका संयमस्थान एक है. अल्पाबहुत्व सर्वस्तोक
स्नातकके संयमस्थान एक है. इनोंसे असंख्यातगुणे पुला-
यमस्थान. इनोंसे असं० गुणे बकुशके. इनोंसे असं० गुणे
नके. इनोंसे असं. गुणे कषायकुशीलके संयमस्थान. द्वारं.

निकासे— । संयमके पर्याय । चारित्र पर्याय अनंते

है. पुलाकके चारित्र पर्याय अनन्ते एवं यावत्. स्नातक कहना, पुलाकसे पुलाकके चारित्र पर्याय. आपसमें छे ठाणवलिया. यथा १ अनन्तभागहानि, २ असंख्यातभागहानि, ३ संख्यातभागहानि, ४ संख्यातगुणहानि, ५ असंख्यातगुणहानि, ६ अनन्तगुणहानि ॥ १ अनन्तभागवृद्धि, २ असंख्यातभागवृद्धि, ३ संख्यातभागवृद्धि, ४ संख्यातगुणवृद्धि, ५ असंख्यातगुणवृद्धि, ६ अनन्तगुणवृद्धि, पुलाक, बकुश पडिसेवणसे अनन्तगुणहीन, कषायकुशील. छे ठाणवलिया. निग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन ॥ बकुश पुलाकसे अनन्तगुणवृद्धि. बकुश बकुशसे छे ठाणवलिया. बकुश, पडिसेवण.कषायकुशीलसे छे ठाणवलिया. निग्रंथ, स्नातकसे अनन्तगुणहीन. ॥ २ ॥ पडिसेवण, बकुश माफिक समजना. ॥ ३ ॥ कषायकुशील है सो पुलाक, बकुश, पडिसेवण और कषायकुशील, इन चारोंसे छे ठाणवलिया. और निग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन. ॥ ४ ॥ निग्रंथ प्रथमके चारोंसे अनन्तगुणे अधिक. निग्रंथ स्नातकसे समतुल्य ॥ ५ ॥ स्नातक निग्रंथके माफिक समजना ॥ ६ ॥

अल्पाबहुत्व—पुलाक और कषायकुशीलके जघन्य चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य १ पुलाकका उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्त गुणे, २ बकुश और पडिसेवणके जघन्य चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य अनन्तगुणे, बकुशका उ० चा० पर्याय अनं० ४ पडिसेवणका उ० चा० पर्याय अनं० ५ कषायकु० उ० चा० पर्याय० अनं० ६ निग्रंथ और स्नातकका जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य अनन्तगुणे. द्वारं.

(१६) योग ३ मन, वचन, काय-पहलेके पांच नियंठा सयोगी, स्नातक सयोगी और अयोगी. द्वारं.

(१७) उपयोग २ साकार, अनाकार-छप नियंठामें दोनों उपयोग मिले. द्वारम

(२४) उपसंपझणं—पुलाक पुलाकको छोडके कषायकुशीलमें या असंयममें जावे. बुकश बुकशपणा छोडे तो पडिसेवणमें, कषायकुशीलमें या असंयममें या संयमासंयममें जावे, एवं पडिसेवण भी चार ठीकाने जावे. कषायकुशील छे ठीकाने जावे. (पु० बु० प० असंयम० संयमासं० निग्रंथ) निग्रंथ निग्रंथपना छोडे तो कषायकुशील स्नातक और असंयममें जावे और स्नातक मोक्षमें जावे. द्वारं.

(२५) संज्ञा ४ पुलाक, निग्रंथ, स्नातक नोसंज्ञाबउत्ता० बुकश, पडिसेवण और कषायकुशील, सज्ञाबहुना नोसंज्ञाबहुना.

(२६) आहारी—पहलेके ५ नियंठा आहारीक. स्नातक आहारीक या अनाहारीक. द्वार.

(२७) भव—पुलाक. निग्रंथ जघन्य १ उ० ३ भव करे. बुकश, पडिसेवणा, कषायकुशील ज० १ उ० १५ भवकरे स्नातक तद्‌भव मोक्ष जावे. द्वारं.

(२८) आगरिसं—पुलाक एक भवमें जघन्य १ उ० ३ वार आवे. घणा (बहुत) भवआश्रयी ज० २ उ० ७ वार आवे. बुकश पडिसेवण और कषायकुशील एक भव० ज० १ उ० प्रत्येक सो वार आवे. घणा भवआश्रयी ज० २ उ० प्रत्येक हजार वार आवे. निग्रंथपना एक भवआश्रयी ज० १ उ० २ वार बहुत भवआश्रयी ज० २ उ० ५ वार आवे. स्नातकपना जघन्य उत्कृष्ट एक ही वार आवे. द्वारं.

(२९) काल—स्थिति, पुलाक एक जीव आश्रयी जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त बहोतसे जीवों आश्रयी ज० १ समय उ० अन्तरमु० बुकश एक जीवाश्रयी ज० १ समय उ० देशोणा पूर्व कोड बहुत जीवों आश्रयी शाश्वता. एवं पडिसेवण, कषायकुशील बकुशवत् समजना. निग्रंथ एक जीव तथा बहुत जीवों आश्रयी ज०

१ समय उ० अन्तर मुहूर्त० स्नातक एक जीवाश्रयी ज० अन्तर्मु० उ० देशोणा पूर्वक्रोड बहुत जीवो आश्रयी शाश्वता. द्वारं.

(३०) आंतरा—पहलेके पांच नियंठाके एक जीवाश्रयी ज० अन्तर्मु० उ० देशोणा अर्ध पुद्गलपरावर्तन. स्नातकका आंतरा नहीं. बहुत जीवों आश्रयी पुलाकका आंतरा ज० १ समय उ० संख्यात काल निग्रंथ ज० १ समय उ० छे मास शेष चार नियंठाका आंतरा नहीं.

(३१) समुद्घात- पुलाकमें समुद्घात. तीन वेदनी, कषाय और मरणन्ति, बुकशमें पांच वे० क० म० वैक्रिय और तेजस, कषायकुशीलमें ६ केवली छोडके निग्रंथमें समुद्० नहीं है द्वारं.

(३२) क्षेत्र—पहलेके पांच नियंठा लोकके असंख्यात भागमें होवे, स्नातक लोकके असंख्यातमें भागमें हो या बहोतसे असंख्यात भागमें होवे या सर्व लोकमें होवे. द्वारं.

(३३) स्पर्शना—जैसे क्षेत्र कहा वैसे ही स्पर्शना भी समझना. स्नातककी अधिक स्पर्शना भी होती है. द्वारं.

(३४) भाव—पहलेके ४ नियंठा क्षयोपशम भावमें होवे. निग्रंथ उपशम या क्षायिकभावमें होवे, स्नातक क्षायिकभावमें होवे. द्वारं.

३५ परिमाण—पुलाक वर्तमान पर्यायआश्रयी स्यात् मीले स्यात् न भी मीले. मीले तो जघन्य १-२-३ उ० प्रत्येक सो. पूर्वपर्यायआश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले. बुकश वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले. यदि मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक सो. पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक सो क्रोड मीले. एवं पडिसेवणा, कषायकुशील वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले. जो

- वेदना, कषाय, मरण, वैक्रिय, तेजस, आहारिक केवली.

मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले, पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक हजार क्रोड मीले. निर्ग्रंथ वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले न मीले, अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० १६२ मीले. पूर्वपर्यायाश्री स्यात् मीले न मीले. मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक सो मीले. स्नातक वर्तमान पर्यायाश्री जघन्य १-२-३ उ० १०८ मीले पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक क्रोड मीले. द्वारं.

(३६) अल्पाबहुत्व (१) सबसे थोडा. निर्ग्रंथ निर्ग्रंठोका जीव, (२) पुलाकवाले जीव संख्यातगुणे. (३) स्नातकके संख्यातगुणे (४) बकुशके संख्यातगुणे. (५) पडिसेवणके संख्यातगुणे (६) कषायकुशील निर्ग्रंठोंके जीव संख्यातगुणे. इति द्वारम्।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

—→※←—

थोकडा नम्बर ३५.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशा ७

(संयति)

संयति साधु) पांच प्रकारके होते हैं. यथा सामायिक संयति, छेदोपस्थापनिय संयति परिहार विशुद्ध संयति सूक्ष्म संपराय संयति, यथाख्यात संयति. इन पांचो संयतियोंके ३६ द्वारसे विवरण कर शास्त्रकार बतलाते हैं।

(१) प्रज्ञापना द्वार — पांच संयतियों प्ररूपणा करते हैं. (१) सामायिक संयतिके दो भेद हैं (१) स्वल्प कालका जो प्रथम और चरम तिर्थंकर साधुओंका होता है इसकी मर्यादा जघन्य सात

दिन मध्यम च्यार मास उत्कृष्ट छे मास. (२) बावीस तीर्थंकरों के तथा महाविदेह क्षेत्रमें मुनियोंके सामायिक संयम जावजीव तक रहते हैं. (२) छेदोपस्थापनिय संयम जिस्का दो भेद है. (१) स अतिचार जो पूर्व संयमके अन्दर आठवां प्रायश्चित सेवन करने पर फीरसे छेदो० संयम दिया जाता है (२) तेवीसवें तीर्थंकरोंका साधु चौवीसवें तीर्थंकरोंके शासनमें आते है उसको भी छेदो संयम दिया जाते है वह निरतिचार छेदो० संयम है (३) परिहार विशुद्ध संयमके दो भेद है (१) निवृनमान जैसे नौ मनुष्य नौनौ वर्षके हो दीक्षा ले वीस वर्ष गुरुकुलवासमें रहकर नौ पूर्वका अध्ययन कर विशेष गुण प्राप्तिके लिये गुरु आज्ञासे परिहार विशुद्ध संयमको स्वीकार करे । प्रथम छे मास तक च्यार मुनि तपश्चर्या करे च्यार मुनि तपस्वी मुनियोंकि व्यावच्च करे एक मुनि व्याख्यान वांचे दूसरे छ मासमें तपस्वी मुनि व्यावच्च करे व्यावचवाले तपश्चर्या करे तीसरे छ मासमें व्याख्यानवाला तपश्चर्या करे सात मुनी उन्होंकि व्यावच्च करे. एक मुनि व्याख्यान वांचे । तपश्चर्या क्रम: उष्णकालमें एकान्तर शीत कालमें छट छट पारणा चतुर्मासामें अठम अठम पारणा करे. एसे १८ मास तक तपश्चर्या करे । फीर जिनकल्पको स्वीकार करे अगर एसा न हो तो वापिस गुरुकुल वासाको स्वीकार करे । ४ सूक्ष्म संपराय संयमके दो भेद है (१) संक्लेश परिणाम उपशम श्रेणिसे गिरते हुवेके. (२) विशुद्ध परिणाम क्षपकश्रेणि चडते हुवेके (५) यथाख्यात संयमके दो भेद है (१) उपशान्त वीतरागी (२) क्षिणवितरागी जिस्मे क्षिणवितरागीके दो भेद है (१) छद्मस्त (२) केवली जिस्मे केवलीका दोय भेद है (१) सयोगी केवली (२) अयोगी केवली । द्वारम्

२ वेद सामायिक स० छेदोपस्थापनियमें सवेदी, सदा अवेदी भी होते है कारण नौवा गुण स्थानके दो समय शेष र

इनेपर वेद क्षय होते हैं और उक्त दोनों संयम नौवा गुणस्थान तक है। अगर सवेद होतों खिवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेद इस तीनों वेदमें होते हैं। परीहार विशुद्ध संयम पुरुषवेद पुरुष नपुंसकवेदमें होते हैं सुक्ष्म० यथाख्यात यह दोनों संयम अवेदी होते है जिस्मे उपशांत अवेदी। १०-११-गु०) और क्षिण अवेदी (१० १२-१३-१४ गुणस्थान) होते है इति द्वारम्

(३ राग-च्यार संयम सरागी होते है यथाख्यात सं० वितरागी होते है सो उपशान्त तथा क्षिण वीतरागी होते हैं।

(४) कल्प-कल्पके पांच भेद हैं।

१) स्थितकल्प-वस्त्रकल्प उदेशीक आहारकल्प राजपण्ड शय्यातरपण्ड मासीकल्प चतुर्मासीक कल्प व्रतकल्प प्रतिक्रमणकल्प कृतकर्मकल्प पुरुषजेष्टकल्प एवं (१०) प्रकारके कल्प प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंके स्थितकल्प है।

(२) अस्थित कल्प पूर्वोक्त १० कल्प कहा है वह मध्यमके २२ तीर्थंकरोंके मुनियोंके अस्थित कल्प हैं क्योंकि (१) शय्यातर व्रत, कृतकर्म, पुरुष जेष्ट, यह च्यार कल्पस्थित है शेष छे कल्प अस्थित है विवरण पर्युषण कल्पमें है।

(३) स्थिवर कल्प-मर्यादा पूर्वक १४ उपकरण से गुरुकुल वासी संयम करे गच्छ संग्रहन रहें। और भी मर्यादा पालन करे।

(४) जिनकल्प-जघन्य मध्यम उत्कृष्ट उत्सर्ग पक्ष स्वीकार कर अनेक उपसर्ग सहन करते जंगलादिमे रहे देखो नन्दीसूत्र विस्तार।

(५) कल्पातित-आगम विहारी अतिशय ज्ञानवाले महात्मा जो कल्पसे वीतिरक्त अर्थात् भूत भविष्यके लाभालाभ देख कार्य करे इति। सामा० सं० में पूर्वोक्त पांचों कल्पपावे छेदो० परिहार० में कल्प तीन पावे, स्थित कल्प स्थिवर कल्प जिन कल्प,

पन्दरा कर्मभूमिमें होते है। छदो० परि० पांच भरत पांच इर मरत एवं दश क्षेत्रोंमें होते है। साहारणपेक्षा परिहार० का साहारण नहीं होते है शेष च्यार संयम कर्मभूमि अकर्मभूमिमें भी मीलते है इतिद्वारम्।

(१२) काल-सामा० जन्मापेक्षा अवसर्पिणि कालमें ३-४-५ आरे जन्मे और ३-४-५ आरे प्रवृते। उत्सर्पिणि कालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। नोसर्पिणि नोउत्सर्पिणि चोथे पली-भाग (महाविदहे) में होवे। साहारणापेक्षा अन्यपली भाग (३० अकर्मभूमि) में भी मील सके। एवं छदो० परन्तु जन्म प्रवृतन तथा सर्पिणि उत्सर्पिणि विदेहक्षेत्रमें न हुवे, साहारणापेक्षा सर्व क्षेत्रोंमें मीले। परिहार० अवसर्पिणि कालमें ३-४ आरे जन्मे प्रवृते उत्सर्पिणि कालमें २ ३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। सूक्ष्म० यथाख्यात अवसर्पिणिकाले ३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। उत्सर्पिणिकालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। नो सर्पिणि नोउत्सर्पिणि चोथापली भागमें भी मीले साहारणापेक्षा अन्य पली भागमें लाधे इति द्वारम्।

(१३) गतिद्वार यंत्रसे

संयमके नाम	गति		स्थिति	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा० छेदोप०	सौधर्म कल्प	अनुत्तर वै०	२ पल्यो०	३३ सागरो०
परिहार०	सौधर्म०	सहस्र	२ पल्यो०	१८ सागरो०
सूक्ष्म०	अनुत्तर वै०	अनुत्तर व०	३१ साग०	३३ सा०
यथाख्या०	अनु०	अनु०	३१ सा०	३३ सा०

देवतायोंमें इन्द्र, सामानिक, तायत्रीसका, लोकपाल, और अहमेन्द्र यह पांच पद्वि है। सामा० छेदो० आराधि होतों पांचोंसे एक पद्विवाला देव हो, परिहार विशुद्धि प्रथमकि च्यार पद्विसे एक पद्वि धर हों। सुक्ष० यथा० अहमेन्द्रि पद्विधर हों। जघन्य विराधि होतों च्यार प्रकारके देवोंसे देव होवें। उत्कृष्ट विराधि हो तों संसारमंडल। इतिद्वारम।

(१४) संयमके स्थान-सामा० छेदो० परि० इन तीनों संयमके स्थान असंख्याते असंख्याते हैं। सूक्षम० अन्तर महुर्त्त के समय परिमाण असंख्याते स्थान है। यथाख्यात के संयमका स्थान एक ही है। जिस्की अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक यथाख्यात सं० के संयम स्थान।

(२) सूक्षम० के संयमस्थान असंख्यातागुने।

(३) परिहारके ,, ,,

(४) सामा० छेदो० सं० स्थ० तुल्य असं० गु०

(१५) निकाशे=संयमके पर्यव एकेक संयमके पर्यव अनंते अनन्ते है। सामा० छेदो० परिहार० परस्पर तथा आपसमें षट्गुन हानिवृद्धि है तथा आपसमे तुल्य भी है। सूक्ष्म० यथाख्यातसे तीनों संयम अनन्तगुने न्यून है। सूक्ष्म० तीनोंसे अनन्तगुन अधिक है आपसमें षट्गुन हानि वृद्धि, यथाख्यातसे अनन्त गुन न्यून है। यथा० च्यारोंसे अनन्तगुन अधिक है। आपसमें तुल्य है। अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक सामा० छेदो० जघन्य सयम पर्यव आपसमें तुल्य,

(२) परिहार० ज० स० पर्यव अनंतगुने।

(३) ,, उत्कृष्ट० ,, ,,

(४) सा० छ० ,, ,, ,,

(५) सू० ज० ,, ,,

(२८) आगरेस—संयम कितनीवार आते है ।

संयम नाम.	एकभवापेक्षा.		बहुतभवापेक्षा.	
	ज०	उत्कृष्ट	ज०	उत्कृष्ट
सामायिक०	१	प्रत्येक सौवार	२	प्रत्येक हजारवार
छेदो०	१	प्रत्येक सौवार	२	साधिक नौसोवार
परिहार०	१	३ तीनवार	२	साधिक नौसोवार
सूक्ष्म०	१	च्यारवार	२	नौवार
यथाख्यात	१	दोयवार	२	५ वार

(२९) स्थिति—संयम कितने काल रहे ।

संयम नाम.	एकजीवापेक्षा.		बहुत जीवापेक्षा.	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा०	एक समय	देशोनक्रोड पूर्व	शाश्वते	शाश्वते
छेदो०	,,	,,	२५० वर्ष	५० क्रो० सा०
परिहार०	,,	२९ वर्षोना क्रोड	दे.दोसोवर्ष	देशोनक्रोड पू
सूक्ष्म०	,,	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
यथा०	,,	देशोनक्रोड पूर्व	शाश्वते	शाश्वते

(३०) अन्तर—एक जीवापेक्षा पांचों संयमका अन्तर ज० अन्तर्मुहुर्त उ० देशोना आधा पुद्गलपरावर्तन बहुत जीवापेक्षा सा० यथा० के अन्तर नहीं है। छेदो० ज० ६३००० वर्ष परिहार० ज० ८४००० वर्ष उत्कृष्ट अठारा क्रोडाक्रोड सागरोपम देशोना। सूक्ष्म० ज० एक समय उ० छ मास ।

(३१) समुद्घात—सामा० छेदो० में केवली समु० वर्जके छे समु० पावे. परिहार० तीन क्रमसर सूक्ष्म० समु० नहीं. यथा० एक केवली समुद्घात।

(३२) क्षेत्र० च्यार संयम लोकके असंख्यातमे भागमें होवे। यथा० लोकके असंख्यात भागमें होवे तथा सर्व लोकमें (केवली समु० अपेक्षा)

(३३) स्पर्शना—जैसे क्षेत्र है वैसे स्पर्शना भी होती है परन्तु यथाख्यातापेक्षा कुच्छ स्पर्शना अधिक भी होती है।

(३४) भाव—प्रथमके च्यार संयम क्षयोपशम भावमें होते हैं और यथाख्यात उपशम तथा क्षायिक भावमें होता है।

(३५) परिणाम द्वार—सामा० वर्तमानापेक्षा स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले। पूर्व पर्यायापेक्षा नियम प्रत्येक हजार क्रोड मीले। एवं छेदो० वर्तमानापेक्षा मीले तो १-२-३ प्रत्येक सौ मीले। पूर्व पर्यायापेक्षा अगर मीले तो ज० उ० प्रत्येक सौ क्रोड मीले। परिहार० वर्तमान अगर मीले तो १-२-३ प्रत्येक सौ पूर्व पर्याय मीले तो १-२-३ प्रत्येक हजार मीले। सूक्ष्म० वर्तमानापेक्षा मीले तो १-२-३ उ० १६२ मीले जिस्में १०८ क्षपकश्रेणि और ५४ उपशमश्रेणि चढते हुवे पूर्व पर्यायापेक्षा मीले तो १-२-३ उ० प्रत्येक सौ मीले। यथा० वर्तमान अगर मीले तो १-२-३ उ० १६२। पूर्व पर्यायापेक्षा नियमा प्रत्येक सौ क्रोड मीले (केवलीकी अपेक्षा)

(३६) अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक सूक्ष्म संपराय संयमवाले।

(२) परिहार विशुद्ध संयमवाले संख्याते गुने।

(३) यथाख्यात संयमवाले संख्यात गुने।
(४) छेदोपस्थापनिय संयमवाले संख्यात गुने।
(५) सामायिक संयमवाले संख्यात गुने।

॥ सेवंभंते सेवंभंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर ३६

सूत्र श्री दशवैकालिक अध्ययन ३ जा.

(५२ अनाचार)

जिस वस्तुका त्याग कीया हो उन वस्तुको भोगवनेकी इच्छा करना, उनको अतिक्रम कहते है और उन वस्तुप्राप्तिके लिये कदम उठाना प्रयत्न करना, उनको व्यतिक्रम कहते है तथा उन वस्तुको प्राप्त कर भोगवनेकी तैयारीमें हो उनको अतिचार कहते है और त्याग करी वस्तुको भोगव लेनेसे शास्त्रकारोंने अनाचार कहा है। यहांपर अनाचारके हो ५२ बोल लिखते है।

(१) मुनिके लिये वस्त्र, पात्र, मकान और असनादि च्यार प्रकारका आहार मुनिके उद्देशसे कीया हुवा मुनि लेवें तो अनाचार लागे।

(२) मुनिके लिये मूल्य लाइ हुइ वस्तु लेके मुनि भोगवे तो अनाचार लागे।

(३) मुनि नित्य एक घरका आहार भोगवे तो अनाचार ,,

(४) सामने लाया हुवा आहार भोगवे तो अनाचार ,,

(५) रात्रिभोजन करते अनाचार लागे।

(६) देशस्नान सर्वस्नान करे तो अनाचार लागे।
(७) सचित्त-अचित्त पदार्थोंकी सुगन्धी लेवे तो अना०
(८) पुष्पादिकी माला सेहरा पहेरे तो अनाचार ,,
(९) पंखा वींजणासे वायु ले हवा खावे तो अना०
(१०) तैल घृतादि आहारका संग्रह करे तो अना०
(११) गृहस्थोंके वर्त्तनमें भोजन करे तो अना०
(१२) राजपिंड याने बलिष्ट आहार लेवे तो अना०
(१३) दानशालाका आहारादि ग्रहन करे तो अना०
(१४) शरीरका विना कारण मर्दन करे तो अना०
(१५) दांतोंसे दांतण करे तो अनाचार लागे।
(१६) गृहस्थोंको सुखशाता पुच्छे टैल बन्दगी करे तो ,,
(१७) अपने शरीरको दर्पणादिमें शोभा निमित्त देखे तो ,,
(१८) चोपाट सेतरंजादि रमत रमे तो अनाचार।
(१९) अर्थोपार्जन करे तथा जुवारमें सठा करे तो अना०
(२०) शीतोष्णके कारण छत्र धारण करे तो अना०
(२१) औषधि दवाइयों बतलाके आजीवीका करे तो अना०
(२२) जुत्ते मोजे मुंटादि पावोंमें पहरे तो अना०
(२३) अग्निकायादि जीवोंके आरंभ करे तो अना०
(२४) गृहस्थोंके वहां गार्दातकीयों आदि पर बैठनेसे ,,
(२५) गृहस्थोंके वहां पलंग मेज खाट पर बैठनेसे ,,
(२६) जीसकी आज्ञासे मकानमें ठेरे उनोंका आहार भोगवनेसे ,,
(२७) विना कारण गृहस्थोंके वहां बेठना कथा कहनेसे ,,
(२८) विगर कारण शरीरके पीठी मालीसादिका करनेसे..

थोकडा नम्बर ३७

सूत्र श्री दशवैकालिक अध्ययन ४.

(पांच महाव्रतोंका १७८२ तणावा.)

जिस तरह तंबू (डेरे) को खडा करनेके लिये मुल चोब, (बडी) उत्तर चोब (छोटी) बांस और तणावा (खुटीसे बंधी हुई रस्सी) की जरूरत है, इसी तरह साधूकों संयमरूपी तंबूके खडे (कायम) रखनेमें पांच महाव्रतादि सात बडी चोबकी जरूरत है. और प्रत्येक चोबकी मजबूतीके लिये सूक्ष्म. बादरादि (४-४-६-३-६-४-६) करके तेतीस उत्तर चोब है. प्रत्येक उत्तर चोबको सहारा देनेवाले तीन करण, तीन जोगरूपी नो २ बांस लगे है (इस तरह ३३ को ९ का गुणा करनेसे २९७ हुए) और इन बांसोंको स्थिर रखनेके वास्ते प्रत्येक बांसके दिनरात्र्यादि, छे २ तणावा है. इस तरह २९७ को छे गुणा करनेसे १७८२ तणावे हुए यह तणावे चोब बांसादिको स्थिर रखते है. जिससे तंबू खडा रहता है. यदि इनमें से एक भी तणावा मोहरूपी हवा से ढीला हो जाय तो तत्काल आलोचना रूपी हथोडेसे ठोक कर मजबूत करदे तो संजमरूपी तंबू कायम रह सकता है. अगर एसा न किया जावे तो क्रमसे दूसरे तणावे भी ढीले हो कर तंबू गिरजानेका संभव है. इस लिये पूर्णतय इनको कायम रखनेका प्रयत्न करना चाहिये. क्योंकि संयम अक्षयसुखका देनेवाला है.

अब प्रत्येक महाव्रतके कितने २ तणावे है सो विस्तार सहित दिखाते है.

(१) महाव्रत प्राणातिपात—सूक्ष्म. बादर. त्रस और स्था-

वर. इन चार प्रकारके जीवोंको मनसे हणे नहीं, हणावें नहीं, हणताको अनुमोदे नहीं एवम् बाराह और बाराह वचनका, तथा बाराह कायासे कुल छत्रीस हुए इनको दिनको, रातको अकेलेमें, पर्षदा में, निद्रावस्थामें, जागृत अवस्थामें, ६-इन भागोंको ३६ के साथ गुणा करनेसे प्रथम महाव्रतके २१६ तणावे हुए.

(२) महाव्रत मृषावाद—क्रोधसे, लोभसे, हास्यसे, और भयसे, इस तरह चार प्रकारका झूठ मनसे बोले नहीं, बोलावें नहीं, बोलतेको अनुमोदे नहीं. एवम् वचन और कायासे गुणतां ३६ हुए इनको दिन, रात्रि अकेलेमें, पर्षदामें, निद्रा और जागृत अवस्था, ये छे प्रकारसे गुणा करनेसे २१६ तणाया दूसरे महाव्रतके हुए.

(३) महाव्रत अदत्तादान—अल्पवस्तु, बहुतवस्तु, छोटी वस्तु, बडी वस्तु, सचित्त, (शीष्यादि) अचित्त, (वस्त्रपात्रादि) ये छे प्रकारकी वस्तुको किसीके बिना दिये मनसे लेवे नही, लेवावे नही, और लेतेको अनुमोदे नही. एवम् मन वचन और काया से गुणानेसे ५४ हुए जिसको दिन, रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे तीसरे महाव्रतके हुए.

(४) महाव्रत ब्रह्मचार्य—देवी, मनुष्यणी, और तीर्यंचणी, के साथ मैथुन मनसे सेवे नहीं, सेवावें नहीं सेवतेको अनुमोदे नहीं. एवम् वचन और कायासे गुणातां २७ हुए जिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे १६२ तणावे चौथे महाव्रतके हुए.

(५) महाव्रत परिग्रह—अल्प, बहुत, छोटा, बडा, सचित्त, अचित्त, छे प्रकार परिग्रह मनसे रखे नहीं रखावे नहीं, राखतेको अनुमोदे नहीं, एवम् वचन और कायासे गुणातां ५४ हुए जिस को दिनरात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे पांचवे महाव्रतके हुए.

(६) रात्रिभोजन-अशन, पांण, खादिम, स्वादिम, ये चार

प्रकारका आहार मनसे रात्रिको करे नही, करावे नही. करतेको अनुमोदे नही, एवम् वचन और कायासे गुणातां ३६ हुए इनको दिनमें (पहिले दिनका लाया हुवा दूसरे दिन) रात्रिमें, अके- लेमें, पर्षदामें, निद्राअवस्था. और जागृत अवस्था ६ का गुणां करनेसे २१६ तणावे हुए.

(७) छकाय—पृथ्वीकाय, अप्पकाय, तेउकाय, वायुकाय वनास्पतिकाय, और त्रसकायको मनसे हणे नही, हणावे नही, हणतेको अनुमोदे नहीं. एवम् वचन और कायासे गुणतां ५४ हुए तिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे हुए.

एवम् सर्व २१६-२१६-३२४-१६२-३२४-२१६-३२४ सब मिला कर १७८२ तणावा हुए.

अब प्रसंगोपात दशवैकालिक सूत्रके छट्टे अध्ययनसे अठाराह स्थानक लिखते हैं. यथा पांच महाव्रत, तथा रात्रिभोजन, और छ काय एवं १२ अकल्पनीय वस्त्र. पात्र, मकान और चार प्रका- रका आहार १३ गृहस्थके भाजनमें भोजन करना १४ गृहस्थके पलंग खाट आसन पर बैठना १५ गृहस्थके मकानपर बैठना अर्थात् अपने उतरे हुवे मकानसे अन्य गृहस्थके मकान बैठना १६ स्नान देससे या सर्वसे स्नान करना १७ नख केस रोम आदि समारना १८ इन अठाराह स्थान में से एक भी स्थानकको सेवन करनेवा- लोंको आचारसे भ्रष्ट कहा है।

गाथा—दस अट्ठय ठाणाई, जाई बालो वरज्झइ
तथ्य अन्नयरे ठाणे, निग्गंथ ताउ भेसइ

अर्थ—दस आठ अठाराह स्थानक हैं उनको बालजीव वि- राधे या अठाराहमेंसे एक भी स्थान सेवे तो निर्ग्रंथ (साधु) उन स्थानसे भ्रष्ट होता है. इस लिये अठाराह स्थानकी सदैव यतना करणी चाहिये. इति.

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नंबर ३८

श्री भगवती सूत्र श० ८ उद्देसा १०

आराधना.

आराधना तीन प्रकारकी है. ज्ञान आराधना १, दर्शन आराधना २ और चारित्र आराधना.

ज्ञान आराधना तीन प्रकारकी है उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य. उत्कृष्ट ज्ञान आराधना, चौदे पूर्वका ज्ञान या प्रबल ज्ञानका उद्यम करे. मध्यम आराधना, इग्यारे अंग या मध्यम ज्ञानका उद्यम करे. जघन्य आराधना, अष्ट प्रवचन माताका ज्ञान, व जघन्य ज्ञानका उद्यम

दर्शन आराधनाके तीन भेद. उत्कृष्ट (क्षायक सम्यक्त्व) मध्यम (क्षयोपशम स०) जघन्य (क्षयोपशम या सास्वादन स०)

चारित्र आराधनाके तीन भेद-उत्कृष्ट (यथाख्यात चारित्र) मध्यम (परिहार विशुद्धादि) जघन्य (सामायिक०)

उत्कृष्ट ज्ञान आराधनामें दर्शन आराधना कितनी पावे ? दो पावे, उत्कृ० मध्य० ॥ उत्कृष्ट दर्शन आराधनामें ज्ञान आराधना कितनी पावे ? तीनों पावे, उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य.

उत्कृष्ट ज्ञान आराधनामें चारित्र आराधना कितनी पावे ? दो पावे, उत्कृष्ट और मध्यम ॥ उत्कृष्ट चारित्र आराधनामें ज्ञान आराधना कितनी पावे ? तीनों पावे, उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य.

उत्कृष्ट दर्शन आराधनामें चारित्र आराधना कितनी पावे ?

तीनो पावे. उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य ॥ उत्कृष्ट चारित्र आराधनामें दर्शन आराधना कितनी पावै ? एक पावे. उत्कृष्ट ॥

उत्कृष्ट ज्ञानआराधना वाले जीव कितने भव करे ? जघन्य एक भव. उत्कृष्ट दोय भव.

मध्यम ज्ञान आराधनावाले जीव कितने भव करे ? जघन्य दो. उत्कृष्ट तीन भव करे.

जघन्य ज्ञान आराधनावाले जीव कितने भव करे ? जघन्य तीन और उत्कृष्ट पंदराह भव करे ॥ एवम् दर्शन और चारित्र आराधनामें भी समझ लेना.

एक जीवमें उत्कृष्ट ज्ञानआराधना होय. उत्कृष्ट दर्शन आराधना होय और उ० चारित्र आराधना होय. जिसके भांगा नाचे यंत्रमें लिखे हैं.

पहिला एक ज्ञान दुसरा दर्शन और तीसरा चारित्र तथा ३ के आंकको उत्कृष्ट २ के आंकको मध्यम और १ के आंकको जघन्य समझना.

३-३-३	२-३-२	२-१-२	१-३-१
३-३-२	२-३-१	२-१-१	१-२-२
३-२-२	२-२-२	१-३-३	१-२-१
२-३-३	२-२-१	१-३-२	१-१-२
			१-१-१

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर ३६

श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र अध्ययन २६

(साधु समाचारी)

श्री जिनेन्द्र देवोंकि फरमाइ हुइ समाचारी की आराधन कर अनन्ते जीव मोक्षमें गये है-जाते है और जावेंगे.

दश प्रकारकी समाचारीके नाम (१) आवस्सिय (२) निसिहिय (३) आपुच्छणा (४) पडिपुच्छणा (५) छंदणा (६) इच्छाकार (७) मिच्छाकार (८) तहकार (९) अभ्भुठणा (१०) उपसंपया.

(१) आवस्सिय—साधु को आवश्य × कारण हो तब ठेरे हुये उपासरासे बाहर जाना पडे तो जाती वस्त पेस्तर आवस्सिय ऐसा शब्द उच्चारण करे ताके गुरुवादिको ज्ञात हो जावे की अमुक साधु इस टाइममें बाहर गया है.

(२) निसिहि—कार्यसे निवृत्ती पाके पीछा स्थान पर आती वस्त निसिहि शब्द उच्चारण करे ताके गुरुवादिको ज्ञात हो की अमुक साधु बाहरसे आया है यदि कम ज्यादा टाइम लगी हो तो इस बातका निर्णय गुरु महाराज कर सके है.

(३) आपुच्छणा—स्वयं अपने लिये यत्किंचित् भी कार्य हो तो गुरुवादिको पुच्छे अगर गुरु आज्ञा दे तो वह कार्य करे. (गोचरिआदि.)

× साधु चार कारण से उपासरासे बाहर जाते है सो कारण [१] आहार पानी आदि लानेको [२] विहार—स्थंडिल भूमि जाना हो तो [३] ग्रामान्तर—एक ग्राममें दुसरे ग्राम जाना हो तो [४] जिनदर्शनार्थ जाना हो तो. सिवाय चार कारण के बाहर न जावे अपने स्थानपर ही स्वाध्याय ध्यान में ही मग्न रहे

भ समभूमि पर खडा हो कर अपना दिक्षणकी छाया पडे व दो पग प्रमाण हो तो एक पेहर दीनका परिमाण समझना अथव तडकामें विलश (येय) की छाया विलश परिमाण हो तो पेह दीन समझना और श्रावण कृष्ण सप्तमीकों एक आंगुल छाय बढे, श्रावण कृष्ण अमावास्याकों २ आंगुल छाया बढे, श्राव शुक्ल सप्तमीकों ३ आंगुल छाया बढे, और श्रावण शुक्ल पूर्णमाकं ४ आंगुल छाया बढे (एक मासमें ४ आंगुल छाया बढे) श्राव शुक्ल पूर्णमा २ पग और ४ आंगुल छाया आनेसे पेहर दीन आय समझना, भाद्रपद शुक्ल पूर्णमा को २ पग ८ आंगुल छाया, आश्वि पूर्णमा ३ पग छाया, कार्तिक पूर्णमा ३ पग ४ आंगुल, मागश पूर्णिमा ३ पग ८ आंगुल. पोष पूर्णमा ४ पग छायाके पेहर दीन समजना, इसी माफक एक एक मासमें ४ आंगुल कम करते आषाद पूर्णमाको २ पग छायाको पेहर दीन समझना. यह प्रमाण सम भूमिका है वर्तमान विषम भूमि होनेसे कुच्छ तफावत भी रहत है वह गीतार्थों से निर्णय करे।

पोरसी और बहुपडिपुन्ना पोरसीका यंत्र.

जेष्ट पग २-४ अंगुल ६×२-१०	भाद्रपद पग ३-८ अंगुल ८-३-४	मार्ग० पग २-८ अं० १०-४-६	फाल्गुन पग ३ अं० ८-४
आषाढ पग २ अंगुल ६×२-६	आश्विन पग ३ अंगुल ८-३-८	पौष पग ४ अं० १०-४-१०	चैत्र पग ३ अंगुल ८-३-८
श्रावण पग २-४ अंगुल ६-२-१०	कार्तिक ३ ४ अंगुल ८-४	माघ प. ३-८ अं० १०-४-६	वैशाख पग २- अंगुल ८-२-४

बहुपडि पुन्नापोरसीका मान जेष्ठआसाढ श्रावण मासमे जो पेहरकी छाया बताइ है जीसमें ६ आंगुल छाया ज्यादा और भाद्रपद आश्विन कार्तिकमें ८ आंगुल मगसर पोष माघमें १० आंगुल फाल्गुन चैत वैशाखमें ८ आंगुल छाया बाढानेसे पडिपून्ना पोरसीका काल आते है इस वक्त मुपत्ती वा पात्रादिको फिरसे पडिलेहन की जाती है.

पक्ख मास और संवत्सरका मान विशेष जोतीषीयोंको थोकडेमें लिखेंगे यहां संक्षेपसे लिखते है. जैन शास्त्रमें संवत्सर की आदि श्रावण कृष्ण प्रतिपदासे होती है. श्रावण मास ३० दीनोंका होता है. भाद्रपद मास २९ दीनोंका जीसमें कृष्णपक्ष १४ दीनोंका और शुक्ल पक्ष १५ दीनोंका होता है आश्विन मगसर माघ चैत जेष्ट मास यह प्रत्येक ३० दीनोंका मास होता है और कार्तिक पोष फाल्गुन वैशाख आषाढ मास प्रत्येक २९ दीन का होता है जो एक तिथी घटती है यह कृष्णपक्षमें ही घटती है. इस सुधर्मा भगवान् के मंत्र को मान देनासे जैनोंमें पक्खि संवत्सरिका झघडा को स्वयं तिलांजली मिल जावेगी *.

दिनका प्रथम पेहरका चोथा भागमें (सूर्योदय होनासे दो घडी) पडिलेहन करे किंचत् मात्र वस्त्रपात्रादि उपगरण विगेरे पडिलेहा न रखे + पडिलेहनकि विधि इसी भागके चतुर्थ समिति में लिखि गइ है सो देखो.

पडिलेहन कर गुरु महाराजको विधिपूर्वक वन्दन नमस्कार कर प्रार्थना करेकि हे भगवान् अब मैं कोइ साधुयोंकी व्यावच करुं या स्वाध्याय करुं? गुरु आदेश करेकि अमुक साधुकि व्यावच

---

* यह मान चन्द्र संवत्सरका कहा है।

\+ किंचत् मात्रभी दिनमें पडिलेहा रखे तो लघुचौमासी प्रायश्चित उधे [illegible] प्रायश्चित कहा है.

करो तो अग्लानपने व्यावच करे अगर गुरु आदेश करेकी स्वाध्याय करो तो प्रथम पेहरका रहा हुवा तीन भागमें मुलसूत्रोंकि स्वाध्याय करे अथवा अन्य साधुवोंको वाचना देवे स्वाध्याय केसी है की सर्व दुःखोंको अन्त करनेवाली हैं.

दिनका दुसरा पहेरमें ध्यान करे अर्थात् प्रथम पेहरमें मूल पाठकी स्वाध्याय करी थी उस्का अर्थापयोग संयुक्त चितवन करे. शास्त्रोंका नया नया अपूर्वज्ञानके अन्दर अपना चित्त रमण करते रहना जीनसे जगत् कि सर्व उपाधीयों नष्ट हो जाती है वही चेतनका मोक्ष है.

दिनके तीसरे पेहरमें जब पूर्ण क्षुधा सताने लग जावे अर्थात् छ कारण (थोकडा नं० ३२ में देखो) से कोइ कारण हो तो पूर्व पडिलेहा हुवा पात्रा ले के गुरु महाराजकी आज्ञा पूर्वक आतुरता चपलता रहित भिक्षाके लिये अटन करे भिक्षा लानेका ४२ तथा १०१ दोष (थोकडे नं० ३२ में देखो) वर्जित निर्वद्याहार लावे इरियावहि आलोचना कर गुरुकों आहार दीखा के अन्य महात्मावोंको आमन्त्रण करे दोष रहा हुवा आहार मांडलाका पांच दोष वर्जके क्षणवार भावना भावे धन्य है जो मुनि तपश्चर्या करे बादमें अमुच्छित अगिर्द्धपणे संयम यात्रा निर्वाहने के लिये तथा शरीरको भाडा रुप आहार पाणी करे । अगर कोसी क्षेत्रमें तीसरा पेहरमें भिक्षा न मिलती हो तो जीस वक्तमें मीले उस वक्तमें लावे एसा लेख दशवैकालिकसूत्र अ० ५ उ २ गाथा ४ में है) इस वार्यमें तीसरी पेहर खतम हो जाति है

दिनके चोथे पेहरका चार भागमें तीन भाग तक स्वाध्याय करे और चोथा भागमें विधिपूर्वक पडिलेहन (पूर्व प्रमाणे) करे साथमें स्थंडिल भी द्रष्टीसे प्रतिलेखे बादमें दीनके विषय जो लागा हुवा अतिचार जिस्की आलोचना रुप उपयोग संयुक्त प्रतिक्रमण करे.

क्रमशः षटावश्यक और सायमें इन्दोंका + फल बताते है.

पटावश्यकका नाम *

यथाः—सावद्य जोगविरइ उक्कताखगुण पडिवति ॥
खलियस्स निंदवणा तिगिच्छगुण धारणाचेव ॥ १ ॥

तथा सामायिक चउवीसत्थो वन्दना प्रतिक्रमण काउस्सग पञ्चखाण. (आवश्यकसूत्र)

(१) प्रथम सामायिकावश्यक इरियावहि पडिकमे देवसि प्रतिक्रमणठाउ जाव अतिचारका काउस्सग पारके एक नमस्कार कहे वहांतक प्रथम आवश्यक है दीनके अन्दर जीतना अतिचार लगा हो वह उपयोग संयुक्त काउस्सगमें चितवन करना इसका फल सावद्य योगोंसे निवृती होती है. कर्मोंनेका अभाव.

(२) दुसरा चउवीसत्थावश्यक। इन अव सर्पिणिमें हो गये चोवीश तीर्थंकरोंकी स्तुति रूप लोगस्स कहेना-फल सम्यक्त्व निर्मल होता है.

(३) तीसरावश्यक वन्दना-गुरु महाराजको द्वादशावृतनसे वन्दना करना. फल निच गोत्रका नास होता है और उच गोत्रकी प्राप्ती होती है.

(४) चोथा प्रतिक्रमणावश्यक दिनके विषय लागा हुवा अतिचार को उपयोग संयुक्त गुरु साखे पडिक्कमे सो देवसी अतिचारसे लगाके आयरियोवझ्झाया तीन गाथा तक चोथा आवश्यक है फल संयम रुपि जो नौका जिस्मे पडा हुवा छेद्रको दे-

\+ फल उत्राध्ययन सूत्र अध्ययन २९ मां बताया है।

* इन भी अनुयोगद्वारमें।

चके छिद्रका निरुद्ध करणा, जीनसे असपला चारित्र और अष्ट प्रवचन माताकी उपयोग संयुक्त आराधना (निर्मल) करे.

(५) पंचम काउस्सगावश्यक--प्रतिक्रमण करतां अना उपयोग रहा हुवा अतिचार रुपि प्रायश्चित जोस्कों शुद्ध करणे के लिये च्यार लोगस्सका काउस्सग करे एक लोगस्स प्रगट करे फल-भूत और वर्तमान कालका प्रायश्चितको शुद्ध करे जैसे कोइ मनुष्यको देना हो या वजन कीसी स्थानपर पहुंचाना हो उनको पहुंचा देवे या देना दे दीया फिर निर्भय होता है इसी माफीक व्रत मे लगाहुवा प्रायश्चितकों शुद्ध कर प्रशस्त ध्यानके अन्दर सुखे सुखे विचरे.

(६) छठा पच्चखाणावश्यक-गुरु महाराजका द्वादशा वृतसे २ वन्दना देके भविष्यकालका पच्चखाण करे। फल आता हुवा आश्रवकों रोके और इच्छाका निरुद्ध हानासे पूर्व उपार्जित कर्मोंका क्षय करे.

यह षटावश्यक रुप प्रतिक्रमण निर्विघ्नपणे समाप्त होने पर भाव मंगल रुप तीर्थंकरादि स्तुति चैत्यवन्दन जघन्य ३ श्लोक उत्कृष्ट ७ श्लोकसे स्तुति करना। फल ज्ञान दर्शन चारित्रकि आराधना होती है जीससे जीव उन्ही भवमें मोक्ष आवे अथवा विमानीक देवतां में आवे वहांसे मनुष्य होके मोक्षमें जावे उत्कृष्ट करे तो भी १५ भवसे अधिक न करे.

रात्रिका कृत्य.

जब प्रतिक्रमण हो जावे तब स्वाध्यायका काल आनेमें काल पडिलेहन करे जैसे ठाणयंग सूत्रका दशमा ठाणामें १० प्रकारकी आकाशकी असज्झाय बताइ है यथा तारो तुटे, दीशा लाल, अकालमें गाज बीजली, कडक, भूमिकम्प, चाठचन्द्र,

यक्षचिन्ह. अग्निका उपद्रव. धुमस (रजोघातादि) यह दश प्रकारको आस्वाध्यायसे कोइ भी अस्वाध्याय न हो तो.

- रात्रिके प्रथम पेहरमें मुनि स्वाध्याय (सूत्रका मूल पाठ) करे. रात्रिके दुसरे पेहरमें जो प्रथम पेहरमें मूल सूत्रका पाठ किया था उन्होका अर्थ चिंतवनरुप ध्यान करे परन्तु वातो-की स्वाध्याय और सुताका ध्यान जो कर्मबन्धका हेतु है उनको स्पर्श तक भी न करे. स्वाध्याय सर्व दुःखोंका अन्त करती है।

रात्रिके तीसरा पेहरमें जब स्वाध्याय ध्यान करतां निद्राका आगमन हो तो विधिपूर्वक संथारा पोरसी भणा के यत्नापूर्वक संथारा करके स्वल्प समय निन्द्राको मुक्त करे.

रात्रिका चोथा पेहर-जब निद्रासे उठे उस वखत अगर कोई खराब सुपन विगेरे हुवा हो तो उसका प्रायश्चितके लिये काउस्सग्ग करना फिर एक पेहरका ४ भागमें तीन भाग तक मूल सूत्रकी स्वाध्याय करना वार वार स्वाध्यायका आदेश देते हैं इसका कारण यह है की श्री तीर्थंकर भगवान् के मुखारविंद से निकली हुइ परम पवित्र आगमकी वाणी जिसको गणधर भगवानने सूत्ररूपे रचना करी उस वानीके अन्दर इतना असर भरा हुवा है कि भव्य प्राणी स्वाध्याय करते करते ही सर्व दुःखोंका अन्त कर केवलज्ञानको प्राप्त कर लेते हैं. इसले ही शास्त्रकार कहते हैं कि यथा " सव्वदुःखविमोरकाणं "

जब पेहरका चोथा भाग (दो घडी) रात्रि रहे तब रात्रि सबन्धी जो अतिचार लागा हो उसकि आलोचना रुप षटावश्यक पूर्ववत् प्रतिक्रमण करना - सूर्योदय होता हि गुरु महाराजको

- रात्रिका काल ग्रहणके लिये नक्षत्र आदिसे मुनि जाने वह योगीन्द्रके आधिकारके थोकडेमें लिखा जावेगा.

+ हमेशा काउस्सग्गमें यह चिन्तवन करना मुझे क्या करना है!

वन्दन कर पञ्चखांन करना और गुरु आज्ञा माफिक पूर्ववत् दीनकृत्य करते रहेना.

इसी माफिक दिन और रात्रिमें वरताव रखना और भी, ज्ञान, ध्यान, मौन, विनय, व्यायच पर्वाराधन तपश्चर्या दीनरात्रिमें सात वेर चैत्यवन्दन वार वार सज्झाय समिति गुप्ति भाषा पूजन प्रतिलेखनके अन्दर पूर्ण तय उपयोग रखना पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति यह १३ मूल गुण हैं ओस्मे हमेशा प्रयत्न करते रहेना एक भवमे यद्किंचित् परिश्रम उठाणा पडता है परन्तु भवोभवमें जीव सुखी हो जाता है.

यह श्री सुधर्मास्वामिकी समाचारी सर्व जैनोंको मान्य है वास्ते झघडे की समाचारीयोंको तिलाञ्जलि देके सुधर्म समाचारीमें यथाशक्ति पुरुषार्थ करे ताके शीघ्र कल्याण हो.

शान्तिः　　　शान्तिः　　　शान्तिः

सेवंभंते—सेवंभंते—तमेवसच्चम्.

॥ इति शीघ्रबोध चतुर्थ भाग समाप्तम् ॥

श्री रत्नप्रभसूरि सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ५ वां.

थोकडा नम्बर ४०

(जड चैतन्य स्वभाव.)

जीवका स्वभाव चैतन्य और कर्मोका स्वभाव जड एवं जीव और कर्मोका भिन्न भिन्न स्वभाव होने पर भी जैसे धूलमें धातु तीलोंमें तैल दुधमें घृत है, इसी माफीक अनादि काल से जीव और कर्मो के संबन्ध है जैसे यंत्रादि के निमित्त कारण से धूलसे धातु तीलोंसे तैल दुधसे घृत अलग हो जाते हैं इसी माफीक जीवों को ज्ञान, दर्शन, तप, जप, पूजा, प्रभावनादि शुभ निमित्त मीलनेसे कर्मो और जीव अलग अलग हो जीव सिद्ध पदको प्राप्त कर लेते है.

जबतक जीवोंके साथ कर्म लगे हुवे है तबतक जीव अपनि दशाको भूल मिथ्यात्वादि परगुन में परिभ्रमन करता है जैसे सुवर्ण आप निर्मल अकलंक कोमल गुणवाला है किन्तु अग्निका संयोग पाके अपना असली स्वरुप छोड उष्णता को धारण करता है फीर जल वायुका निमित्त मीलने पर अग्निको त्यागकर अपने असली गुणको धारन कर लेता है इसी माफीक जीव भी निर्मल

वन्दन कर पचखांन करना और गुरु आज्ञा माफिक पूर्ववत् दीनकृत्य करते रहेना.

इसी माफिक दिन और रात्रिमें वरताव रखना और भी, ज्ञान, ध्यान, मौन, विनय, व्यावच्च पर्याराधन तपश्चर्या दीनरात्रिमें सात वेर चैत्यवन्दन वार वार सझाय समिति गुप्ति भाषा पूजन प्रतिलेखनके अन्दर पूर्ण तय उपयोग रखना पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति यह १३ मुल गुण है जीस्मे हमेशा प्रयत्न करते रहेना एक भवमे यदकिंचित् परिश्रम उठाणा पडता है परन्तु भवोभवमें जीव सुखी हो जाता है.

यह श्री सुधर्मास्वामिकी समाचारी सर्व जैनोंको मान्य है वास्ते झघडे की समाचारीयांको तिलाञ्जलि देके सुधर्म समाचारीमें यथाशक्ति पुरुषार्थ करे ताके शीघ्र कल्याण हो.

शान्तिः शान्तिः शान्तिः

सेवंभंते—सेवंभंते—तमेवसच्चम्.

॥ इति शीघ्रबोध चतुर्थ भाग समाप्तम् ॥

श्री रत्नप्रभसूरि सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ५ वां.

थोकडा नम्बर ४०

(जड चैतन्य स्वभाव.)
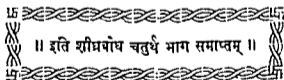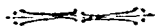
जीवका स्वभाव चैतन्य और कर्मोंका स्वभाव जड एवं जीव और कर्मोंका भिन्न भिन्न स्वभाव होने पर भी जैसे धूलमें धातु तीलोंमें तैल दुधमें घृत है, इसी माफीक अनादि काल से जीव और कर्मों के संबन्ध है जैसे यंत्रादि के निमित्त कारण से धूलसे धातु तीलोंसे तैल दुधसे घृत अलग हो जाते हैं इसी माफीक जीवों को ज्ञान, दर्शन, तप, जप, पूजा, प्रभावनादि शुभ निमित्त मीलनेसे कर्मो और जीव अलग अलग हो जीव सिद्ध पदको प्राप्त कर लेते हैं.

जबतक जीवोंके साथ कर्म लगे हुवे है तबतक जीव अपनि दशाको भूल मिथ्यात्वादि परगुण में परिभ्रमन करता है जैसे सुवर्ण आप निर्मल अकलंक कोमल गुणवाला है किन्तु अग्निका संयोग पाके अपना असली स्वरुप छोड उष्णता को धारण करता है फीर जल वायुका निमित्त मीलने पर अग्निको त्यागकर अपने असली गुणको धारण कर लेता है इसी माफीक जीव भी निर्मल

अकलंक अमूर्त्ति है परन्तु मिथ्यात्वादि अज्ञानके निमित्त कारण से अनेक प्रकारके रूप धारण कर संसारमें परिभ्रमन करता है परन्तु जब सद्ज्ञान दर्शनादिका निमित्त प्राप्त करता है तब मिथ्यात्वादिका संग त्याग अपना असली स्वरूप धारण कर सिद्ध अवस्थाको प्राप्त कर लेता है.

जीव अपना स्वरूप कीस कारणसे भूल जाता है ? जसे कोइ अकलमंद समजदार मनुष्य मदिरापान करने से अपना भान भूल जाता है फीर उन मदिराका नशा उतरने पर पश्चाताप कर अच्छे कार्यमें प्रवृत्ति करता है इसी माफीक अनंत ज्ञान दर्शनका नायक चैतन्यको मोहादि कर्मदलक विपाकोदय होता है तब चैतन्यको बेभान-विकल-बना देता है फीर उन कर्मोको भोगवके निर्ज्जरा करने पर अगर नया कर्म न बन्धे तो चैतन्य कर्म मुक्त हो अपने स्वरूपमें रमणता करता हुवा सिद्ध पदको प्राप्त कर लेता है.

कर्म क्या वस्तु है ? कर्म एक कोस्मके पुद्गल है जिस पुद्गलोंमें पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, च्यार स्पर्श है जीवोंके उन पुद्गलों से अनादि कालका संबन्ध लगा हुवा है उन कर्मोंकि प्रेरणासे जीवोंके शुभाशुभ अध्यवसाय उत्पन्न होते है उन अध्यवसायोंकी आकर्षणासे जीव शुभाशुभ कर्म पुद्गलोंको ग्रहन करते है। वह पुद्गल आत्माके प्रदेशोंपर चीपक जाते है अर्थात् आत्म प्रदेशोंके साथ उन कर्म पुद्गलोंका खीरनिरकी माफीक बन्ध होते है जिनों से वह कर्म पुद्गल आत्माके गुणोको झांखा बना देते है जैसे सूर्यको बादल झांखा बनाता है। जैसे जैसे अध्यवसायोंकी मंदता तीव्रता होती है वैसे वैसे कर्मोके अन्दर रस तथा स्थिति पड जाति है यह कर्म बन्धने के बाद वह कर्म कौनसे कालसे विपाक उदय होते है उसको अबादा काल कहते है जैसे हुन्डीके अन्दर मुदत डाली जाति है। कर्म दो प्रकारसे भोगवीये

जाते हैं (१) प्रदेशोदय (२) विपाकोदय जिस्में तप, जप, ज्ञान, ध्यान, पूजा, प्रभावनादि करनेसे दीर्घ कालके भोगवने योग्य कर्मोंको आकर्षण कर स्वल्प कालमें भोगव लेते हैं जिसकी खबर छद्मस्थोंको नहीं पडती है उसे प्रदेशोदय कहते है तथा कर्म विपाकोदय होने से जीवोंको अनेक प्रकारकी विटम्बना से भोगवना पडे उसे विपाकोदय कहते हैं ।

अशुभ कर्मोदय भोगवते समय आर्तध्यानादि अशुभ क्रिया करने से उन अशुभ कर्मोंमें और भी अशुभ कर्म स्थिति तथा अनुभाग रसकि वृद्धि होती है तथा अशुभ कर्म भोगवते समय शुभ क्रिया ध्यान करने से वह अशुभ पुद्गल भी शुभपणे प्रणम जाते हैं तथा स्थितिघात रसघात कर बहुत कर्म प्रदेशों मे भोगवके निर्जरा कर देते हैं ॥ शुभ कर्मोदय भोगवते समय अशुभ क्रिया करनेसे वह शुभ कर्म पुद्गल अशुभपणे प्रणमते है और शुभ क्रिया करनेसे उन शुभ कर्मोंमें और भी शुभकि वृद्धि होती हैं वह शुभ कर्म सुखे सुखे भोगवके अन्तमें मोक्षपदको प्राप्त कर लेते हैं ।

साहुकार अपने धनका रक्षण तब कर सकेंगे कि चोर धाड आनेका कारण हेतु रहस्तेको ठीक तोरपर समझ लेंगे और उन चोर आनेके रहस्तेको बन्ध करवादे वा पेहरादार रखदे तो धन का रक्षण कर सके इसी माफीक शास्त्रकारोंने फरमाया है कि प्रथम चोर धाडे कर्मोंका स्वरूपको ठीक तोरपर समझो और कर्म आनेका हेतु कारणको समझो, और नया कर्म आनेके रहस्तेको रोको और पुराणे कर्मोंका नाश करनेका उपाय करो तांके संसार का अन्त कर यह जीव अपने निज स्थान (मोक्ष) को प्राप्त कर सादि अनंत भागे सुखी हो ।

कर्मोंकि विषय पे अनेक ग्रन्थ है परन्तु साधारण मनुष्योंके लिये एक छोटासी कीताब द्वारा मूल आठ कर्मोंकि उत्तरकर्म

प्रकृति १५८ का संक्षिप्त विवरण कर आप.क सेवामें रखी जाति है आशा है कि आप इन कर्म प्रकृतियोंको कंटस्थ कर आगे के लिये अपना उत्साह बढाते रहेंगें इत्यलम् ।

—✻○✻—

थोकडा नम्बर ४१

(मूल आठ कर्मोंकि उत्तर प्रकृति १५८.)

(१) ज्ञानावर्णियकर्म—चैतन्यके ज्ञान गुणको रोक रखा है ।
(२) दर्शनावर्णियकर्म—चैतन्यके दर्शन गुणको रोक रखा है ।
(३) वेदनियकर्म—चैतन्यके अव्याबाद गुणको रोक रखा है ।
(४) मोहनियकर्म—चैतन्यके क्षायिक गुणको रोक रखा है ।
(५) आयुष्यकर्म—चैतन्यके अटल अवगाहाना गुणको रोक रखा है.
(६) नामकर्म—चैतन्यके अमूर्त गुणको रोक रखा है ।
(७) गौत्रकर्म—चैतन्यके अगुरु लघु गुणको रोक रखा है ।
(८) अन्तरायकर्म—चैतन्यके वीर्य गुणको रोक रखा है ।

इन आठों कर्मोंकि उत्तर प्रकृति १५८ है उनोंका विवरण—

(१) ज्ञानावर्णियकर्म जेसे घाणीका बहल-याने घाणीके बहलके नैत्रोंपर पाट्टा बान्ध देनेसे कोभी वस्तुका ज्ञान नहीं होता है. इसी माफीक जीवोंके ज्ञानावर्णिय कर्मपडल आजानेसे वस्तुतत्वका ज्ञान नहीं होता है । जीस ज्ञानावरणीय कर्मकि उत्तर प्रकृति पांच है यथा—(१) मतिज्ञानावर्णिय, ३४० प्रकारके मतिज्ञान है (देखो शीघ्रबोध भाग ६ टा) उनपर आवरण करना अर्थात् मतिसे कीसी प्रकारका ज्ञान नहीं होने देना अच्छी बुद्धि

उत्पन्न नही होना तत्व वस्तुपर विचार नही करने देना. प्रज्ञा नही फेलना-बदलेमें खराब मति-बुद्धि-प्रज्ञा-विचार पैदा होना यह सब मतिज्ञानावर्णियकर्मका ही प्रभाव है (२) श्रुतज्ञानावर्णिय-श्रुतज्ञानको रोके, पठन पाठन श्रवण करनेको रोके, सद्ज्ञान होने नही देवे योग्य मीलनेपर भी नूत्र सिद्धान्त वाचना सुननेमें अन्तराय होना-बदलेमें मिथ्याज्ञान पर श्रद्धा पठन पाठन श्रवण करनेकि रूची होना यह सब श्रुतिज्ञानावर्णियकर्मका प्रभाव है (३) अवधिज्ञानावर्णियकर्म-अनेक प्रकारके अवधिज्ञानको रोके (४ मनःपर्यवज्ञानावर्णियकर्म आते हुवे मनःपर्यवज्ञानको रोके (५) केवलज्ञानावर्णियकर्म-संपूर्ण जो केवलज्ञान है उनको आते हुवेको रोके इति ॥

(२) दर्शनावर्णियकर्म—राजाके पोलीया जैसे कीसी मनुष्यको राजासे मीलना है परन्तु वह पोलीया मीलने नही देते है इसी माफिक जीवोंको धर्म राजा से मीलना है परन्तु दर्शनावर्णियकर्म मीलने नही देते है जीसकि उत्तर प्रकृति नौ है. (१) चक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदय से जीवोंको नेत्र (आँखों) हिन वना दे अर्थात् एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय जातिमें उत्पन्न होते है कि जहां नेत्रोंका बिलकुल अभाव है और चौरिन्द्रिय पांचेन्द्रिय जातिमें नेत्र होने पर भी रातोंदा होना, काणा होना तथा बिलकुल नही दीखना इसे चक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति कहते है (२) अचक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदयसे त्वचा जीभ नाक कान और मनसे जो वस्तुका ज्ञान होता है उनोंको रोके जिस्का नाम अचक्षु दर्शनावर्णिय कहते है (३) अवधि दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदयसे अवधि दर्शन नही होने देवे अर्थात् अवधि दर्शनको रोके (४) केवल दर्शनावर्णिय कर्मोदय, केवल दर्शन होने नही देवे अर्थात् केवल दर्शनपर आवरण कर रोक रखे ॥ तथा निद्रा-निद्रा निद्रा दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदय से

निद्रा आति है परन्तु सुखे सोना सुखे जाग्रत होना उसे निद्रा कहते हैं। और सुखे सोना दुःखपूर्वक जाग्रत होना उसे निद्रानिद्रा कहते है। खडे खडेकों तथा बैठे बैठेकों निद्रा आवे उसे प्रचला नामकि निद्रा कहते है। चलते फीरतेकों निद्रा आवे उसे प्रचला प्रचला नामकि निद्रा कहते हैं। दिनको या रात्रीमें चितवन (विचाराहुवा) किया कार्य निद्राके अन्दर कर लेते हो उसको स्त्यानर्द्धि निद्रा कहते है. एवं च्यार दर्शन और पांच निद्रा मीलाने से नौ प्रकृति दर्शनावर्णियकर्मकि है।

(३) वेदनियकर्म—मधुलीप्त छुरी जैसे मधुका स्वाद मधुर है परन्तु छुरीकी धार तीक्षण भी होती है इसी माफीक जीवोंको शातावेदनि सुख देती है मधुवत् और असातावेदनि दुःख देती है छुरीवत् जीसकि उत्तर प्रकृति दोय है सातावेदनिय, असातावेदनिय, जीवोंको शरीर-कुटुम्ब धन धान्य पुत्र कलत्रादि अनुकुल सामग्री तथा देवादि पौद्‌गलीक सुख प्राप्ति होना उसे सातावेदनियकर्म प्रकृतिका उदय कहते है और शरीरमें रोग निर्धनता पुत्र कलत्रादि प्रतिकुल तथा नरकादि के दुःखोका अनुभव करना उसे असातावेदनियकर्म प्रकृति कहते है।

(४) मोहनियकर्म-मदिरापान कीया हुवा पुरुष बेभान हो जाते है फीर उनको हिताहितका ख्याल नहा रहते है इसी माफीक मोहनियकर्मोदयसे जीव अपना स्वरूप भूल जानेसे उसे हिताहितका ख्याल नही रहता है जिस्के दो भेद है दर्शनमोहनिय सम्यकत्व गुणको रोके और चारित्रमोहनिय चारित्र गुणको रोके जीसकि उत्तर प्रकृति अठावीस है जिस्का मूल भेद दोय है (१) दर्शनमोहनिय (२) चारित्र मोहनिय जिस्मे दर्शनमोहनिय कर्मकि तीन प्रकृति है (१) मिथ्यात्वमोहनीय (२) सम्यकत्व मोहनिय (३) मिश्रमोहनिय जैसे एक कोद्रव नामका

स्थंभ सादृश, माया वांसकी जड सादृश, लोभ करमजी रेसमके रंग सादृश घात करे तो सम्यक्त्वगुणकि स्थिति यावत् जीवकि, गति करें तों नरककि ॥ अप्रत्याख्यानि क्रोध तलावकि तड, मान दान्तकास्थंभ, माया मेंढाका शृंग, लोभ नगरका कीच, घात करे तो श्रावकके व्रतोंकि स्थिति एक वर्षकि, गति तीर्यंच कि ॥ प्रत्याख्यानि क्रोध गाडाकी लीक, मान काष्टका स्थंभ, माया चालता बैलकामूत्र, लोभ नेत्रोंकि अञ्जन घात करे तों सर्व व्रतकि, स्थिति करे तो च्यार मासकि, गति करें तों मनुष्यकी ॥ संज्वलनका क्रोध पाणीकी लीक, मान तृणका स्थंभ, मायावांसकी छाल लोभ हलदिका रंग, घात करे तो वीतरागपणाकों, स्थिति क्रोधकी दो मास मानकी एक मास, मायाकी पन्दरा दिन, लोभको अन्तर मुहुर्त, गति करे तो देवतावोंमें जावें, इन सोलह प्रकारकी कषायको कषाय मोहनिय कहते है

नौ नोकषाय मोहनिय हास्य-कतुहल मस्करी करना। भय-डरना विस्मय होना। शोक-फीकर चिंता आर्तध्यान करना। जुगुप्सा-ग्लानी लाना नफरत करना। रति आरंभादिकार्योंमें खुशी लाना। अरति-संयमादि कार्योंमे अरति करना। स्त्रीवेद-जिस प्रकृतिके उदय पुरुषोंकि अभिलाषा करना। पुरुषवेद जिस प्रकृतिके उदय स्त्रियोंकि अभिलाषा करना। नपुंसक वेद जिस प्रकृतिके उदय स्त्रि-पुरुष दोनोंकि अभिलाष करना ॥ एवं २८ प्रकृति, मोहनियकर्मकी है।

(५) आयुष्य कर्मकि च्यार प्रकृति है यथा-नरकायुष्य, तीर्यंचायुष्य, मनुष्यायुष्य, देवायुष्य । आयुष्यकर्म जैसे कारागृहकी मुदत हो इतने दिन रहना पडता है इसी माफीक जोस गतिका आयुष्य हो उसे भोगवना पडता है।

(६) नामकर्म चित्रकार शुभ और अशुभ दोनों प्रकारके

चित्रोंका अवलोकन करता है इसी माफीक नामकर्मोदय जीवोंको शुभाशुभ कार्यमें प्रेरणा करनेवाला नामकर्म है जीसकी एकसो तीन (१०३) प्रकृतियों है।

(क) गतिनामकर्मकि च्यार प्रकृतियों है नरकगति, तीर्यंचगति मनुष्यगति, देवगति। एक गतिसे दुसरी गतिमें गमनागमन करना उसे गतिनामकर्म कहते है।

(ख) जातिनाम कर्म कि पांच प्रकृति है एकेन्द्रिय जाति, बेइन्द्रिय० तेइन्द्रिय० चोरिन्द्रिय० पंचेन्द्रिय जाति नाम।

(ग) शरीर नामकर्मकि पांच प्रकृति है औदारिक शरीर वैक्रिय० आहारीक० तेजस० कारमण शरीर०। प्रतिदिन नाशविनाश होनेवालोंको शरीर कहते है।

(घ) अंगोपांग नामकर्मकि तीन प्रकृति है. औदारिक शरीर अंग उपांग, वैक्रिय शरीर अंगोपांग आहारीक शरीर अंगोपांग, शेष तेजस कारमन शरीरके अंगोपांग नही होते है।

(ङ) बन्धन नामकर्मकि पंदरा प्रकृति है-शरीरपणे पौद्गल ग्रहन करते है और उनोंको शरीरपणे बन्धन करते है यथा-औदारीक औदारीकका बन्धन, १ औदारीक तेजसका बन्धन, २ औदारीक कारमणका बन्धन ३ औदारीक तेजस कारमणका बन्धन. ४ वैक्रिय वैक्रियका बन्धन ५ वैक्रिय तेजसका बन्धन, ६ वैक्रियकारमणका बन्धन. ७ वैक्रिय तेजस कारमणका बन्धन ८ आहारीक आहारीकका बन्धन९, आहारीक तेजसका बन्धन. १० आहारीक कारमणका बन्धन. ११ आहारीक तेजस कारमणका बन्धन १२ तेजस तेजसका बन्धन, १३ तेजस कारमणका बन्धन. १४ कारमणकारमणका बन्धन १५. एवं १५।

(च) संघातन नाम कर्म कि पांच प्रकृति है जो पौद्गल शरीरपणे ग्रहन कीया है उनोंको यथायोग्य अवयवपणे मजबुत बनाना।

जैसे औदारिक संघातन, वैक्रियसंघातन, आहारीक संघातन, तैजस संघातन कारमण संघातन।

(छ) संहनन नामकर्मकि छे प्रकृति है. शारीरकि हाडत और हाडकि मजबुतिको संहनन कहते है यथा वज्र ऋषभनाराच संहनन। वज्रका अर्थ है खीला. ऋषभका अर्थ है पाट्टा, नाराचका अर्थ है दोनों तर्फ मर्कट याने कुदीयाके आकार दोनों तर्फ हडी जुडी हुइ अर्थात दोनों तर्फ हड्डीका मीलना उसके उपर एक हडीका पट्टा और इन तीनोंमें एक खीली हो उसे वज्रऋषभ नाराच संहनन कहते है॥ नाराच संहनन-उपरवत् परन्तु बीचमें खीली न हो. नाराच संहनन इसमें पट्टा नहीं है। अर्द्ध नाराच संहनन-एक तर्फ मर्कट बन्ध हो दुसरी तर्फ खीली हो। किलीका संहनन-दोनों तर्फ अनुक्रमिक मालीक एक हडीमें दुसरी हडी फसी हुइ हो। छेवट्ठ संहनन-आपस में हड्डीयों जुडी हुइ है॥

(ज) संस्थाननामकर्मकि छे प्रकृतियों है-शारीरकी आकृतिको संस्थान कहते है समचतुरस्र संस्थान-पाल्हठीमार के (पद्मासन) बेठनेसे च्यारों तर्फ बराबर हो जान दोनों जानुके बिचमें अन्तर है इसका ही दोनों स्कन्धोंके विचमें। इसका ही एक तर्फसे जानु और स्कन्धका अन्तर हो उसे समचतुरस्र संस्थान कहते है। निग्रोध परिमंडल संस्थान नाभीके उपरका भाग अच्छा सुन्दर हो और नाभीके निचेका भाग हिन हो। सादि संस्थान-नाभीके निचेका विभाग सुन्दर हो नाभीके उपरका भाग खराब हो। कुब्ज संस्थान-हाथ पैर शिर गर्दन अवयव अच्छा हो परन्तु छाती पेट पुंठ खराब हो। वामन संस्थान हाथ पैरादि छोटे छोटे अवयव खराब हो। हुंडक संस्थान-सर्व शरीर अवयव खराब अप्रमाणिक हो।

(झ) वर्णनामकर्मकि पांच प्रकृति है-शारीरक जो पुद्गल स्कन्ध है उन पुद्गलोंका वर्ण श्वेत पुद्गलसे निपजे, रक्त

पेतवर्ण, श्वेतवर्ण जीयोंकि जिस वर्ण नाम कर्मोदय होते हैं वेसा वर्ण मीलता है।

(ञ) गन्ध नामकर्मकि दो प्रकृति है—सुभिगन्धनाम कर्मोदयसे सुभिगन्धके पुद्गल मीलते हैं दुर्भिगन्धनाम कर्मोदयसे दुर्भिगन्धके पुद्गल मीलते हैं।

(ट) रस नामकर्मकि पांच प्रकृति है—पूर्ववत् शरीरके पुद्गल तिक्तरस, कटुकरस, कषायरस, अम्लरस, मधुररस, जैसे रस कर्मोदय होता है वेसे ही पुद्गल शरीरपणे ग्रहन करते हैं।

(ठ) स्पर्श नामकर्मकि आठ प्रकृति है जिस स्पर्श कर्मका उदय होता है वेसे स्पर्शके पुद्गलोंको ग्रहन करते है जैसे कर्कश, मृदुल, गुरु, लघु, शित, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष।

(ड) अनुपूर्वि नामकर्मकि च्यार प्रकृतियों है एक गतिसे मरके जीव दुसरी गतिमें जाता हुवा विग्रह गति करते समयानुपूर्वि, प्रकृति उदय हो जीवको उत्पत्तिस्थान पर ले जाते हैं जैसे वेचा हुवा बहलको धणी नाथ गालके लेजावे जीस्का च्यार भेद नरकानुपूर्वि, तीर्यचानुपूर्वि, मनुष्यानुपूर्वि, देवआनुपूर्वि।

(ढ) विहायगति नामकर्मकि दो प्रकृतियों है जिस कर्मोदयसे अच्छी गजगामिनी गति होती है उसे शुभ विहायगति कहते है और जिन कर्मोदयसे उंट खरवत् खराब गति होती है उसे अशुभ विहायगति कहते है। इन चौदा प्रकारकि प्रकृतियोंकि पिंड प्रकृति कही जाती है अब प्रत्येक प्रकृति कहते हैं।

पराघातनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे कमजोरको तो क्या परन्तु बडे बडे सत्ववाले योद्धोंको भी एक छीनकमें पराजय कर देते है।

उश्वासनाम—शरीरकि बाहीरकि हवाको नासीकाद्वारा

शरीरके अन्दर खींचना उसे श्वास कहते है और शरीरके अन्दरकी हवाको बाहर छोडना उसे निश्वास कहते है ।

आतपनाम—इस प्रकृतिके उदयसे स्वयं उष्ण न होनेपर भी दुसरोंको आतप मालुम होते है यह प्रकृति 'सूर्य' के वैमानके जो बादर पृथ्वीकाय है उनोंके शरीरके पुदगल है वह प्रकाश करता है, यद्यपि अग्निकायके शरीर भी उष्ण है परन्तु वह आतप नाम नही किन्तु उष्ण स्पर्श नामका उदय है ।

उद्योतनाम—इस प्रकृतिके उदयसे उष्णता रहीत-शीतल प्रकृति जेसे चन्द्र ग्रह नक्षत्र तारोंके वैमानके पृथ्वी शरीर है तथा देव और मुनि वैक्रिय करते है तब उनोंका शितल शरीर भी प्रकाश करता है । आगीया-मणि-औषधियों इत्यादिको भी उद्योत नामकर्मका उदय होता है ।

अगुरुलघुनाम—जीस जीवोंके शरीर न भारी हो कि अपनेसे समाला न जाय. न हलका हो कि हवामें उड जावे याने परिमाण संयुक्त हो शीघ्रता से लिखना हलना चलनादि हरेक कार्य कर सके उसे अगुरुलघु नाम कहते है ।

जिननाम—जिस प्रकृतिके उदय से जीव तीर्थंकर पद को प्राप्त कर केवलज्ञान केवलदर्शनादि ऐश्वर्य संयुक्त हो अनेक भव्यात्माओंका कल्याण करे ।

निर्माणनाम—जिस प्रकृतिके उदय जीवोंके शरीरके अंगोपांग अपने अपने स्थानपर व्यवस्थित होते हो जेसे सुतार चित्रकार, पुतलीयोंके अंगोपांग यथास्थान लगाते है इसी माफीक यह कर्म प्रकृति भी जीवोंके अवयव यथास्थान पर व्यवस्थित बना देती है ।

उपघातनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे जीवों को अपने ही

अवयव से तकलीफों उठानी पडे जेसे मस ननूर हो जीभों अधिक दान्त होठों से बाहार निकल जाना अंगुलीयों अधिक इत्यादि। इन आठ प्रकृतियोंको प्रत्येक प्रकृति कहते हैं अब त्रसादि दश प्रकृति बतलाते है।

त्रसनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे त्रसपणा याने बेइन्द्रिया-दिपणा मीले उसे त्रसनाम कहते है।

बादरनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे बादरपणा याने जिसको छदमस्थ अपने चरमचक्षुसे देख सके यद्यपि बादर पृथ्वीका-यादि एकेक जीव के शरीर दृष्टिगोचर नहीं होते हैं. तथपि उनोंके बादर नाम कर्मोदय होनेसे असंख्याते जीवोंके शरीर एकत्र होनेसे दृष्टिगोचर हो सक्ते हैं परन्तु सूक्ष्म नामकर्मो-दयवाले असंख्यात शरीर एकत्र होनेपर भी चरमचक्षुवालों के दृष्टिगोचर नहीं होते है।

पर्याप्त नाम—जिस जातिमें जितनि पर्याप्ती पाती हो उनोंको पूरण करे उसे पर्याप्तनाम कहते हैं पुद्गल ग्रहन करनेकि शक्ति पुद्गलोंको परिणमानेकि शक्तिको पर्याप्ति कहते हैं।

प्रत्येक शरीर नाम—एक शरीरका एक ही स्वामी हो अर्थात् एकेक शरीरमें एकेक जीव हो उसे प्रत्येक नाम कहते है। साधारण वनस्पति के सिवाय सब जीवोंको प्रत्येक शरीर है.

स्थिर नाम—शरीर के दान्त हड्डी ग्रीवा आदि अवयव स्थिर मजबुत हो उसे स्थिरनामकर्म कहते है।

शुभनाम—नाभी के उपरका शरीरको शुभ कहते हैं जैसे हस्तादिका स्पर्श होनेसे अप्रीति नहीं है किन्तु पैरोंका स्पर्श होते ही नाराजी होति है।

सुभाग नाम—कीसीपर भी उपकार किया विगर ही लोगों के प्रीतीपात्र होना उसको सुभागनाम कर्म कहते है। अथवा सौभाग्यपणा सदेव बना रहना युगल मनुष्यवत्.

सुस्वर नाम—मधुरस्वर लोगोंको प्रीय हो पंचमस्वरवत्

आदेय नाम—जिनोंका वचन सर्वमान्य हो आदर सत्कारसे सर्व लोग मान्य करे।

यशःकीर्ति नाम—एक देशमें प्रशंसा हो उसे कीर्ति कहते है और बहुत देशोंमें तारीफ हो उसे यशः कहते है अथवा दान तप शील पूजा प्रभावनादिसे जो तारीफ होती है उसे कीर्ति कहते है और शत्रुवोंपर विजय करनेसे यशः होता है। अब स्थावरकि दश प्रकृति कहते है।

स्थावर नाम—जिस प्रकृतिके उदयसे स्थिर रहे याने शरदी गरमीसे बच नही सके उसे स्थावर कहते है जेसे *पृथ्व्यादि पांच स्थावरपणे में उत्पन्न होना।*

सूक्ष्म नाम—जिस प्रकृति के उदयसे सूक्ष्म शरीर-जो कि छद्मस्थोंके दृष्टिगोचर होवे नहीं कीसीके रोकनेपर रूकावट होवे नही. खुदके रोका हुवा पदार्थ रूक नही सके। वैसे सूक्ष्म पृथ्व्यादि पांच स्थावरपणेमें उत्पन्न होना।

अपर्याप्ता नाम—जिस प्रकृतिमें जितनी पर्याय पावे उनोंसे कम पर्यायवान्धके मर जावे, अथवा पुद्गल ग्रहनमें असमर्थ हो।

साधारण नाम अनंत जीव एक शरीरके स्वामि हो अर्थात् एक ही शरीरमें अनंत जीव रहते हो कन्दमूलादि.

अस्थिर नाम-दान्त हाड कान जीभ ग्रीवादि शरीरके अवयवों अस्थिर हो-चपल हो उसे अस्थिर नाम कर्म कहते है।

अशुभनाम—नामीके नीचेका शरीर पैर विगेरे जोंकि दुन-

कोई स्पर्श करनेकी नाराजी आदि तथा अच्छा कार्य करनेपरभी नाराजी करे इत्यादि।

दुर्भागनाम—कोसीपे. पर उपकार करनेपरभी अप्रीय लगे तथा इष्टवस्तुओंका वियोग होना।

दुःस्वरनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे ऊंट. गर्दभ जैसा खराब स्वर हो उसे दुःस्वरनाम कर्म कहते हैं।

अनादेयनाम—जिनका वचन कोइभी न माने याने आदर करनेयोग्य वचन होनेपरभी कोइ आदर न करे।

अयशःकीर्तिनाम—जिस कर्मोदयसे दुनियोंमें अपयश—अ-कीर्ति फैले, याने अच्छे कार्य करनेपरभी दुनियों उनोंको भला न देवे बुराइयोंही करती रहै इति नामकर्मकी १०३ प्रकृति हैं।

(७) गोत्रकर्म—कुंभकार जैसे घट बनाते हैं उसमें उच्च पदार्थ घृतादि और निच पदार्थ मदीरा भी भरे जाते हैं इसी माफीक जीव अट मदादि करनेसे निच गोत्र तथा अमदसे उच्च गोत्रादि प्राप्त करते हैं इसलिये दो प्रकृति हैं उच्चगोत्र, निचगोत्र जिस्में इक्ष्वाकुवंश हरिवंश चन्द्रवंशादि जिस कुलके अन्दर धर्म और नीतिका रक्षण कर चीरकालसे प्रसिद्धि प्राप्ति करी हो उसकार्य कलंक करनेवालोंको उच्च गोत्र कहते हैं और इनसे विपरीत हो उसे निचगोत्र कहते हैं।

(८) अन्तरायकर्म—जैसे राजाका भंडारी—अगर राजा हुकमभी कर दीया हो तोभी वह भंडारीको इनाम देनेमें विलम्ब करता है इसी माफीक अन्तराय कर्मोदय दानादि कर नहीं सकते हैं तथा वीर्य—पुरुषार्थ कर नहीं सके इसलिये पांच प्रकृति हैं। (१) दानअंतराय—जैसे देनेकि वस्तुभी मौजूद है, दान लेनेवाला उत्तम गुणवान पात्र मौजूद है. परन्तु उनोंको आत्मा

हो, परन्तु दान देनेमें उत्साह न वढे यह दानांतराय कर्मका उदय है.

दातार उदार हो दानकी चीजों मौजुद हो आप याचना करनेमें कुशल हो परन्तु लाभ न हो तथा अनेक प्रकारके व्यापारादिमें प्रयत्न करनेपरभी लाभ न हो उसे लाभान्तराय कहते है।

भोगवने योग्य पदार्थ मौजुद है उस पदार्थोंमे वैराग्यभाव भी नही है न नफरत आति है परन्तु भोगान्तराय कर्मोदयसे कोसी कारणसे भोगव नहीं सके उसे भोगान्तराय कहते है जो वस्तु एक दफे भोगमें आति हो अमानादि।

उपभोगान्तराय-जो स्त्रि वस्त्र भूषणादि वारवार भोगनेमें आवे एसी सामग्री मोजुद हो तथा त्यागवृत्ति भी नहो तथापि उपभोगमें नहीं ली जावे उसे उपभोगान्तराय कहते है।

वीर्यान्तराय-रोग रहीत शरीर बलवान सामर्थ्य होनेपरभी कुच्छभी कार्य न कर सके अर्थात् वीर्य अन्तराय कर्मोदयसे पुरुषार्थ करनेमें वीर्य फोरनेमें कायरोंकी माफीक उत्साह रहित होते है उठना बेठना हलना चलना बोलना लिखना पढना आदि कार्य करनेमें असमर्थ हो वह पुरुषार्थ कर नही सकते है उसे वीर्य अन्तरायकर्म कहते है इन आठों कर्मोंकी १५८ प्रकृतिको कंठस्थ कर फीर आगेके थोकडेमें कर्मबन्धनेका कर्म तोडनेके हेतु लिखेंगे उसपर ध्यान दे कर्मबन्धके कारणोंको छोडनेका प्रयत्न कर पुराणे कर्मोंको क्षय कर मोक्षपद प्राप्त करना चाहिये इति।

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्

—※—

थोकडा नम्बर ४२

(कर्मोंके बन्धहेतु)

कर्मबन्धके मूलहेतु चार हैं यथा-मिथ्यात्व (५) अव्रति (१२) कषाय (२५) योग (१५) एवं उत्तर हेतु ५७ जिसद्वारा कर्मोंके दल एकत्र हो आत्मप्रदेशोंपर बन्धन होते हैं यह विशेष वर्णन है परन्तु यहांपर सामान्य कर्मबन्धहेतु लिखते हैं। जैसे ज्ञानावर्णिय कर्मबन्धके कारण इस माफीक है

ज्ञान या ज्ञानवान् व्यक्तियोंसे प्रतिकूल आचरण या उनोंसे वैर भाव रखना जीसके पास ज्ञान पढा हो उनका नाम को गुप्त रख दुसरोंका नाम कहना, या जो विषय आप जानता हो उनको गुप्त रख कहनाकि मैं इस बातको नहि जानता हूं। ज्ञानी-योंका तथा ज्ञान और ज्ञानके साधन पुस्तक विद्या-मन्दिर पाटी पोथी टवणी वस्त्रादिका जलसे या अग्निसे नष्ट करना या उसे छिपाव कर अपने उपभोगमें लेना ज्ञानीयोंपर तथा ज्ञानसाधन पुस्तकादिपर प्रेम स्नेह न करके अरुची रखना। विद्यार्थीयोंके विद्याभ्यासमें विघ्न पहुंचाना जैसे कि विद्यार्थीयोंके भोजन वस्त्र स्थानादिका उनको लाभ होता हो तो उसे अन्तराय करना या विद्याध्ययन करते हुवोंको छोडा के अन्य कार्य करवाना। ज्ञानी-योंकि आशातना करना करवाना जैसे कि यह अल्पमती नीच कुलके है या उनोंके मर्म की बातें प्रकाश करना ज्ञानीयोंको मा-लाम्य वह हो एसे जाल रचना मिथ्या करना इत्यादि। इसी प्र-कार विरोध ज्ञान हेतु करनेवाले. पढना पढानेवाले गुरुका विनय न करना झुठा हाथोंसे तथा थुकसे पुस्तकके पन्नोंका उलटना ज्ञानके साधन पुस्तकादिको पैरोंसे हटाना

पुस्तकोंमे नकीयेका काम लेना। पुस्तकों कों भंडारमें पडे पडे सडने देना किन्तु उनोंका सद्उपयोग न होने देना उदरपोषणके लक्षमे रखकर पुस्तके वेचना इनोंके सिवाय भी ज्ञान द्रव्यकि आमदको तोडना ज्ञानद्रव्यका भक्षण करना इत्यादि कारणोंसे ज्ञानावर्णीय कर्मका वन्ध होता है अगर उत्कृष्ट वन्ध हो तो तीस कोडाकोड सागरोपम के कर्म वन्ध होनेसे इतनेकाल तक कीसी कीस्मका ज्ञान हो नहीं सक्ते है वास्ते मोक्षार्थी जावोंको ज्ञान आशातना टालके ज्ञानकी भक्ति करना-पढनेवालोंको साहिता देना पढनेवालोंको साधन वस्त्र भोजन स्थान पुस्तकादि देना।

(२) दर्शना वरणीय कर्मवन्धका हेतु-दर्शनी साधु भगवान तथा जिनमन्दिर जैनमूर्ति जैन सिद्धान्त यह सब दर्शनके कारण है इनोंकी अभक्ति आशातना अवज्ञा करना तथा साधन इन्द्रियों-का अनिष्ट करना इत्यादि जसे ज्ञानविणिय कर्म वन्धके हेतु कहा है इसी माफीक स्वल्पही दर्शनावर्णियकर्मका भी समजना। वन्ध और मोक्षमें मुख्य कारण आत्मा के परिणाम है वास्ते ज्ञान और ज्ञानसाधना तथा दर्शनी (साधु) और दर्शन साधनोंके सन्मुख अप्रीती अभक्ति आशातना दीखलाना यह कर्मवन्धके हेतु है वास्ते यह वन्धहेतु छोडके आत्माके अन्दर अनंत ज्ञानदर्शन भरा हुवा है उनको प्रगट करनेका हेतु है उनोंसे प्रेमस्नेह और अन्तमें रागद्वेषका क्षयकर अपनि निज वस्तुवोंके प्राप्त कर लेना यहही विद्वानोंका काम है

(३) वेदनियकर्म दो प्रकारसे वन्धता है (१) सातावे-दनिय (२) असातावेदनिय--जिस्मे सातावेदनियकर्मवन्धके हेतु जैसे गुरुओंकी सेवा भक्ति करना अपनेसे जो श्रेष्ट है वह गुरु जैसे माता पिता धर्माचार्य विद्याचार्य कलाचार्य जेष्ट भ्रातादि क्षमा करना याने अपनेमे वदला लेनेकी सामर्थ्य होनेपर भी

अपने साथ बुरा वरताव करनेवालेको सहन करना। दया—दीन दुःखीयोंके दुःख दूर करनेकि कोसीस करना। अनुव्रतोंके तथा महाव्रतोका पालन करना अच्छा सुयोगध्यान मौन और दश प्रकार साधु समाचारीका पालन करना -कषायोंपर विजय प्राप्त करना—अर्थात् क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष ईर्षा आदिके वेगोंसे अपनि आत्माको बचाना—दान करना-सुपात्रोंको आहार वस्त्रादिका दान करना—रोगीयोंको औषधि देना जो जीव भयसे व्याकुल हो रहे है उने भयसे छुडाना विद्यार्थीओंको पुस्तकें तथा विद्याका दान करना अन्य दानसे भी बडके विद्यादान है। कारण अन्नसे क्षणमात्र तृप्ती होती है। परन्तु विद्यादानसे चीरकाल तक सुखी होता है—धर्ममें अपनि आत्माको स्थिर रखना बाल वृद्ध तपस्वी और आचार्यादिकि वैयावच्च करना इत्यादि यह सब सातावेदनिय बन्धका हेतु है। इन कारणोंसे विप्रीत वरताव करनेसे असातावेदनिय कर्मको बन्धे है जैसेकि गुरुयोंका अनादर करे अपने उपर कीये हुवे उपकारोंका बदला न देवे उल्टा अपकार करे क्रूर प्रणाम निर्दय अविनय क्रोधी व्रत खंडित करना कृपण सामग्री पावे भी दान न करे धर्मके कार्येमें बेपरवा रखे हस्ती अश्व बेहेलों पर अधिक बोजा डालनेवाला अपने आपको तथा औरोंको शोक संतापमें डालनेवाला इत्यादि हेतुवोंसे असातावेदनिय कर्मका बन्ध होता है।

(४) मोहनियकर्मबन्धके हेतु—मोहनियकर्मका दो भेद है (१) दर्शनमोहनिय (२) चारित्रमोहनिय जिसमें दर्शन मोहनीयकर्म जैसे—उन्मार्गका उपदेश करना जिनकृत्योंसे संसारकि वृद्धि होती है उनकृत्योंके विषयोंमें इस प्रकारका उपदेश करना कि यह मोक्षके हेतु है जैसेकि देवी देवोंके सामने पशुवोंकी हिंसा करनेसे पुन्यकार्य मानना। एकान्त ज्ञान या

पुस्तकोंसे तकीयेका काम लेना। पुस्तकों को भंडारमें पडे पडे सडने देना किन्तु उनोंका सदुउपयोग न होने देना उदरपोषणके लक्षसे रखकर पुस्तकें वेचना इनोंके सिवाय भी ज्ञान द्रव्यकि आमदको तोडना ज्ञानद्रव्यका भक्षण करना इत्यादि कारणोंसे ज्ञानावर्णीय कर्मका बन्ध होता है अगर उत्कृष्ट बन्ध हो तो तीस कोडाकोड सागरोपम के कर्म बन्ध होनेसे इतनेकाल तक कीसी कीस्मका ज्ञान हो नहीं सकते है वास्ते मोक्षार्थी जीवोंको ज्ञान आशातना टालके ज्ञानकी भक्ति करना-पढनेवालोंको साहिता देना पढनेवालोंको साधन वस्त्र भोजन स्थान पुस्तकादि देना।

(२ दर्शना वरणीय कर्मबन्धका हेतु-दर्शनी साधु भगवान् तथा जिनमन्दिर जैनमूर्ति जैन सिद्धान्त यह सब दर्शनके कारण है इनोंकी अभक्ति आशातना अवज्ञा करना तथा साधन इन्द्रियों-का अनिष्ट करना इत्यादि जैसे ज्ञानविर्णिय कर्म बन्धके हेतु कहा है इसी माफीक स्वरूप हो दर्शनावर्णियकर्मका भी समझना। बन्ध और मोक्षमें मुख्य कारण आत्मा के परिणाम है वास्ते ज्ञान और ज्ञानसाधना तथा दर्शनी (साधु) और दर्शन साधनोंके सन्मुख अर्थात् अभक्ति आशातना होनेवाला यह कर्मबन्धके हेतु है वास्ते यह बन्धहेतु छोडके आत्माके अन्दर अनंत ज्ञानदर्शन भरा हुवा है उसको प्रगट करनेका हेतु है उनोंसे प्रेमस्नेह और अन्तमें रागद्वेषका क्षयकर अपनि निज वस्तुवोंको प्राप्त कर लेना यहही विद्वानोंका काम है

(३) वेदनियकर्म दो प्रकारसे बन्धता है (१) साताबेदनिय (२) असातावेदनिय -जिस्में सातावेदनियकर्मबन्धके हेतु जैसे गुरुओंकी सेवा भक्ति करना अपनेसे जा ज्येष्ट है यह गुरु जैसे माता पिता धर्माचार्य विद्याचार्य कलाचार्य सेठ साहारि अमर करना यावे अपनेसे बदला लेनेकी सामर्थ्य होनेपर भी

क्रियासे ही मोक्षमार्ग मानना मोक्षमार्गका अभ्दा करना याने नास्ति है इस लोक परलोक पुन्य पाप आदिकी. नास्ति करना खाना पीना ऐस आराम भोग विलास करनेका उपदेश करना इत्यादि उपदेश दे भद्रीक जीवोंको सम्मार्गसे पतितकर उन्मार्ग के सन्मुख करवा देना. जिनेन्द्रभगवानकी या भगवानके मूर्तिकि तथा चतुर्विध संघकि निंदा करने समवसरण—चम्र छत्रादिका उपभोग करनेवालेमें वीतरागत्व हो ही न सके इत्यादि कहना— जिनप्रतिमाकी निंदा करना पूजा प्रभावना भक्तिके हानि पहुं-चना सूत्र सिद्धान्त गुरु या पूर्वाचार्योंकी तथा महान् ज्ञानसमुद्र जैसे ग्रन्थोकी निंदा करना यह सर्व दर्शन मोहनियकर्म बन्धके हेतु है जिनोंसे अनंतकाल तक वीतरागका धर्म मीलनाभी अ-संभव हो जाता है।

चारित्र मोहनिय कर्म बन्धके हेतु—जैसे चारित्रपर अभाव लाना. चारित्रवन्त कि निंदा करना मुनि के मल-मलीन मात्र वस्त्र देख दुर्गच्छा करना खराब अध्यावसाय रखना. व्रत करके खंडन करना विषय भोगों कि अभिलाषा करना यह सब चारित्र मोहनीयकर्म बन्धका हेतु है जिस चारित्र मोहनियका दो भेद है (१) कषाय चारित्र मोहनिय (२) नोकषाय चारित्र मो-हनीय-जिस्मे कषाय चारित्र मोहनिय जैसे अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ करनेसे अनन्तानुबन्धी आदिका बन्ध एवं अ-प्रत्याख्यानी—प्रत्याख्यानी और संज्वलन इनोंके करनेसे कषाय चारित्र मोहनीय कर्मबन्धता है तथा भांड जैसी कुचेष्टा करना हांसी करना कतूहल करना दुसरोंकी हांसी विस्मय कराना इत्यादि इनोंसे हास्य मोहनिय कर्मबन्ध होता है। आरंभमें खुशी माननेवाला, मेला खेला देखनेवाला चक्षुलोलुपी देशदेशके नया नया नाटक देखना चित्रचित्रामादि खींचना प्रेमसे दुसरोंके

मन करने के वाधिन करना इत्यादिसे रति मोहनिय कर्म ब-
न्धता है। ईर्षालु-पापाचरणा-कुतर्कोंके सुखमें विघ्न करनेवाले
बुरे कर्ममें दूसरेको उत्साही बनानेवाला रुदनादि करणा क-
र्ममें उत्साहा रहित इत्यादि हेतुवोंसे अरति मोहनिय कर्मबन्ध
होते है। खुद डरे औरोंके डरावे त्रास देनेवाला दया रहित
मायावी पापाचारी इत्यादि भयमोहनिय कर्मबन्ध करता है।
खुद शोक करे दुसरोंको शोक करावे चिन्ता देनेवाला विश्वास-
घात स्वामिद्रोही दुष्ट करनेवाला—शोकमोहनियकर्म बन्धता
है। महात्माओंके निंदा करे चतुर्विध संघके निंदा करे जिन-
प्रतिमाके निंदा करनेवाला जीव दुगन्छा मोहनिय कर्म बन्धता
है। विषयाभिलाषी परस्त्रि सेवन कुचेष्टा करनेवाला हावभावसे
दुसरोंसे ब्रह्मचर्यसे भ्रष्ट करनेवाला जीव स्त्रिवेद बन्धता है।
सरल स्वभावी-स्वदारा संतोषी सदाचारवाला मंद विषयवाला
जीव पुरुषवेद बन्धता है। स्त्रीयोंका शील खंडन करनेवाला
तीव्र विषयाभिलाषी कामचेष्टासे बालक स्त्रि-पुरुषोंके कामादि
पुरुष अभिलाष करनेवाला नपुंसक वेद मोहनियकर्म बन्धता
है इन सब कारणोंसे जीव मोहनीयकर्म उपार्जन करता है।

(५) आयुष्य कर्मबन्धके कारण—जैसे रौद्र ध्यानी महा-
रंभ. महा परिग्रह पांचेन्द्रियका घाती. मांसाहारी. परदाराग-
मन विश्वासघाती. स्वामिद्रोही इत्यादि कारणोंसे जीव नरकका
आयुष्य बान्धता है। मायावृत्ति करना. कुड माया करना कुड
तोल माप कूडे लेख लिखना. झूठी साख देना परजीवोंको ठग
ठीक पहुंचाना दुसरेका धन छीन लेना इत्यादि कारणोंसे जीव
तीर्यचका आयुष्य बान्धता है। प्रकृतिका भद्रीक होना विनय-
वान् होना-स्वभावसेही जिनोंका क्रोध मान माया लोभ पतला
हो दुसरोंके संपति देख इर्षा न करे भद्रीक दयावान् होनेका

गांभीर्य सर्व जमसे प्रिति गुणानुरागी उदार परिणामि इत्यादि कारणोंसे जीव मनुष्यका आयुष्य बन्धता है। सराग संयम, संयमासंयम अकाम निर्जरा बाल तपस्वी देवगुरु मातापिता-दिका विनय भक्ति करे देव पूजन सत्यका पक्ष गुणोंका रागी निष्कपटी संतोषी ब्रह्मचर्य व्रत पालक अनुकम्पा सहित धमर्मो-पासक शास्त्रारागी भोग त्यागी इत्यादि कारणोंसे जीव देवा-युष्य बान्धता है।

(६) नामकर्मकि दो प्रकृति है (१) शुभनामकर्म (२) अशुभ नामकर्म जिस्मे सरल स्वभावी-माया रहित मन वचन काया वे-गार जिस्का पदसा हो वह जीव शुभनामको बन्धता है गौधरहित रानेऋद्धिगौर्य रसगौर्य. सातागौर्य इन तीनों गौर्वसे रहित होना पापसे डरनेवाला क्षमावान्त मर्दवादि गुणोंसे युक्त परमेश्वरकि भक्ति गुरु वन्दन तत्पश्च राग द्वेष पतले गुणगृही हो। पसे जीव शुभ नामकर्म उपार्जन कर सकते है। दुसरा अशुभ नामकर्म-जैसे मायावी जिनोंकि मन वचन कायाकि आचारणा में और बतलाने में भेद है। दुसरों के ठगनेवाले जूटी गवाही देनेवाले। घृत में चरबी दुद्ध में पाणी या अच्छी वस्तु में बुरी वस्तु मीला के बेचने वाले। अपभि तारीफ और दुसरोंकी निंदा करनेवाले वैश्यावों के वस्त्रालंकार दे दुसरे को ब्रह्मव्रत से पतित बनानेवाले इत्यादि देवद्रव्य ज्ञानद्रव्य साधारणद्रव्य खानेवाले विश्वासघात करने वाले इत्यादि कारणो से जीव अशुभ नामकर्म उपार्जन कर सं-सार में परिभ्रमन करते है.

(७) गौत्रकर्म कि दो प्रकृति है (१) उच्चगौत्र २) निचगौत्र-जिस्मे किसी व्यक्ति में दोषों के रहते हुवे भी उनका विषय में उदासीन सिर्फ गुणो को ही देखनेवाले है। आठ प्रकार के मदों से रहित अर्थात् जातिमद, कुलमद, बलमद, चोथो रुपमद, सुत-

मद, ऐश्वर्यमद, लाभमद, तपमद इन मदों का त्याग करे अर्थात्
यह आठों प्रकार के मद न करे। हमेशां पठन पाठन में जिनका
अनुराग हो देवगुरु की भक्ति करनेवाला हो दुःखी जीवों को देख
अनुकम्पा करनेवाला हो इत्यादि गुणोंसे जीव उच्चगोत्र का बन्ध
करता है और इन कृत्यों से विपरीत वरताव करने से जीव निच
गोत्र बन्धता है अर्थात् जिनमें गुणदृष्टि न होकर दोषदृष्टि है
जाति कुलादि आठ प्रकार के मद करे पठन पाठन में प्रमाद
आलस्य-घृणा होती है आशातना का करनेवाला है ऐसे जीव
निचगोत्र उपार्जन करते हैं

(८) अंतराय कर्म के बन्ध हेतु-जो जीव जिनेन्द्र भगवान
की पूजा में विघ्न करते हों-जैसे जल पुष्प अग्नि फल आदि
चढाने से हिंसा होती है वास्ते पूजा न करना ही अच्छा है
तथा हिंसा झूठ चोरी मैथुन रात्रीभोजन करनेवाले ममत्वभाव
रखनेवाले हों तथा सम्यक् ज्ञानदर्शन चारित्ररूप मोक्षमार्ग में
दोष दिखलाकर भद्रीक जीवों को सद्मार्ग से भ्रष्ट बनानेवाले हों
दूसरों को दान लाभ भोग उपभोग में विघ्न करनेवाले हों। मंत्र
तंत्र यंत्र द्वारा दूसरों कि शक्ति को हरन करनेवाले हों इत्यादि
कारणों से जीव अन्तराय कर्म उपार्जन करते हैं

उपर लिखे माफीक आठ कर्मों के बन्ध हेतु के सम्यक् प्र-
कारे समझ के सदैव इन कारणों से बचते रहना और पूर्व उपा-
र्जन कीये हुवे कर्मों को तप जप संयम ज्ञान ध्यान भावनादिक
प्रभावना आदि कर हटा के मोक्ष को प्राप्ति करना चाहिये।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नम्बर ४३

(कर्म प्रकृति विषय.)

ज्ञानगुण दर्शनगुण चारित्रगुण और वीर्यगुण यह च्यार चैतन्य के मूल गुण है जिस्कों कोनसी कर्म प्रकृति चैतन्य के सर्व गुणों कि घातक है और कोनसी कर्म प्रकृति देश गुणों कि घातक है यह इस थोकडा द्वारा बतलाते है ।

कैवल्यज्ञानावर्णिय कवल्य दर्शनावर्णिय मिथ्यात्व मोहनिय. निद्रा, निद्रा निद्रा, प्रचलानिद्रा, प्रचलाप्रचलानिद्रा, स्त्यानर्द्धि निद्रा अनंतानुबन्धी क्रोध-मान-माया-लोभ, अप्रत्याख्यानि क्रोध-मान-माया-लोभ, प्रत्याख्यानि क्रोध-मान-माया-लोभ. एवं २० प्रकृति सर्व घाती है ।

मतिज्ञानावर्णिय श्रुतिज्ञानावर्णिय अवधिज्ञानावर्णिय मनः पर्यवज्ञानावर्णिय-चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षुदर्शनावर्णिय अवधि दर्शनावर्णिय संज्वलनका क्रोध-मान-माया लोभ-हास्य भय शोक जुगप्सा रति अरति स्त्रिवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद दांनान्तराय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय वीर्यान्तराय एवं २५ प्रकृति देशघाती है तथा मिश्रमोहनिय. सम्यक्त्वमोहनिय यह दो प्रकृति भी देशघाती है ।

शेष प्रत्येक प्रकृति आठ, शरीरपांच, अंगोपांगतीन, संहनन छे, संस्थान छे, गतिच्यार, जातिपांच, विहायोगति दो, अनुपूर्वी आयुष्यच्यार त्रसकिदश स्थावरकिदश, वर्णादिच्यार, गौत्रकि २ प्रकृति एवं ७३ प्रकृति अघाती है ।

थोकडा नंम्बर ४१ में आठ कर्मो कि १५८ प्रकृति है जिस्में

१२२ प्रकृतियोंका उदय समुच्चय होते हैं जिस्मे २० प्रकृति सर्व घाती हैं २७ प्रकृति देशघाती हैं ७३ प्रकृति अघाती हैं इस्को लक्षमें लेके उदय प्रकृतिको समझना चाहिये।

उदय प्रकृति १२२का विपाक अलग २ कहते हैं।

(१) क्षेत्र विपाकी च्यार प्रकृति हैं जोकि जीव परभव गमन करते समय विग्रह गतिमें उदय होती है जिस्के नाम नरकानुपूर्वि तीर्यचानुपूर्वी मनुष्यानुपूर्वी और देवानुपूर्वी।

(२) जीव विपाकी. जिस प्रकृतियोंके उदयसे विपाकरस जीवको अधिकांश भोगवते समय दुःख सुख होते हैं। यथा—ज्ञानावर्णिय पांच प्रकृति. दर्शनावर्णिय नौप्रकृति. मोहनिय अठावीस प्रकृति अन्तरायकि पांच प्रकृति गौत्र कर्मकि दो प्रकृति: वेदनिय कर्मकि दो प्रकृति—सातावेदनिय—असातावेदनिय. तीर्थकर नामकर्म त्रसनाम बादरनाम पर्यातानाम स्थावरनाम सूक्ष्मनाम अपर्यातानाम सौभाग्यनाम दुर्भाग्यनाम सुस्वरनाम दुःस्वरनाम आदेयनाम अनादेयनाम यशःकीर्तिनाम अयशःकीर्तिनाम उश्वासनाम एकेन्द्रिय जातिनाम बेइन्द्रिय जातिनाम तेइन्द्रिय० चोरिंद्रय० पांचेन्द्रिय नरकगतिनाम तीर्यचगतिनाम मनुष्य गतिनाम देवगतिनाम सुविहागतिनाम असुविहागतिनाम. एवं ७८ प्रकृति जीवविपाकी है।

(३) भवविपाक जैसे नरकायुष्य तीर्यचायुष्य मनुष्यायुष्य और देवायुष्य एवं च्यार प्रकृति भवप्रत्यय उदय होती हैं।

(४) पुद्गलविपाकी प्रकृतियों। यथा-निर्माण नाम स्थिर नाम अस्थिर नाम शुभनाम अशुभ नाम वर्णनाम गन्धनाम रसनाम स्पर्शनाम अगारु लघु नाम औदारीक शरीर नाम वैक्रयशरीर नाम आहारीक शरीर नाम तेजस शरीर नाम कारमण

शरीर नाम तीन शरीरके आंगोपांग नाम छे संहनन छे संस्थान उपघात नाम साधारण नाम प्रत्येक नाम उद्योत नाम आताप नाम पराघात नाम एवं ३६ प्रकृतियां पुद्गल विपाकी है एवं ४-७८-४-३६ कुध १२२ प्र० उदय।

परावर्तन प्रकृतियों-एक दुसरे के बदलेमें बन्ध सके-यथा शरीरतीन आंगोपांगतीन संहनन छे संस्थान छे जातिपांच गति-च्यार विहागतिदो अनुपूर्वीच्यार वेदतीन दोयुगलकि च्यार कषा-यशोला उद्योत आताप उच्चगौत्र निचगौत्र वेदनिय-साता-असाता निद्रापांच त्रसकीदश स्थावरकीदश नरकायुष्य तीर्यचायुष्य मनुष्यायुष्य देवायुष्य एव ९१ प्रकृति परावर्तन है।

शेष ५७ प्रकृति अपरावर्तन याने जीसकी जगह वह ही प्रकृति बन्धती है उसे अपरावर्तन कहते है। शेष आगे चोथा कर्मग्रंथाधिकारे लिखा जावेगा

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

—✻—

थोकडा नंबर ४४

(कर्म ग्रंथ दूसरा)

मूल कर्म आठ है जिनकी उत्तर प्रकृति १४८× जिनके नाम थोकडा नं० ४२ में लिख आये हैं वहां देख लेना उन १४८ प्रकृतियोंमें से बंध, उदय, उदीरणा, और सत्ता किस ५ गुण-स्थान में कितनी २ प्रकृतियांकी है सो लिखते है.

(प्र) गुणस्थानक किसे कहते है ?

× श्री प्रज्ञाप्ना सूत्रानुसार १४८ प्रकृति है और कर्मग्रन्थानुसार १५८ परन्तु दोनु मतानुसार बन्ध प्रकृति १२० है वह ही अधिकार यह चलेगा।

(उत्तर) जिस तरह शिव (मोक्ष) मंदिर पर चढने के लिये पावडिया (सीढी) हैं उसी तरह कर्म शत्रु को विदारने के लिये जीव के शुद्ध. शुद्धतर, शुद्धतम अध्यवसाय विशेष. यद्यपि अध्यवसाय असंख्याते हैं. परन्तु स्थूल याने व्यवहार नयसे १४ स्थान कहे हैं यथा मिथ्यात्व १ सास्वादन २ मिश्र ३ अविरति सम्यकदृष्टि ४ देशविरति ५ प्रमत्त संयत ६ अप्रमत्त संयत ७ निवृति बादर ८ अनिवृत्ति बादर ९ सुक्ष्म संपराय १० उपशांत मोह वीतराग ११ क्षीणमोह वीतराग छद्मस्थ १२ सयोगी केवली १३ और अयोगी केवली १४ यह चवदे गुणस्थानक हैं

पहिले बताई हुई १४८ प्रकृतियों में से वर्णादिक १६ पांच शरीरका बंधन ५ संघातन ५ और मिश्र मोहनीय १ सम्यक्त्व मोहनीय १ एवम् २८ प्रकृति कम करनेसे शेष १२० प्रकृतिका समुचय बंध है।

(१) मिथ्यात्व गुणस्थानक में १२० प्रकृतियोंमें से तीर्थंकर नामकर्म १ आहारक शरीर २ आहारक अंगोपांग ३ तीन प्रकृतियोंका बंध विच्छेद होनेसे बाकी ११७ प्रकृतियोंका बंध है.

(२) सास्वादन गुणस्थानक में नरक गति १ नरकायुष्य २ नरकानुपूर्वी ३ एकेन्द्रि ४ बेइन्द्री ५ तेइन्द्री ६ चौरिन्द्री ७ स्थावर ८ सूक्ष्म ९ साधारण १० अपर्याप्ता ११ हुंडक संस्थान १२ आतप १३ छेवट्ठं संघयण १४ नपुंसक वेद १५ मिथ्यात्व मोहनीय १६ ये सोला प्रकृति का बंध विच्छेद होनेसे १०१ प्रकृति का बंध है.

(३) मिश्र गुणस्थानकमें पूर्वकी १०१ प्रकृति में से त्रियंचगति १ त्रियंचायुष्य २ त्रियंचानुपूर्वी ३ निद्रा निद्रा ४ प्रचला प्रचला ५ थीणद्धी ६ दुर्भाग्य ७ दुःस्वर ८ अनादेय ९ अनंतानुबन्धी क्रोध १० मांन ११ माया १२ लोभ १३

ऋषभ नाराच संघयण १४ नाराचसंघयण १५ अर्द्ध नाराच सं० १६ कीलिका सं० १७ न्यग्रोध संस्थान १८ सादि संस्थान १९ वामन सं० २० कुब्ज सं० २१ नीचगोत्र २२ उद्योत नाम २३ अशुभविहायोगति २४ स्त्री वेद २५ मनुष्यायु २६ देवायुः २७ सत्ताईस प्रकृति छोडकर शेष ७४ का बंध होय.

(४) अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थानक में मनुष्यायुष्य १ देवायुष्य २ तीर्थंकर नाम कर्म ३ यह तीन प्रकृतियोंका बंध विशेष करे इस वास्ते ७७ प्रकृति का बंध होय.

(५) देशविरति गुणस्थानक पूर्व ७७ प्रकृति कही उसमें से वज्रऋषभनाराचसंघयण १ मनुष्यायु २ मनुष्यगति ३ मनुष्यानुपूर्वी ४ अप्रत्याख्यानी क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ औदारिक शरीर ९ औदारिक अंगोपांग १० इन दश प्रकृतियों का अबंधक होने से शेष ६७ प्रकृति बांधे.

६ प्रमत्त संयत गुणस्थानक में प्रत्याख्यानी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ का विच्छेद होनेसे शेष ६३ प्रकृति बांधे.

(७ अप्रमत्त संयत गुणस्थानक में ५९ प्रकृतिका बंध है, पूर्व ६३ प्रकृति कही जिसमेंसे शोक १ अरति २ अस्थिर ३ अशुभ ४ अयश ५ असाता वेदनीय ६ इन छे प्रकृतियोंका बंध विच्छेद करे और आहारक शरीर १ आहारक अंगोपांग २ विशेष बांधे वास्ते ५९ प्रकृतिका बंध करे. अगर देवायुष्य न बांधे तो ५८ प्रकृतिका बंध क्योंकि देवायुष्य छट्ठे गुणस्थानकमें बांधता हुवा यहां आवे परन्तु सातवें गुणस्थानकमें आयुष्यका बन्ध शुरु न करे.

८) निवृत्ति बादर गुणस्थानक का सात भाग है जिसमें प्रथम भागमें पूर्ववत् ५८ का बंध, दूसरे भागमें निद्रा १ प्रचला २ का बंध विच्छेद होनेसे ५६ का बंध यो यावत् छट्ठे भाग तक. सातवें और

छठे भाग में भी ५६ प्रकृतिका बंध है. सातवें भागमें देवगति १ देवानुपूर्वी २ पंचेन्द्री जाति ३ शुभविहायोगति ४ त्रसनाम ५ बादर ६ पर्याप्ता ७ प्रत्येक ८ स्थिर ९ शुभ १० सौभाग्य ११ सुःस्वर १२ आदेय १३ वैक्रिय शरीर १४ आहारक शरीर १५ तेजस शरीर १६ कार्मण शरीर १७ वैक्रिय अंगोपांग १८ आहारक अंगोपांग १९ समचतुःस्र संस्थान २० निर्माण नाम २१ जिन नाम २२ वरण २३ गंध २४ रस २५ स्पर्श २६ अगुरुलघु २७ उपघात २८ पराघात २९ और उभ्वास ३० एवम् तीस प्रकृति का बंध विच्छेद होने से बाकी २६ प्रकृति बांधे.

(९) अनिवृत्ति गुणस्थानक का पांच भाग हैं. पहिले भाग में पूर्ववत् २६ प्रकृतिमेंसे हास्य १ रति २ भय ३ जुगुप्सा ४ ये चार प्रकृतिका बंध विच्छेद होकर बाकी २२ प्रकृति बांधे दूसरे भाग में पुरुषवेद छोडकर शेष २१ बांधे. तीजे भाग में संज्वलन का क्रोध १ चौथे भाग में संज्वलन का मान २ और पांचवे भाग में संज्वलनकी माया ३ का बंध विच्छेद होने से १८ प्रकृति का बंध होता है.

(१०) सूक्षम सम्पराय गुणस्थानक में संज्वलन के लोभका अबंधक है इसवास्ते १७ प्रकृतिका बंध होय.

(११) उपशांत मोह गुणस्थानक में १ शाता वेदनीय का बंध है. शेष ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ४ अंतराय ५ उच्चैगोत्र १ यशःकिर्ति १ इन १६ प्रकृतिका बंध विच्छेद हो.

(१२) क्षीणमोह गुणस्थानक में १ शाता वेदनीय बांधे.

(१३) सयोगी केवली गुणस्थानकमें १ शाता वेदनीय बांधे.

(१४) अयोगी गुणस्थानक में (अबंधक) बंध नहीं.

इति बंध समाप्त. सेवंभंते सेवंभंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नं. ४५

(उदय)

समुचय १४८ प्रकृति में से १२२ प्रकृति का ओघ उदय है. बंधकी १२० प्रकृति कही उसमें से समकित मोहनीय १ मिश्रमोहनीय २ ये दो प्रकृति उदयमें ज्यादा है क्योंकि इन दो प्रकृतियों का बंध नहीं होता परन्तु उदय है।

(१) मिथ्यात्व गुणस्थानक में ११७ का उदय होय क्योंकि *सम्यक्त्व मोहनीय १ मिश्रमोहनीय २ जिन नाम ३ आहारक* शरीर ४ आहारक अंगोपांग ५ ये पांच का उदय नहीं है.

(२) सास्वादनगुण० १११ प्र० का उदय है. मिथ्यात्व में ११७ का उदय था उसमें से सूक्ष्म १ साधारण २ अपर्याप्ता ३ आताप ४ मिथ्यात्व मोहनीय ५ और नरकानुपूर्वी ६ इन छ प्रकृतियोंका उदय विच्छेद हुवा.

(३) मिश्रगुण० में १०० प्रकृतिका उदय होय क्योंकि अनंतानुबन्धी चौक ४ एकेंद्री ५ विकलेंद्री ८ स्थावर ९ तिर्यंचानुपूर्वी १० मनुष्यानुपूर्वी ११ देवानुपूर्वी १२ इन बारे प्रकृतियोंका उदय विच्छेद होने से शेष ९९ प्रकृति रही. परन्तु मिश्रमोहनीय का उदय होय इस वास्ते १०० प्रकृतिका उदय कहा।

(४) *अविरती सम्यक्दृष्टी गुण० में १०४ का उदय होय* क्योंकि मनुष्यानुपूर्वी १ तिर्यंचानुपूर्वी २ देवानुपूर्वी ३ नरकानुपूर्वी ४ और सम्यक्त्व मोहनीय ५ इन पांच प्रकृतिका उदय विशेष होय और मिश्रमोहनीय का उदय विच्छेद होय. इस वास्ते १०४ प्रकृतिका उदय कहा.

(५) देशविरति गुण० में ८७ प्रकृतिका उदय होय क्यों

कि प्रत्याख्यानी चौक ४ त्रियंचानुपूर्वी ५ मनुष्यानुपूर्वी ६ नरक गति ७ नरकायुष्य ८ नरकानुपूर्वी ९ देवगति १० देवायुष्य ११ देवानुपूर्वी १२ वैक्रिय शरीर १३ वैक्रिय अंगोपांग १४ दुर्भाग्य १५ अनादेय १६ अयश १७ इन सबके प्रकृतियों का उदय नहीं होता.

(६) प्रमाद संयतगुण० में प्रत्याख्यानी चौक ४ त्रियंचगति ५ त्रियंचायुष्य ६ निचगोत्र ७ एवं आठ का उदय विच्छेद होने से शेष ७९ प्रकृति रही. आहारक शरीर १ आहारक अंगोपांग २ इन दो प्रकृतिका उदय विशेष होय इस वास्ते ८१ प्रकृतिका उदय होय.

(७) अप्रमत्त संयत गुण० में. थीणद्धी त्रिक ३ आहारक द्विक २ इन पांचका उदय न होय. शेष ७६ प्रकृति का उदय होय.

(८) निवृति बादर गुण- में सम्यक्त्व मोहनीय १ अर्द्ध नाराच सं० २ कीलिका सं० ३ छेवट्ठे स० ४ इन चार को छोडकर शेष ७२ प्रकृति का उदय होय.

(९) अनिवृति बादर गु० में हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ जुगुप्सा ५ भय ६ इनका उदय विच्छेद होने से शेष ६६ प्रकृति का उदय होय.

(१०) सूक्ष्म संपराय गुण० में पुरुषवेद १ स्त्रीवेद २ नपुंसक वेद ३ संज्वलना क्रोध ४ मान ५ माया ६ इन छः का उदय वि च्छेद होने से बाकी ६० प्रकृति का उदय होय.

(११) उपशांत मोह गुण० में संज्वलन लोभ का उदय विच्छेद हो बाकी ५९ का दय हो.

(१२) क्षीण मोह गुण० के दो भाग हैं पहिले भाग में ऋषभ नाराच और नाराच संघयण तथा दूसरे भाग में निद्रा

और मिश्रा मिश्र एवम् ४ प्रकृति का उदय विच्छेद होने से शेष ८५ का उदय होय.

(१३) सयोगी केवली गुण० में ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ४ अन्तराय ५ एवम् १४ प्रकृति का उदय विच्छेद होने से ४१ प्रकृति और तिर्थंकर नाम कर्म को मिलाकर ४२ प्रकृति का उदय होय.

(१४) अयोगी गुण० में १२ प्रकृति का उदय होय मनुष्य-गति १ मनुष्यायु २ पंचेन्द्री ३ सौभाग्य नाम कर्म ४ त्रस ५ बादर ६ पर्याप्ता ७ उच्चगोत्र ८ आदेय ९ यशकीर्ति १० तिर्थंकर नाम ११ वेदनी १२ ये बारे प्रकृतियों का उदय चरम समय विच्छेद होय. ॥ इति उदयद्वार समाप्तम् ॥

अब उदीरणा अधिकार कहते हैं. पहिले गुण स्थानक से छट्ठे गुण स्थानक तक जैसे उदय कहा वैसे ही उदीरणा भी कहना. और सात में गुण स्थानक से तेरमें गुण स्थानक तक जो २ उदय प्रकृति कही है उसमें से साता वेदनीय १ असाता वेदनीय २ और मनुष्यायु ३ ये तीन प्रकृति कम करके शेष प्रकृति रहे सो हरेक जगह कहना. चौदमें गुण स्थानकमें उदीरणा नहीं.

॥ इति उदीरणा समाप्तम् ॥

—※—

थोकडा नं. ८६

(सत्ता अधिकार)

(१) मिथ्यात्व गुण० में १४८ प्रकृति की सत्ता.

(२) सास्वादन गुण० में जिन नाम कर्म छोडकर १४७ प्रकृतिकी सत्ता रहती है

(३) मिश्र गुण० में पूर्ववत् १४७ प्र० की सत्ता होय.

चौथे अविरति सम्यक्दृष्टि गु० से ११ वे उपशांत मोह गु० तक संभव सत्ता १४८ प्रकृति की हैं. परन्तु आठवें गु० से ११ वें गु० तक उपशम श्रेणी करनेवाला अनंतानुबंधी ४ नरकायु ५ त्रियंचायु ६ इन छे प्रकृतियों की विसंयोजना करे इस वास्ते १४२ प्रकृति का सत्ता होय.

क्षायक सम्यक्दृष्टिअचरम सरीरी चौथे से सातवें गु० तक अनंतानुबंधी ४ सम्यक्त्वमोहनीय ५ मिथ्यात्वमोहनीय ६ मिश्रमोहनीय ७ इन सात प्रकृतियों को खपावे शेष १४१ प्रकृति सत्ता में होय.

क्षायक सम्यकृदृष्टि चरम शरीरी क्षपक श्रेणी करनेवालों के चौथे से नवमें (अनिवृति) गु० के प्रथम भाग तक १३८ प्रकृति की सत्ता रहे. क्योंकि पूर्व कही हुइ सात प्रकृतियों के सिवाय नरकायु १ त्रियंचायु २ देवायु ३ ये तीन भी सत्ता मे विच्छेद करना से।

क्षयोपशम सम्यक्त्व में वर्तता हुआ चौथे से सातवें गुण० तक १४५ प्रकृति की सत्ता होय क्योंकि चरम शरीरी है इसलिये नरकायु १ त्रियंचायु २ देवायु की सत्ता न रहे।

नवमें गुण० के दुसरे भागमें १२२ की सत्ता स्थावर १ सूक्ष्म २ त्रियच गति ३ त्रियंचानुपूर्वी ४ नरकगति ५ नरकानुपूर्वी ६ आताप ७ उद्योत ८ थीणद्धी ९ निद्रा निद्रा १० प्रचला प्रचला ११ एकेन्द्री १२ बेइन्द्री १३ तेरिन्द्री १४ चौरिन्द्री १५ साधारण १६ इन सोले प्रकृतियों की सत्ता विच्छेद होय.

नवमें गुण० के दुसरे भागमें ११४ प्रकृति की सत्ता प्रत्याख्यानी ४ और अप्रत्याख्यानी ४ इन ८ प्रकृति की सत्ता विच्छेद होय.

नवमें गु० के चौथे भाग में ११३ प्रकृति की सत्ता. नपुंसकवेदका विच्छेद हो.

नयमें गु० के पांचवें भाग में ११२ प्र० की मत्ता. स्त्रीवेद का विच्छेद हो.

नयमें गु० के छट्ठे भागमें १०६ प्र० की मत्ता. हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ जुगुप्सा ६ इन प्रकृतियों का सत्ता विच्छेद होय.

नयमें गु० के सातयें भाग में १०५ प्र० की मत्ता. पुरुषवेद निकला.

नयमें गु० के आठवें भागमें १०४ प्र० की मत्ता सज्वलन का क्रोध निकला

नयमें गु० के नयमें भाग में १०३ प्र० की सत्ता. संज्वलन का मान निकला

दशमें गु० १०२ की मत्ता हो. यहां मंज्वलन कि माया का विच्छेद हुआ.

इग्यारमे गु० में १०१ की मत्ता हो. यहां मंज्वलन के लोभकी मत्ता विच्छेद हुई.

बारमें गुण० में १०१ की मत्ता द्विचरम समयतक रहे हैं पीछे निद्रा १ प्रचला २ इन दो प्रकृतियों को क्षय करे चरम समय ९९ की सत्ता रहै।

[illegible]

चौदमें गुण० में पहिले समय ८५ की मत्ता रहै. पीछे देव गति १ देवानुपूर्वी २ शुभ विहायोगति ३ अशुभविहायोगति ४ गधद्विक ६ स्पर्श १४ वर्ण १९ रस २४ शरीर २९ बंधन ३४ संघातन ३९ निर्माण ४० संघयण ४६ अस्थिर ४७ अशुभ ४८ दुःभाग्य

४९ दुस्वर ५० अनादेय ५१ अयशः कीर्ति ५२ संस्थान ५८ अगुरु लघु ५९ उपघात ६० पराघात ६१ उश्वास ६२ अपर्याप्ता ६३ वेदनी ६४ प्रत्येक ६५ स्थिर ६६ शुभ ६७ औदारिक उपांग ६८ वैक्रिय उपांग ६९ आहारक उपांग ७० सुस्वर ७१ नीच्चैर्गोत्र ७२ इन बोहत्तर प्रकृतियों की सत्ता टलने से १३ की सत्ता रहे. फिर मनुष्यानुपूर्वी के विच्छेद होने से १२ प्रकृति की सत्ता चरम समय होय. इनको उसी समय क्षय करके सिद्ध गति को प्राप्त हो। बारह प्रकृतियों के नाम-मनुष्य गति १ मनुष्यायु २ त्रस ३ बादर ४ पर्याप्ती ५ यशः कीर्ति ६ आदेय ७ सौभाग्य ८ तीर्थंकर ९ उच्चगौत्र १० पंचेन्द्री ११ और वेदनी १२ इति सत्ता समाप्त

सेवं भंते सेवं भंते–तमेव सच्चम्.

—:०:—

थोकडा नं. ४७.

श्री पन्नवणाजी सूत्र. पद २३

(अबाधाकाल.)

कर्मकी मूल प्रकृति आठ है. और उत्तर प्रकृति १४८ है.× कौन जीव किस २ प्रकृतिको कितने २ स्थितिकी बांधता है, और बांधनेके बाद स्वभावसे उदयमें आवे तो. कितने कालसे आवे. यह सब इस थोकडेद्वारा कहेंगे.

अबाधाकाल उसे कहते हैं. जैसे हुंडीकी मुद्दत पकजानेपर

× कर्म ग्रन्थ मे पांच शरीर के बन्धन १५ कहा है वास्ते १५८ प्रकृति भी कहते हैं.

अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, इन सोलह प्रकृतियोंमेसे प्रथमकी १२ प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरोपमका सा तिया ४ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊणी. और संज्वलनका क्रोध २ महीना. मान १ महीना, माया १५ दिन और लोभ अंतर मुहूर्तका बांधे. उत्कृष्ट १६ प्रकृतिका स्थितिबंध ४० क्रोडाक्रोडी सागरोपम. और अबाधाकाल ४ हजार वर्षका है ॥ यही सोलह प्रकृति एकेन्द्री जघन्य १ साग० बेइन्द्री २५ सा० तेइन्द्री ५० साग० चोरिन्द्री १०० साग० असंज्ञी पंचेन्द्री १ हजार साग० पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊणी सबै स्थान और उत्कृष्ट सब जीव पूरी २ बांधे संज्ञी पंचेन्द्री १२ प्रकृति जघन्य अंतः क्रोडाक्रोडी सागरोपम तथा ४ प्रकृति पहिले लिखी उस मुजब बांधे. और उत्कृष्ट सोलहो प्रकृतिका स्थितिबंध तथा अबाधाकाल समुच्चय जीववत् समझना।

भय १ शोक २ दुगुच्छा ३ अरति ४ नपुंसक वेद ५ नरकगति ६ तिर्यंचगति ७ एकेन्द्री ८ पंचेन्द्री ९ औदारिक शरीर १० " बंधन ११ अंगोपांग १२ और संघातन १३ वैक्रियशरीर १४ बन्धन १५ अंगोपांग १६ तथा संघातन १७ तैजस शरीर १८ " बंधन १९ संघातन २० कारमण शरीर २१ कारमण शरीरका बंधन २२ तस्य संघातनका २३ छेवट्ठसंहनन २४ हुंडक संस्थान २५ कृष्ण वर्ण २६ तिक्तरस २७ दुरभिगंध २८ कर्कश स्पर्श २९ गुरु स्पर्श ३० शीत स्पर्श ३१ रुक्ष स्पर्श ३२ नरकानुपूर्वी ३३ तिर्यंचानुपूर्वी ३४ अशुभगति ३५ उश्वास ३६ उद्योत ३७ आतप ३८ पराघात ३९ उपघात ४० अगुरु लघु ४१ निर्माण ४२ त्रस ४३ बादर ४४ पर्याप्ता ४५ प्रत्येक ४६ अस्थिर ४७ अशुभ ४८ दुर्भाग्य ४९ दुःस्वर ५० अयश ५१ अनादेय ५२ स्थावर ५३ और नीच गोत्र

२४ एवम् चौबीस प्रकृति मनुष्य जीव बांधे तो. जघन्य १ सागरो-
पमका सातीया २ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊंनो और
उत्कृष्ट २० कोडाकोडी सागरोपम अबाधाकाल २ हजार वर्षका
हो. यही प्रकृति एकेन्द्री जघन्य १ साग० बेइन्द्री २५ साग०
तेइन्द्री ५० साग० चौरिन्द्री १०० साग० असंज्ञी पंचेन्द्री १०००
साग० पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊंनी. सर्व स्थान और उत्कृष्ट
पूरी बांधे. संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अंत: कोडाकोडी साग० उत्कृष्ट
मनुष्यवत्.

हास्य १ रति २ पुरुषवेद ३ देवगति ४ वज्रऋषभ नाराच
संघयन ५ समचतुरस्र संस्थान ६ लघु स्पर्श ७ मृदुस्पर्श ८
उष्ण स्पर्श ९ स्निग्ध स्पर्श १० श्वेतवर्ण ११ मधुरस १२ सुरभि-
गंध १३ देवानुपूर्वी १४ शुभगति १५ स्थिर १६ शुभ १७ सौभाग्य
१८ सुस्वर १९ आदेय २० यश:कीर्ति २१ उच्चैर्गोत्र २२ एवम् २२
प्रकृति जिसमें पुरुषवेद ८ वांहा. यश कीर्ति और उच्चैर्गोत्र
इन दोनो प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति ८ मुहूर्त शेष १९ प्रकृति-
योंकी जघ० स्थिती एक सागरोपमका सातिया १ भाग पल्योपमके
असंख्यातमें भाग ऊंनी और २२ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति
१० कोडाकोडी सागरोपमकी बांधे अबाधाकाल १ हजार
वर्ष। एकेन्द्रीसे यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५०
१००—१००० साग० प० के० ऊंनी. संज्ञी पंचेन्द्री ३ प्रकृति मनु-
ष्यवत्. और १९ प्रकृति अंत: कोडाकोडी सागरोपम तथा उत्कृष्ट
स्थिति २२ प्रकृतिकी दश कोडाकोडी सागरोपम अबाधाकाल
एक हजार वर्षका है।

स्त्रीवेद १ सातावेदनीय २ मनुष्यगति ३ रक्तवर्ण ४ कषाय
रस ५ मनुष्यानुपूर्वी ६ इन छः प्रकृतियोंने सातावेदनीयका जघ-

[illegible]

स्थबन्ध १२ मुहूर्त और शेष पांच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध १ सागरोपमका सातिया १ ॥ भाग प० अ० उणी. उत्कृष्ट छ प्रकृतिका बन्ध १५ कोडाकोडी सागरोपम और अबाधाकाल १५ सौ वर्षका है. पकेन्द्री यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५० १००-१००० सा० और संज्ञी पंचेन्द्री शातावेदनीय जघन्य १२ मुहूर्त शेष पांच प्रकृति जघन्य अंत: कोडाकोडी साग० को बांधे. उत्कृष्ट बंध समुच्चयवत् ॥

बेइन्द्रिय १ तेइन्द्रिय २ चौरिन्द्रिय ३ सूक्ष्म ४ साधारण ५ अपर्याप्ता ६ कीलिकासंहनन ७ और कुब्जसंस्थान ८ ये आठ प्रकृतिका समुच्चय जीव जघन्य १ सागरोपमका पैतीसीया ९ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग उणी. और उत्कृष्ट १८ कोडाकोडी सागरोपमकी बांधे. अबाधाकाल १८०० वर्षका । पकेन्द्री यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५० १०० १००० सागरोप. प० संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अंत कोडाकोडी सागरोपम उत्कृष्ट समुच्चयवत्.
स्थबन्ध १२ मुहूर्त और शेष पांच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध १ सागरोपमका सातिया १॥ भाग प० अ० उणी. उत्कृष्ट छ

आहारक शरीर १ तस्य बंधन २ अंगोपांग ३ संघातन ४ और जिननाम ५ ये पांच प्रकृति समुच्चय बांधे तो, जघन्य अंतर-मुहूर्त उत्कृष्ट अंत: कोडाकोडी सागरोपम, एवम संज्ञी पंचेन्द्री ॥

मिथ्यात्व मोहनी समुच्चयजीव बांधे तो, जघन्यबंध १ साग-रोपम उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी साग० अ० काल ७ हजार वर्ष. पकेन्द्री यावत् पंचेन्द्री पूर्ववत्. और संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अंत: कोडाकोडी सागरोपम. उत्कृष्ट समुच्चयवत.

ऋषभनाराच संहनन १ न्यग्रोध संस्थान २ ये दो प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरोपमका पैतीसिया ३ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग उणी. उत्कृष्ट १२ कोडाकोडी सा-गरोपमकी बांधे, अबाधाकाल १२०० वर्ष. पकेन्द्री यावत असंज्ञी

पंचेन्द्री पूर्ववत्. संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अंतः कोडाकोडी सागरोपम. उत्कृष्ट समुच्चयवत्.

नाराच संहनन १ और सादि संस्थान २ ये दो प्रकृति जो समुच्चय जीव बांधे तो जघन्य १ सागरोपम के पेंतीसिया ७ भाग उत्कृष्ट १४ कोडाकोड सागरोपम अबाधाकाल १४०० वर्ष एकेन्द्री यावत् असज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् संज्ञी पंचेन्द्री जघन्य अन्तः कोडाकोड सागरोपम उत्कृष्ट पूर्ववत् ।

अर्द्ध नाराच संहनन और वामन संस्थान ए दो प्रकृति समुच्चयजीव बांधे तो ज० १ सागरोपम के पेंतीसीय ८ भाग० उ० १६ कोडाकोड सागरोपम-अबाधा काल १६०० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

नील वर्ण और कटुक रस ए दो प्रकृति समु० जीव बांधे तो जघन्य एक सागरोपम के अठावीसीया ७ भाग उ० १७॥ कोडाकोड सागरोपम अबाधा काल १७५० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

पेत्त वर्ण और आंबिल रस ए दो प्रकृति समु० जीव बांधे तो जघन्य एक सागरोपम के अठावीसीया ५ भाग उ० १२॥ कोडकोड सागरोपम अबाधाकाल १२५० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

नरकायुष्य और देवायुष्य ए दो प्रकृति, पंचेन्द्री बांधे तो जघन्य १०००० वर्ष उ० ३३ सागरोपम अबाधाकाल ज० अन्तर महुर्त उ० कोड पूर्व के तीजे भाग ।

तीर्यचायुष्य और मनुष्यायुष्य ए दो प्रकृति बांधे तो जघन्य अन्तर मुहुर्त उ० ३ पल्योपम अबाधाकाल ज० अन्तर० उ० कोड पूर्व के तीजे भाग इसी को कण्ठस्थ करो और विस्तार गुरुमुखसे सुनो।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

थोकडा नं. ४८.

श्री भगवतिसूत्र शतक ८ उ० १०

(कर्म विचार.)

लोकके आकाशप्रदेश कितने है ?

असंख्यात है.

एक जीवके आत्मप्रदेश कितने है ?

असंख्याते है. (जितने लोकाकाशके प्रदेश है, उतनेही एक जीवके आत्मप्रदेश है.)
कर्मोकी प्रकृति कितनी है ?

आठ यथा ज्ञानावर्णिय, दर्शनावर्णीय, वेदनी, मोहनी, आयुष्य, नाम, गोत्र, और अंतराय, नरकादि चोवीस दंडकके जीवोंके आठ कर्म है. परंतु मनुष्योंमें आठ, सात, और चार भी पाये जाते है. (वीतराग केवली कि अपेक्षा)

ज्ञानावर्णिय कर्मके अविभाग पलीछेद (विभाग) कितने है ?

अनंत है. एवम् यावत अंतरायकर्मोके नरकादि चोवीस दंडकमें कहना.

एक जीवके एक आत्मप्रदेशपर ज्ञानावर्णीय कर्मकी कितनी अवेढा पवेढा (कर्मोका आंटा जैसे तागलेपर सूतका आंटा) है ?

किसनेक जीवोंके है और किसनेक जीवोंके नहीं है (केवलीके नहीं.) जिस जीवोंके है. उनके नियमा अनंती २ है. एवम् दर्शनावर्णीय, मोहनी, और अंतरायकर्मोकी यावत् आत्माके असंख्यात प्रदेशोपर समझ लेना

एक जीवके एक आत्मप्रदेशपर वेदनी कर्मकी कितनी अवेढी पवेढा है ?

सर्व संसारी जीवोंके आत्मप्रदेशपर नियमा अनंता २ हैं. एवम् आयुष्य, नामकर्म, और गोत्रकर्मभी है. यावत् असंख्यात आत्मप्रदेशपर है. इसी माफीक २४ दंडकोंमें समझ लेना. कारण जीव और कर्मके बंधनका सम्बंध अनंत कालसे लगा हुवा है. और शुभाशुभ कार्य कारणसे न्यूनाधिक भी होता रहता है.

जहां ज्ञानावर्णीय है, वहां क्या दर्शनावरणीय है. एवम् यावत् अंतराय कर्म ?

नीचेके यंत्रद्वारा समझलेना. जहां (नि) हो वहां नियमा और (भ) हो वहां भजना (हो या न भी हो) समझना. इति

कर्मनाम.	ज्ञाना.	दर्श.	वेदनी	मोह.	आयु.	नाम.	गोत्र.	अंतराय.
ज्ञानावर्णीय	०	नि	नि	भ	नि	नि	नि	नि
दर्शनावरणीय	नि	०	नि	भ	नि	नि	नि	नि
वेदनीय	भ	भ	०	भ	नि	नि	नि	भ
मोहनीय	नि	नि	नि	०	नि	नि	नि	नि
आयुष्य	भ	भ	नि	भ	०	नि	नि	भ
नामकर्म	भ	भ	नि	भ	नि	०	नि	भ
गोत्रकर्म	भ	भ	नि	भ	नि	नि	०	भ
अंतराय	नि	नि	नि	भ	नि	नि	नि	०

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—:o:—

थोकड़ा नं० ४६

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २४)

(बांधतो बांधे)

मूल कर्म प्रकृति आठ है यथा ज्ञानावर्णीय, दर्शनावर्णीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम कर्म, गोत्र कर्म अन्तराय कर्म ॥

वेदनीय कर्मका बंध प्रथम से तेरहवा गुणस्थान तक है ॥ ज्ञानावर्णीय, दर्शना; नामकर्म, गोत्र, और अन्तराय ए पांच कर्मोंका बंध प्रथम से दशवां गुणस्थान तक है ॥ मोहनीय कर्मका बंध प्रथम से नवमा गुणस्थान तक है ॥ आयुष्य कर्मका बंध प्रथम से सातमा गुणस्थान तक है ॥

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधता हूवा सात कर्म (आयुः वर्ज) बांधे-आठ कर्म बांधे, छ कर्म बांधे (आयुः मोहनी वर्जके) एवं मनुष्य भी ७-८-६ कर्म बांधे। शेष नरकादि २३ दंडक सात कर्म बांधे आठ कर्म बांधे। इति।

समुच्चय घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधते हूये ७-८-६ कर्म बांधे जिसमें ७ ८ कर्म बांधनेवाला सास्वता और छे कर्म बान्धनेवाले असास्वता जिस्का भांगा ३.

(१) सात-आठ कर्म बांधनेवाले घणा (सास्वता) (२) सात-आठ कर्म बांधनेवाले घणा और छ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात-आठ कर्म बांधनेवाले घणा और छे कर्म बांधनेवाले भी घणा ॥

घणा नारकीका जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधता ७-८ कर्म बांधे जिसमें सात कर्म बांधनेवाले सास्वते और आठ कर्म बां-

धनेवाले असास्वता भांगा ३। (१) सात कर्म बांधनेवाले घणा (सास्वता है) (२) सात कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाले भी घणा इसी माफिक १० भुवनपति, ३ विकलेंद्री, तीर्यंच पांचेंद्री, व्यंतर देव, जोतीषि. और वैमानीक एवं १८ दंडक का ५४ भांगा समझना।

पृथ्व्यादि पांच स्थावर में ज्ञानावर्णीय कर्म बांधतां सात कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाले भी घणा। भांगा नहीं उठता है।

घणा मनुष्य ज्ञानावर्णीय कर्म बांधे तो ७-८-६ कर्म बांधे जिसमें सात कर्म बांधनेवाले सास्वता ८-६ कर्म बांधनेवाले असास्वते जिसका भांगा ९.

सात कर्म	आठ कर्म	छ कर्म	सात कर्म	आठ कर्म	छ कर्म
३ (घणा)	०	०	३ ,,	१	१
३ ,,	१	०	३ ,,	१	३
३ ,,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	३ ,,	३	३
३ ,,	०	३	एवं ९ भांगा हुवा.		

समुच्चय जीवोंका भांगा ३ अठारे दंडकका भांगा ५४ और मनुष्यका भांगा ९ सर्व मीलके ज्ञानावर्णीय कर्मका ६६ भांगा हुवा इति।

एवं दर्शनावर्णीय, नाम, गोत्र, अन्तराय. एवं चार कर्म ज्ञानावर्णीय सादृश होनेसे पूर्ववत् प्रत्येक कर्मका ६६ छाछट भांगा गीणनेसे ३३० भांगा हुवा।

समुचय एक जीव वेदनीय कर्म बांधता हुवा ७-८-६-१ कर्म बांधे. इसी माफिक मनुष्य भी ७-८-६-१ कर्म बांधे. शेष २३ दंडकके एक एक जीव ७-८ कर्म बांधे।

समुचय घणा जीव वेदनीय कर्म बाधता ७-८-६-१ बांधे. जिसमें ७-८-१ कर्म बांधनेवाले सास्वता और ६ कर्म बांधनेवाले असास्वता जिसका भांगा ३।

(१) ७-८-१ कर्म बांधनेवाला घणा (सास्वता)

(२) ७-८-१ का घणा और छ कर्म बांधनेवाला एक।

(३) ७-८-१ का घणा और छे कर्म बांधनेवाले घणा।

घणा नारकीका जीव वेदनीय कर्म बांधता ७-८ कर्म बांधे, जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले सास्वते और ८ कर्म बांधनेवाले असास्वते जिसका भांगा ३। (१) सात कर्म बांधनेवाले घणा। (२) सात कर्म बांधनेवाले घणा और ८ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात कर्म बांधनेवाले घणा ८ कर्म बांधनेवाले घणा। एवं १० भुवनपति ३ विकलेंद्री, तिर्यंच, पंचेंद्री, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक, नरकादि १८ दंडकमें तीन भांगा गीणतां ५४ भांगा हुवा।

पृथ्व्यादि पांच स्थावरमें सात कर्म बांधनेवाले घणा और ८ कर्म बांधनेवाले भी घणा वास्ते भांगा नहीं उठते है।

घणा मनुष्य वेदनीय कर्म बांधता ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७-१ कर्म बांधनेवाले घणा जिसका भाग ९

७-१ का	८	६	७-१ का	८	६
३ (घणा)	०	०	३ ,,	१	१
३ ,,	१	०	३ ,,	१	३
३ ,,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	३ ,,	३	३
३ ,,	०	३	एवं ९ भांगा		

समुच्चय जीवका भांगा ३ अठारे दंडकका ५४ मनुष्यका ९, सर्व ६६ भांगा हुवा इति ।

समुच्चय एक जीव मोहनीय कर्म बांधता ७-८ कर्म बांधे एवं २४ दंडक ।

समुच्चय घणा जीव मोहनीय कर्म बांधतां ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले घणा और आठ कर्म बांधनेवाले भी घणा इसी माफिक ५ स्थावर भी समझ लेना ।

घणा नारकीका जीव मोहनीय कर्म बांधतां ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले सास्वता ८ का असास्वता जिसका भांगा ३ ।

(१) सात कर्म बांधनेवाले घणा (सास्वता)

(२) ,, ,, ,, आठ बांधनेवाला एक

(३) ,, ,, ,, ,, घणा

एवं पांच स्थावर वर्जके १९ दंडकमें समझ लेना ५७ भांगा हुवा ।

समुच्चय एक जीव आयुष्य कर्म बांधतां नियमा ८ कर्म बांधे एवं नरकादि २४ दंडक इसी माफिक घणा जीव आश्री समुच्चय जीव और २४ दंडकमें भी नियम ८ कर्म बांधे इति ।

भांगा ११०-६६-५७ सर्व मीली २३३ भांगा हुवा ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्.

—⁂—

थोकडा नम्बर ५०

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २५)

(बांधतो वेदे)

मूल कर्म प्रकृति आठ यावत् पद २४ के माफिक समझना।

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधतो हुवा नियमा आठ कर्म वेदे कारण ज्ञानावर्णीय कर्म दशमा गुणस्थान तक बांधे है वहां आठ ही कर्म मोजुद है सो वेद रहा है एवं नरकादि २४ दंडक समझना।

समुच्चय घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बांधते हुवे नियमा आठ कर्म वेदे यावत् नरकादि २४ दंडकमें भी आठ कर्म वेदे।

एवं वेदनीय कर्म वर्जके शेष दर्शनावर्णीय, मोहनीय, आयुष्य नाम, गोत्र, अन्तराय कर्म भी ज्ञानावर्णीय माफिक समझना।

समुच्चय एक जीव वेदनीय कर्म बांधे तो ७-८-४ कर्मवेदे कारण वेदनीय कर्म तेरहवागुणस्थान तक बांधते है। एव मनुष्य भी समझना शेष २३ दंडक नियमा ८ कर्म वेदे।

समुच्चय घणा जीव वेदनी कर्म बांधते हुवे ७ ८-४ कर्म वेदे एवं मनुष्य। शेष २३ दंडक के जीव नियमा आठ कर्म वेदे।

समुच्चय जीव ७ ८-४ कर्म वेदे जिसमें ८ ४ कर्म वेदनेवाले सास्वता और ७ कर्म वेदने वाले असास्वता जिसका भांगा ३

(१) आठ कर्म और चार कर्म वेदनेवाले घणा

(२) ८-४ कर्म वेदनेवाले घणे सात कर्म वेदनेवाला एक

(३) आठ-चार कर्म वेदनेवाले घणा, और सात कर्म वेदनेवाले घणा एवं मनुष्यमें भी ३ भांगा समझना सर्व भांगा ६ हुआ इति

सेवंभंते सेवंभंते तमेवसच्चम्

थोकडा नम्बर ५१

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २६

(वेदता बांधे)

मूल कर्म प्रकृति आठ है यावत् पद २४ माफिक समजना

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतों हुवों ७-८-६-१ कर्म बांधे (कारण ज्ञानावरणीय बारहवां गुण स्थानक तक वेदे है) एवं मनुष्य शेष २३ दंडक ७-८ कर्म बांधे।

समुच्चय घणाजीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतो ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७-८ कर्म बांधनेवाला सास्वता और ६-१ कर्म बांधणेवाला असास्वता जिसका भांगा ९

७-८	६	१	७-८	६	१
३ (घणा)	०	०	३	१	१
३	१	०	३	१	३
३	३	०	३	३	१
३	०	१	३	३	३
३	०	३	एवं ९	भांगा	

एकेंद्रीका पांच दंडक और मनुष्य वर्जके शेष १८ दंडक में ज्ञानावर्णिय कर्म वेद तो ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ का सास्वता ८ का असास्वता जिसका भांगा ३

(१) सातका घणा (२) सातका घणा, आटको एक (३) सातका घणा और आठका भी घणा एवं १८ दंडक का भांगा ५४

एकेन्द्री में ७ का भी घणा और आठ कर्मबांधनेवाला भी

घणा मनुष्य में ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतां ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधने वाला सास्वता शेष ८-६-१ का असास्वता जिसका भागा २७

७ कर्म	८ कर्म	६ कर्म	१ कर्म	७ क.	८	६	१
(१) ३	०	०	०	(१५)३	३	०	३
(२) ३	१	०	०	(१६)३	०	१	१
(३) ३	३	०	०	(१७)३	०	१	३
(४) ३	०	१	०	(१८)३	०	३	१
(५) ३	०	३	०	(१९)३	०	३	३
(६) ३	०	०	१	(२०)३	१	१	१
(७) ३	०	०	३	(२१)३	१	१	३
(८) ३	१	१	०	(२२)३	१	३	१
(९) ३	१	३	०	२३)३	१	३	३
(१०)३	३	१	०	(२४ ३	३	१	१
(११)३	३	३	०	(२५)३	३	१	३
(१२)३	१	०	१	(२६)३	३	३	१
(१३)३	१	०	३	(२७)३	३	३	३
(१४)३	३	०	१		एवं भांगा		२७

एव दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना।

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदतां ७-८-६-१-० (अबाध) कर्म बान्धे एवं मनुष्य। शेष २३ दंडक ७-८ कर्म बांधे।

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-६-१-० जिसमें ७-८-१ का सास्वता और छ कर्म तथा अबांधे का असास्वता जिसका भागा ९।

घणा मनुष्य में ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतां ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधने वाला सास्वता शेष ८-६-१ का असास्वता जिसका भागा २७

७ कर्म	८ कर्म	६ कर्म	१ कर्म	७ क.	८	६	१
(१) ३	०	०	०	(१५) ३	३	०	३
(२) ३	१	०	०	(१६) ३	०	१	१
(३) ३	३	०	०	(१७) ३	०	१	३
(४) ३	०	१	०	(१८) ३	०	३	१
(५) ३	०	३	०	(१९) ३	०	३	३
(६) ३	०	०	१	(२०) ३	१	१	१
(७) ३	०	०	३	(२१) ३	१	१	३
(८) ३	१	१	०	(२२) ३	१	३	१
(९) ३	१	३	०	(२३) ३	१	३	३
(१०) ३	३	१	०	(२४) ३	३	१	१
(११) ३	३	३	०	(२५) ३	३	१	३
(१२) ३	१	०	१	(२६) ३	३	३	१
(१३) ३	१		३	(२७) ३	३	३	३
(१४) ३	३	०	१		एवं भांगा		२७

एव दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना।

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदतां ७-८-६-१-० (अबाध) कर्म बान्धे एवं मनुष्य। शेष २३ दंडक ७-८ कर्म बांधे।

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-६-१-० जिसमें ७-८-१ का सास्वता और छ कर्म तथा अबांधे का असास्वता जिसका भागा ९।

७ कर्म बांधने वाले सास्वते और ८-६ कर्म बांधने वाले असास्वते जिसका भांगा ९।

७ कर्म	८ कर्म।	६ कर्म	३	१	१
३ घणा	०	०	३ ,	१	३
३ ,,	१	०	३	३	१
३ ,,	३	०	३ ,,	३	३
३ ,,	०	१	सर्व भांगा ९		
३ ,,	०	३			

सर्व भांगा ज्ञानावर्णीय कर्म का ९-२४-२७ सर्व ६० इसी माफिक ७ कर्म का ६३० और मोहनीय कर्म का ३-५४-९ सर्व ६६ भांगा हुये। वेदते हुये बांधे जिसका कुल भांगा ६९६ भांगा हुवा इति।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नंबर ५२

(सूत्र श्रीपन्नवणाजी पद २७)

[वेद तो वेदे]

मूल कर्म प्रकृति आठ दाखम् पद २४ से समझना।

समु० एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतो ७-८ कर्म वेदे एवं मनुष्य छोड २३ दंडक मे नियमा ८ कर्म वेदे।

समु० घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदता ७-८ कर्म वेदे जिसमें ८ कर्म वेदने वाले सास्वते और ७ कर्म वेदने वाले असास्वता जिसका भांगा ३

(१) आठ कर्म वेदने वाले घणा.
(२) „　　　　„ सात का एक.
(३) „　　　　„ घणा.

मनुष्य वर्ज के शेष २३ दंडकमें नियमा ८ कर्म वेदे और मनुष्य में समुचय जीवकी माफिक भांगा ३ समझना इसी माफिक दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना.

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-४ कर्म वेदे एवं मनुष्य शेष २३ दंडक का जीव नियमा ८ कर्म वेदे

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-४ कर्म वेदे जिसमें ८ ४ कर्म वेदने वाले साश्वता और ७ कर्म वेदने वाले असाश्वता भांगा ३

(१) ८-४ का घणा (२) ८ ४ का घणा ७ को एक (३) ८-४ का घणा ७ का भी घणा एवं मनुष्य में भी ३ भांगा समझना. शेष २३ दंडक में वेदनीय कर्म वेदता नियमा ८ कर्म वेदे.

वेदनीय कर्म की माफिक आयुष्य, नाम गोत्र कर्म भी समझना

समु०एक जीव मोहनीय कर्म वेदता नियमा ८ कर्म वेदे एवं २४ दंडक समझना इसी माफिक घणा जीव भी ८ कर्म वेदे.

सर्व भांगा ज्ञानावर्णीयादि आठ कर्म में समुचयजीवका तीन तीन और मनुष्य का तीन तीन एवं ४८ भांगा हुवा इति

सेवं भन्ते सेवं भन्ते तमेव सचम्.

च्यारो थोकडे के भांगा

४९२ बांधता बांधे का भांगा　　१०६ वेदता बांधे का भांगा
६ बांधतो वेदे का भांगा　　४८ वेदता वेदे का भांगा

११०७

----(🙏)----

तेरह बोलों में वेदनी कर्म बांधने की नियमा शेष साता कर्म बांधने की भजना

(११) संयति १ सम्यक्त्व दृष्टि २ भव्य ३ अभावक ४ पर्यामा ५ परत ५ साकारोपयोग ७ अनाकारोपयोग ८ बादर ९ चरम १० और अचरम ११ इन ग्यारे बोलों में आठो कर्म बांधने की भजना.

(६) नो संयतिनोअसंयतिनोसंयतासंयति १ नो भव्याभव्य २ नोपर्यासानोअपर्यासा ३ नो परतापरत ४ अयोगी ५ और नो सुक्ष्म नो बादर ६ एवम् छे बोलोंमें किसी कर्मका बंध नहीं है (अबंधक)

(३) केवलज्ञान १ केवल दर्शन २ नो सन्नी नो असन्नी ३ इन तीनों में वेदनीय कर्म बांधनेकी भजना. बाकी सातों कर्मों का अबंध.

(२) असंज्ञी १ अनाहारी २ इन दोनों में सात कर्म बांधने की भजना आयुष्य कर्मका अबधक और (१) मिश्रदृष्टि में सातो कर्म बांधे आयुष्य न बांधे इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम्

—✻—

थोकडा नंबर ५४

श्री भगवतीजी सूत्र श० ८ उ० ८)

कर्मोका बंध

कर्मोका बंध जानने से ही उसको तोडनेका उपाय सरलतासे कर सकते है इसवास्ते शिष्य प्रश्न करता है कि—

द्वीसंयोगी भांगा १२

नोस्त्री	नोपुरुष	नोस्त्री	नो नपुंसक	नो पुरुष	नो नपुंसक
१		२		३	
१	१	१	१	१	१
१	३	१	३	१	३
३	१	३	१	३	१
३	३	३	३	३	३

चिन्ह (१) एक वचन (३) बहुवचन समजना

त्रिक संयोगी भांगा ८ ।

नोस्त्री.	नो पुरुष	नोनपुंसक	नोस्त्री.	नोपुरुष	नोनपुंसक
१	१	१	३	१	१
१	३	३	३	१	३
१	१	१	३	३	१
१	३	[illegible]	३	३	३

इति २६ भांगा हुवा अब आगे इर्यावही कर्म जो ८ भांगे नीचे लिखे है उनका बंध कहां २ होता है ? कौन सा जीव इण भांगा का अधिकारी है

(१)	बांधाथा	बांधता है,	बांधेगा,
(२)	बांधाथा,	बांधता है,	नबांधेगा,
(३)	बांधाथा,	नहीं बांधता है,	बांधेगा,
(४)	बांधाथा	नहीं बांधता है,	नबांधेगा,
(५)	नबांधाथा,	बांधता है	बांधेगा,
(६)	नबांधाथा	बांधता है,	नबांधेगा,
(७)	नबांधाथा,	नबांधता है,	बांधेगा,
(८)	नबांधाथा,	नबांधता है	नबांधेगा,

द्विसंयोगी भांगा १२

नोस्त्री	नोपुरुष	नोस्त्री	नो नपुंसक	नो पुरुष	नो नपुंसक
१		२		३	
१	१	१	१	१	१
१	३	१	३	१	३
३	१	३	१	३	१
३	३	३	३	३	३

चिन्ह (१) एक वचन (३) बहुवचन समझना

त्रिक संयोगी भांगा ८।

नोस्त्री.	नो पुरुष	नोनपुंसक	नोस्त्री.	नोपुरुष	नोनपुंसक
१	१	१	३	१	१
१	१	३	३	१	३
१	३	१	३	३	१
१	३	३	३	३	३

इति २६ भांगा यथा अब आठों इर्यावही कर्म जो ८ भांगे नीचे लिखे है उनका बंध कहां २ होता है ? कोन सा जीव इन भांगा का अधिकारी है

(१)	बांधाथा,	बांधता है,	बांधेगा,
(२)	बांधाथा,	बांधता है,	नबांधेगा,
(३)	बांधाथा,	नहीं बांधता है,	बांधेगा,
(४)	बांधाथा	नहीं बांधता है,	नबांधेगा,
(५)	नबांधाथा,	बांधता है	बांधेगा,
(६)	नबांधाथा	बांधता है,	नबांधेगा,
(७)	नबांधाथा,	नबांधता है,	बांधेगा,
(८)	नबांधाथा	नबांधता है	नबांधेगा,

है एक एक भगापेक्षी ७ भांगोंका जीव मिले छठा भांगो शून्य है समय मात्र बंधभावापेक्षा है।

ईर्यावहि कर्म क्या इन चार भांगों से बांधे? १ सादिसांत २ सादि अनंत ३ अनादि सांत ४ अनादि अनंत?

सादि सांत भांगे से बांधे. क्यों कि ईर्यावहि कर्म ११-१२-१३ वे गुणस्थानक के अंत समय तक बंधता है इसलिये आदि है और चौदमे गुणस्थानक के प्रथम समय बंध विच्छेद होने से अंत भी है बाकी तीन भांगे शून्य है.

ईर्यावहि कर्म क्या देश (जीवकापकदेश) से देश? ईर्यावहि कर्मदेश? बांधे १ या देश से सर्व २ या सर्व से देश ३ या सर्व से सर्व बांधे ४?

हां सर्व से सर्वका बंध हो सक्ता है बाकी-तीनों भांगे शून्य है इति ईर्यावहि कर्मबन्ध॥

सम्प्राय कर्म क्या नारकी, तिर्यंच, तिर्यंचणी मनुष्य मनुष्यणी, देवता, देवी, बांधे ४.

हां बांधे क्योंकि सम्प्राय कर्म का बंध पहिले गुणस्थानक से दशम गुणस्थानक तक है.

सम्प्राय कर्म क्या स्त्री, पुरुष नपुंसक या बहुत से स्त्री, पुरुष, नपुंसक बांधे.

हां सब बांधे भूतकाल में बहुत जीवोंने बांधा था. वर्तमान में बांधते है और भविष्य में कोइ बांधेगा कोइ न बांधेगा कारण मोक्षमें जानेवाले है.

सम्प्राय कर्म क्या अवेदी (क्षिणवेदेस्थान होनेवाले) बांधे?

हां, भूतकालमें बहुतसे जीवोंने बांधाथा और -?

शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, ये चार अघाती कर्म हैं (पाप पुण्य मिश्रित) इसलिये शास्त्रकारों ने प्रथम समुच्चय पापकर्म की पृच्छा अलग की है उपरोक्त ४७ बोलोंमेंसे कौन २ से बोलके जीव इन चार भांगों में से कौन २ से भांगों से पाप कर्म को बांधे. इस में मोहनीय कर्मकी प्रबलता है इसलिये उसके बंध विच्छेद होने से शेष कर्मों के विद्यमान होते हुए भी उनके बंध की विवक्षा नहीं की. क्योंकि उववाई पन्नवणा सूत्रमें भी मोहनीय कर्म परही शास्त्रकारों ने ज्यादा जोर दिया है कारण कि मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है. उस के क्षय होने से शेष तीन कर्मों का किंचित् भी जोर नहीं चलता, उपरोक्त सैतालीस बोलों में से समुच्चय जीव की पृच्छा करते हैं समुच्चयजीव १ शुक्ललेशी २ सलेशी ३ शुक्ल पक्षी ४ सज्ञानी ५ मतिज्ञानी ६ श्रुतज्ञानी ७ अवधिज्ञानी ८ मनःपर्यवज्ञानी ९ सम्यक्दृष्टि १० नो संज्ञा ११ अवेदी १२ सकषायी १३ लोभ कषायी १४ सयोगी १५ मनयोगी १६ वचनयोगी १७ काययोगी १८ साकार उपयोगी १९ अनाकार उपयोगी २० इन बीस बोलो के जीवों मे चारों भांगों मिलते हैं यथाः

(१) बांधा, बांधे, बाधसी, मिथ्यात्वादि, गुणठाणों अभव्य जीव. भूतकालमें बान्धा-बान्धे-बान्धसी.

(२) बांधा, बांधे, न बाधसी क्षपक श्रेणी चढ़ता हुआ नवमें गु० तक. बान्धे फीर मोक्ष जायगा-न बन्धसी.

(३) बांधा, न बांधे, बाधसी, उपशम श्रेणी. दशमें, इग्यार में गु० तक. वर्तमानमें नहीं बान्धते है

(४) बांधा, न बांधे, न बाधसी क्षपक श्रेणी दशमें गुण० तद्भव मोक्षगामी.

(२१) मिश्रदृष्टि दो भांगा से मीलता है १ २ जो। यथा—

शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, ये चार अघाती कर्म है (पाप पुण्य मिश्रित) इसलिये शास्त्रकारों ने प्रथम समुच्चय पापकर्म की पृच्छा अलग की है उपरोक्त ४७ बोलोंमेंसे कौन २ से बोलके जीव इन चार भांगों में से कौन २ से भांगों से पाप कर्म को बांधे. इस में मोहनीय कर्मकी प्रबलता है इसलिये उसके बंध विच्छेद होने से शेष कर्मों के विद्यमान होते हुए भी उनके बंध की विवक्षा नहीं की. क्योंकि उववाई पन्नवणा सूत्रमें भी मोहनीय कर्म परही शास्त्रकारों ने ज्यादा जोर दिया है कारण कि मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है. उस के क्षय होने से शेष तीन कर्मों का किंचित् भी जोर नहीं चलता, उपरोक्त सैतालीस बोलों में से समुच्चय जीव की पृच्छा करते है समुच्चयजीव १ शुक्ललेशी २ सलेशी ३ शुक्ल पक्षी ४ सज्ञानी ५ मतिज्ञानी ६ श्रुतज्ञानी ७ अवधिज्ञानी ८ मनःपर्यवज्ञानी ९ सम्यक्दृष्टि १० नो सज्ञा ११ अवेदी १२ सकषायी १३ लोभ कषायी १४ सयोगी १५ मनयोगी १६ वचनयोगी १७ काययोगी १८ साकार उपयोगी १९ अनाकार उपयोगी २० इन बीस बोलों के जीवों में चारों भांगों मिलते है यथाः

(१) बांधा, बांधे बांधसी, मिथ्यात्वादि, गुणठाणों अभव्य जीव, भूतकालमें बान्धा-बान्धे-बान्धसी.

(२) बांधा, बांधे न बांधसी क्षपक श्रेणी चढता हुआ नवमें गु० तक. बान्धे फीर मोक्ष जायगा-न बन्धसी.

(३) बांधा, न बांधे, बांधसी, उपशम श्रेणी दशमें, इग्यार में गु० तक. वर्तमानमें नहीं बान्धते है.

(४) बांधा, न बांधे, न बांधसी क्षपक श्रेणी दशमें गुण० तद्भव मोक्षगामी.

(२१) मिश्रदृष्टि दो भांगा में मीलता है १ २ ओ। यथा—

शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, ये चार अघाती कर्म हैं (पाप पुण्य मिश्रित) इसलिये शास्त्रकारों ने प्रथम समुच्चय पापकर्म की पृच्छा अलग की है उपरोक्त ४७ बोलोंमेंसे कौन २ से बोलके जीव इन चार भांगों में से कौन २ से भांगों से पाप कर्म को बांधे. इन में मोहनीय कर्मकी प्रबलता है इसलिये उसके बंध विच्छेद होने से शेष कर्मों के विद्यमान होते हुए भी उनके बंध की विवक्षा नहीं की क्योंकि इसवास्ते पन्नवणा सूत्रमें भी मोहनीय कर्म परही शास्त्रकारों ने ज्यादा जोर दिया है कारण कि मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है उस के क्षय होने से शेष तीन कर्मों का विशेष भी जोर नहीं चलता, उपरोक्त सैंतालीस बोलों में से समुच्चय जीव की पृच्छा करते हैं समुच्चयजीव १ शुक्ललेश्यी २ सलेशी ३ शुक्ल पक्षी ४ सज्ञानी ५ मतिज्ञानी ६ श्रुतज्ञानी ७ अवधिज्ञानी ८ मन पर्यवज्ञानी ९ सम्यग्दृष्टि १० नो संज्ञा ११ अवेदी १२ सकषायी १३ लोभ कषायी १४ सयोगी १५ मनयोगी १६ वचनयोगी १७ काययोगी १८ साकार उपयोगी १९ अनाकार उपयोगी २० इन बीस बोलों के जीवों में चारों भांगे मिलते हैं यथा

(१) बांधा बांधे बांधसी मिथ्यात्वादि, गुणस्थानों अभव्य जीव पुनरपेक्षया बांधा बांधे-बांधसी

(२) बांधा बांधे न बांधसी क्षपक श्रेणी चढता हुवा नवमें गु० नष्ट. बांधे और आगे जाकर न बांधसी

(३) बांधा न बांधे बांधसी उपशम श्रेणी दशवें इग्यारवे गु० नष्ट. वर्तमान नहीं बांधता है

(४) बांधा, न बांधे न बांधसी क्षपक श्रेणी दशवें गुण० तदुपरान्तवर्ती

(२१) मिश्रदृष्टि [illegible] १ २ यथा—

को भिन्न २ व्याख्या करते है जिसमें मोहनीय कर्म समुच्चय
वत् कोंवत् समझ लेना.

ज्ञानावरणीय कर्म को पूर्व कहे हुए वीस बोलोंमें से मान
कषायी और लोभ कषायी यह दो बोलों को छोडकर शेष अठारः
बोलोंके जीव पूर्वोक्त चारों भांगोंसे बांधे (पूर्वमें जो कुछ कह आये
है और आगे जो कुछ कहेंगे यह सब बातें गुणस्थानक से संबंध
रखती है. इसलिये पाठकों को हरेक बोल पर गुणस्थानक का
उपयोग रखना अति आवश्यक है. विना गुणस्थानक के उपयोगी
बातें समझ मे आना मुश्किल है ।

अलेशी, केवली और अयोगी, मे भांगा १ चौथा. बांधा, न
बांधे न बांधसी

मिश्रदृष्टि मे भांगा २ पहिला और दुसरा पूर्ववत्

अकषायी मे भांगा २ तीसरा और चौथा पूर्ववत्

शेष चौवीस बोलों (चालीस पापकर्म की व्याख्या में कहा
वह और सकषायी लोभ कषायी) मे भांगा २ पहिला और
दुसरा पूर्ववत्

यह समुच्चय जीव की अपेक्षा से कहा. इसी तरह मनुष्य
दंडक मे समझ लेना शेष तेवीस दंडक के जीवों में दो भांगो
(पहिला और दुसरा) जैसे ज्ञानावरणीय कर्म बांधे, एवम्
दर्शनावरणीय नाम कर्म गोत्रकर्म और अन्तराय कर्म का भी
बंध आश्रयी भांगा लगाना अवश्य चाहिये है

समुच्चय जीवों की अपेक्षा से वेदनीय कर्म को, समुच्चय
जीव, सलेशी, शुक्ललेशी शुक्लपक्षी सम्यग्दृष्टि, सज्ञानी केवल
ज्ञानी, नोसंज्ञा, अवेदी अकषायी साकार उपयोगी, और अना
कार उपयोगी इन ११ बारहा बोलों के जीवों मे तीन भांगा

भांगा दो पावे. पहिला और तीसरा. शेष ३१ बोलों में चारों भांगा पावे ॥ चार अनुत्तर विमानों के देवताओं में पूर्वोक्त २६ बोलोंमें भांगा चारों पावे ॥ सर्वार्थ सिद्ध विमानके देवताओं में पूर्वोक्त २६ बोलों मे भांगा ३ पावे. दूसरा, तीसरा, और चौथा.

पृथ्वीकाय, अप्पकाय, और वनस्पतिकाय के जीवों में पूर्वोक्त २७ बोलों मे से तेजोलेश्या, में भांगा एक पावे, तीसरा शेष २६ बोलों के जीव चारों भांगों से आयुष्य कर्म बांधे ॥ तेजस-काय और वायुकाय के जीवों के पूर्वोक्त २६ बोलों में भांगा २ पावे पहिला और तीसरा ॥ तीनों विकलेन्द्री जीवों के पूर्वोक्त ३१ बोलों में से सज्ञानी मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, और सम्यक्दृष्टि इन चार बोलों के जीवों में भांगा तीसरा पावे शेष २७ बोलों में भांगा २ पहिला और तीसरा

तीर्यंच पंचेन्द्री जीवों के पूर्वोक्त ३८ बोलों में से कृष्णपक्षी में भांगा २ पहिला और तीसरा मिश्रदृष्टि में दो भांगा तीसरा और चौथा. और सज्ञानी मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी तथा अवधिज्ञानी और सम्यक्दृष्टि में भांगा ३ पावे पहिला, तीसरा, और चौथा. शेष २८ बोलों में भांगा चारों पावे

मनुष्य के दंडक में पूर्वोक्त ४७ बोलों में से कृष्णपक्षी में भांगा दो पावे पहिला और तीसरा मिश्रदृष्टि अवेदी और अकषाइ में भांगा दो पावे तीसरा और चौथा अलेशी, केवली, और अज्ञानी में एक भांगा चौथा [illegible] सज्ञानी और सम्यक्दृष्टि में [illegible] पहिला तीसरा और चौथा शेष [illegible] बोलों में [illegible]

इस [illegible] [illegible]

चोवीस दंडकों में प्रथम समय उत्पन्न हुए जीवों के जो जो बोल कह आए है उन बोलों के जीव समुच्चय पापकर्म और ज्ञानावरणीय आदि सात कर्मो (आयुष्य छोड कर) को पूर्वोक्त 'बांधा, बांधे बांधसी ' इत्यादिक चार भांगा में से केवल दो भांगा से बांधे (बांधा बांधे बांधसी, बांधा, बांधे न बांधसी.)

आयुष्य कर्मको मनुष्य छोडकर शेष तेवीस दंडकों में पूर्वोक्त कहे हुवे बोलों में " बांधा न बांधे बांधसी " । का १ भांगा पावे, क्योंकि प्रथम समय उत्पन्न हुवा जीव आयुष्य कर्म बांधे नहीं, भूत कालमें बांधा था और भविष्यमें बांधेगा.

मनुष्य दंडक में पूर्वोक्त ३७ बोलों में से कृष्ण पक्षी में भांगा १ तीसरा शेष छत्तीस बोलों में भांगा २ पावे तीसरा और चोथा इति द्वितीयोद्देशकम्

शतक २६ उद्देशा ३ जो परम्परोत्पन्नगा.

उत्पत्ति के दूसरे समय से यावत् आयुष्य के शेष काल को "परम्पर उत्पन्नगा," कहते है इसी शतक के प्रथम उद्देशेमें ४७ बोलों में से जितने २ बोल प्रत्येक दंडक के कह आये हैं. उसी माफक परम्पर उत्पन्नगा नारकी व समुच्चय जीवादि दंडकों में भी कहना. तथा बांधों का भांगा चारों सर्व अधिकार प्रथम उद्देशे के माफक कहना बांधी के भांगों के साथ "परम्पर उत्पन्नगा" का सूत्र नारकादि सर्व दंडक के साथ लगा लेना इति तृतीयोद्देशकम्. श्री भगवती सूत्र श. २६ उ. ४ अनंतर ओगाढा.

जीव जीस गति में उत्पन्न हुवा है उस गति के आकाश प्रदेश अवगाहा (आश्रय किये) को एक ही समय हुवा है उसको अनंतर ओगाढा कहते है इसके बोल और बांधी के भांगों का सर्वाधिकार अनन्तर उत्पन्नगा द्वितीय उद्देशे के माफक कहना और अनन्तर उत्पन्नगा की जगह पर अनंतर ओगाढा का सूत्र

पक्षगा कहते हैं. इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशे वत् समझना. परन्तु पंरपर पक्षगा का सूत्र विशेप कहना इति नवमोद्देशकम्
श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० १० चरमोद्देशो.

जिस जीव का जिस गति में चरम समय शेष रहा हो उसको चरमोद्देशो कहते है इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशावत् परन्तु "चरमोद्देशो" का सूत्र विशेप कहना इति दशमोद्देशकम्
श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ११ अचरमोद्देशो.

अचरमोद्देशो प्रथम उद्देशे के माफक है. परन्तु ४७ बोलों में अलेशी, केवली, अयोगी ये तीन बोल कम करना. भांगा ४ में चौथो भांगो और देवता में सर्वार्थसिद्ध को बोल कम करना. शेष प्रथम उद्देशे के माफक कहना. इति श्रीभगवती सूत्र श० २६ समाप्तम्.

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नं. ५७.

॥ श्री भगवती सूत्र श० २७ ॥

शतक २६ उद्देशा १ में जो ४७ बोल कह आये है. उसपर जो "बांधा, बांधे, बांधसी इत्यादिक ४ भांगों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है उसी माफक यहां भी "कर्म किरिया, करे, करसी' इत्यादिक नीचे लिखे ४ भागों का अधिकार पूर्ववत् ११ उद्देशों येथो सादश ही समझ लेना.

(१) कर्म किरिया करे, करसी, (२) किरिया, करे, न करसी (३) किरिया, न करे, करसी (४) करिया, न करे न करसी.

थोकडा नं. ५६

(श्री भगवती सूत्र श० २६)

४७ बोल प्रत्येक दंडक पर शतक २६ उद्देशे पहिले में विव. रण करचूके है. उनबोलों के जीव (१) एक साथे कर्म भोगवणा मांडिया (सुरूकिया) और एक साथे पूरण किया (२) एक साथे भोगवणा मांडिया और विषमता से पूराकिया (३) विषम भोगवणा मांडिया और विषम पूराकिया (४) विषम भोगवणा मांडिया और साथे पूरा किया. यह चारो भांगे कहना क्योंकि जीव ४ प्रकार के है यथा—

(१) सम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ. (२) सम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ (३) विषम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ. (४) विषम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ. यह चार प्रकार के जीवोंमें कौन २ सा भांगा पावे सो दिखाते है.

(१) सम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा पहिला स० स० (२) सम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा दूसरा स० वि० (३) विषम आयुष्य और साथे उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा तीसरा. वि० स० (४) विषम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुआ जिसमें भांगा चौथा, वि० वि० । यह आयुष्य कर्म की अपेक्षा से चार भांगा होता है. इति प्रथमोद्देसा।

दूसरा उदेशा अणंतर उववन्नगा का है. जिसमें भांगा २ पहिला और दूसरा यहां प्रथम समय की अपेक्षा है इसी माफक चौथा, छठ्ठा, और आठमां उद्देशा भी समझ लेना. शेष १-३-५-७-९-१०-११ यह सात उद्देशों की व्याख्या सदृश है (चारो भांगा पावे) इति श० २९ शतक ११ उद्देसा समाप्तम्.

वादी आयुष्य मनुष्य का बांधे और नियमा भव्य होय. शेष तीन समो० आयुष्य चारोंगति का बांधे, और भव्याभव्य दोनों होय।

तेजो, पद्म, शुक्ल लेशी में समो० चार पावे जिसमें क्रियावादी आयुष्य मनुष्य वैमानिकको बांधे और नियमा भव्य होय. शेष तीन समो० नारकी वर्ज के तीनगति का आयुष्य बांधे और भव्याभव्य दोनों होय.

अलेशी, केवली, अयोगी, अवेदी अकषायी, इन पांच बोलों में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य अबंधक और नियमा भव्य होय.

शेष २२ बोलों में समोसरण चारों जिसमें क्रियावादी आयुष्य-मनुष्य और विमानिक का बन्धे और तीन समो० वाले जीव आयुष्य चारों गति का बांधे. क्रियावादी नियमा भव्य होय बाकी तीनो समोसरण में भव्य अभव्य दोनों होय.

नारकी के पूर्वोक्त ३५ बोलों में कृष्णपक्षी १ अज्ञानी ४ और मिथ्यादृष्टि १ में समोसरण ३ पूर्ववत्. आयुष्य मनुष्य तीर्यंच का बांधे और भव्य अभव्य दोनों होय—ज्ञान ४ और सम्यकदृष्टि में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य मनुष्य का बांधे और निश्चय भव्य होय, मिश्रदृष्टि समुच्चयवत् शेष तेवीस बोल में समोसरण चार और आयुष्य मनुष्य तीर्यच दोनोंका बांधे । क्रियावादी नियमा भव्य-बाकी तीनो समोसरण के भव्य अभव्य दोनों होय इसी माफक देवताओं में नवग्रैवेक तक पूर्वोक्त जो जो बोल कह आये है उन सब बोलो में समोसरण नारकीवत् लगा लेना.

पांच अनुत्तरविमान के बोल २६ में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य मनुष्य का बांधे और नियमा भव्य होय.

पृथ्वीकाय, अप्पकाय, और वनास्पतिकाय, में पूर्वोक्त २७ बोलों के जीव में दो समोसरण पावे अक्रियावादी, और अज्ञान-

छोडकर शेष तीन समोसरण आयुष्य चारों गति का बांधे और भव्य अभव्य दोनो होय. चार ज्ञान और सम्यक्‌दृष्टि में समोसरण, क्रियावादी आयुष्य वैमानिक देवता का बांधे और नियमा भव्य होय। मिश्रदृष्टिमें समोसरण दो विनयवादी, और अज्ञानवादी. आयुष्यका अबंधक और नियमा भव्य होय.। मनःपर्यव ज्ञान और नो संज्ञा में समोसरण एक क्रियावादी आयुष्य वैमानिक देवता का बांधे और नियमा भव्य होय.। कृष्णादि ३ लेश्या में समोसरण ४ पावे जिसमें क्रियावादी आयुष्य का अबंधक और नियमा भव्य होय। शेष तीनों समोसरण चारों गति का आयुष्य बांधे और भव्याभव्य दोनो होय तेजो आदि ३ लेश्या में समोसरण चारों पावे जिसमें क्रियावादी आयुष्य वैमानिक का बांधे और नियमा भव्य होय। शेष तीनों समोसरण नरक गति छोडकर तीनो गतिका आयुष्य बांधे और भव्याभव्य दोनों होय. अलेशी केवली, अज्ञानी, अवेदी, और अकषाई में समोसरण क्रियावादी का आयुष्य अबंधक और नियमा भव्य होय. शेष बाइस बोलो में समोसरण चारों पावे जिसमें क्रियावादी आयुष्य वैमानिकका बांधे और नियमा भव्य होय। शेष तीनों समोसरण आयुष्य चारों गति का बांधे और भव्याभव्य दोनों होय

इति सामन्य शतकका प्रथम उद्देशा समाप्त।

बंधी शतक २६ वा उद्देशा दूसरा अनंतर उववन्नगा का पूर्व कह आये है इसी माफक चौवीस दंडकों के ४७ बोल इस उद्देशा में भी कहना लेना और समोसरण का बोल प्रथम उद्देशावत कहना परन्तु सब बोलो में आयुष्य का अबंधक है क्योंकि यह उद्देशा उत्पन्न हुवे के प्रथम समय की अपेक्षा से कहा गया है और प्रथम समय उत्पन्न हुवे जीव आयुष्य का अबंधक होता है प्रथम बोला

दियत् तेजोलेश्या-रक्तवर्ण जैसे हींगलू, उगता सूर्य, तोतेकी चोंच, दीपककी शीखा, इत्यादियत् पद्मलेश्या-पीतवर्ण, जैसे हरताल, हलद, हलदका टुकडा सण वनास्पतिकावर्ण इत्यादियत् पीला शुक्ललेश्या-श्वेत वर्ण जैसे संख, अंकरत्न मचकुंद वनस्पति, मोती का हार, चांदी का हार, इत्यादियत्.

(३) रसद्वार-कृष्ण लेश्या का कटुक रस, जैसे कडवा तूंबा का रस, नींब का रस, रोहिणी वनास्पति का रस, इनसे अनंत-गुण कटु। नीललेश्या का-तीखा रस-जैसे सोंठका रस, पीपर का रस, कालीमिरच, हस्ती पीपर. इन सबके स्याद से अनंतगुणा तीखा रस। कापोतलेश्या का खट्टा रस-जैसे कचा आम्र, तुंबर वनास्पति, कचा कवीठ की खटाइ से अनंतगुणा खट्टा। तेजोलेश्या का रस-जैसे पकाहुवा आम्र, पकाहुवा कवीठ के स्याद से अनंतगुणा। पद्मलेश्या का रस-जैसे उत्तम वारुणी का स्याद और विविध प्रकार के आसव के अनंतगुणा। शुक्ल लेश्या का रस-जैसे खजूर का स्याद, द्राक्षका स्याद, खीर सक्कर, इन से अनंतगुणा.

(४) गंधद्वार—कृष्ण नील कापोत, इन तीन लेश्याओं की गंध जैसे मृतक गाय कुत्ता, सर्प से अनंतगुणी दुर्गंध और तेजो. पद्म. शुक्ल, इन तीन लेश्याओं की गंध जैसे केवडा प्रमुख सुगन्धी वस्तु को घिसने से सुगन्ध हो उस से अनंतगुणी।

(५) स्पर्शद्वार—कृष्ण, नील कपोत, इन तीन लेश्याओं का स्पर्श जैसे करोंत आरी गाय बैल की जिह्वा साक वृक्ष के पत्र में अनंत गुणा और तेजो, पद्म शुक्ल इन तीनों लेश्याओं का स्पर्श जैसे वूर नामा वनास्पति, मक्खन सरसों के पुष्प से अनंतगुणा.

(६) परिणामद्वार छे लेश्या का परिणाम आयुष्य के तीजे

योग अपने वशमें हो. सिद्धांत पढता हुआ तप करे. थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त, रौद्र, ध्यान न ध्यावे धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पंच समिति समिता त्रण गुप्तिए गुप्ता. सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों सहितको शुक्ल लेशी समझना।

(८) स्थान द्वार-छ हों लेश्याकास्थान असंख्यात है वह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा संख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम. अंतर मुहूर्त अधिक नारकी में जघन्य १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्ताधिक तिर्यंच पृथ्व्यादि ९ दंडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यात मे भाग।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक, नारकी मे जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असंख्यात में भाग अधिक, उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक तिर्यंच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त देवताओं मे जघन्य पल्योपमके असंख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट *स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यात में भाग.*

३ कापोतलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अंतरमुहूर्त. उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यात मे भाग अधिक, नारकी मे जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

थोकडा नम्बर ६३

(स्थिति बन्धका अल्पाबहुत्व)

१ सबसे स्तोक संयतिका स्थिति बन्ध
२ बादर पर्याप्ता एकेन्द्रियका जघन्य स्थिति बन्ध असं० गु०
३ सुक्ष्म पर्याप्ता एकेन्द्रियका जघन्य स्थिति बन्ध वि०
४ बादर एकेन्द्री अप० का जघ० स्थिति वि०
५ सुक्ष्म एकेन्द्री अप० का जघ० स्थिति० वि०
६ सुक्ष्म एकेन्द्री अप० (७) बादर एकेन्द्री अप० वि०
८ सुक्ष्म एकेन्द्री पर्या० वि०
९ बादर एकेन्द्री पर्याप्ताका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध अनुक्रमे वि०
१० बेरिन्द्री पर्याप्ता० जघन्य स्थिति सं०
११ बेरिन्द्री अप० जघन्य स्थिति० वि०
१२ बेरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
१३ बेरिन्द्री पर्या० उ० स्थिति० वि०
१४ तेरिन्द्री पर्या० ज० स्थि० सं० गु०
१५ तेरिन्द्री अप० ज० स्थि० वि०
१६ तेरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
१७ तेरिन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
१८ चौरिन्द्री पर्या० ज० स्थि० सं०
१९ चौरिन्द्री अप० ज० स्थि० वि०
२० चौरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
२१ चौरिन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
२२ असंज्ञी पंचेन्द्रि पर्या० ज० स्थि० सं० गु०
२३ असंज्ञी पंचेन्द्री अप० ज० स्थि० वि०